



THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.



सद्बोध रत्नाकर पांचवां खंड

जैन सिद्धान्त संग्रह

(१२१ पुस्तकों व पाठोंका संग्रह)

जिसको—

परिचित मूलचन्दजी मैनेजरने संग्रहकर

श्री कन्हैयालाल मूलचन्द,

मालिक—सद्बोध रत्नाकर कार्यालय, बड़ा बजार, सागर

(सी. पी.) के द्वारा प्रकाशित कराया ।



“जैनविज्ञय” प्रिन्टिंग प्रेस—मुरतमें मूलचंद किसनदास कापड़ियाने

मुद्रित किया ।



तृतीयावृत्ति] वीर सं० २४५१. [क्रम संख्या ६०००.

मूल्य रु० २।)

प्रस्तावना ।

सज्जनों !

जैनसिद्धान्तसंग्रहकी तीसरी आवृत्ति आज आपके सम्मुख प्रस्तुत है । पहली और दूसरी आवृत्तियों को कुछ प्रतियाँ इतने स्वल्पसमयमें विक गईं जिससे स्पष्ट विदित होता है कि जैन समाजमें ऐसे ग्रन्थकी बहुत आवश्यकता है । ऐसा होना ठीक ही है । जिस ग्रन्थ संग्रहमें जैन बालकोंके पठन योग्य पाठोंसे लेकर नित्य नियमके उपयोगी सभी विषयोंका समावेश होकर पंडितों तकके स्वाध्याय योग्य ग्रन्थोंका सम्मेलन हो उस ग्रन्थरत्नका इतना आदर होना स्वाभाविक ही है । स्वल्प मूल्यमें प्रायः सभी उपयोगी विषय एकत्र मिल सकें यह प्रायः सब जैनी भाइयोंकी सदैव इच्छा रहती है । समानमें इस ग्रन्थ की आज भी बड़ी आवश्यकता होनेसे यह तृतीयावृत्ति पाठकोंके सम्मुख प्रेषित करनी पड़ी है ।

द्वितीयावृत्तिकी नाई इस आवृत्तिमें भी छानई सफाई और कागजकी उत्तमता की ओर बहुत ध्यान रक्खा गया है । तथा बई नवीनर विषयोंका समावेश कर देनेके कारण ग्रन्थका आकार पहलेकी अपेक्षा कुछ बढ़ गया है तो भी मूल्य नहीं बढ़ाया गया है ।

पुस्तकके विषय नियंत्रणमें अबकी बार कुछ परिवर्तन किया गया है । विषयोंकी गिनतीकी ओर रक्ष्य न रख अबकी बहुतसे उपयोगी विषय बढ़ाकर संग्रहके पांच भाग बना दिये गये हैं । आशा है कि स्वाध्याय प्रेमी सज्जनगण इस संग्रहकी पहिलेकी नाई अपनावेंगे । इस आवृत्तिके संशोधनमें श्रीमान् मास्टर दीपच दर्जी दर्जी, पं० माणिक्यचन्दकी न्यायतीर्थ-सागरने अपना अमूल्य समय देकर जो सहायता की है उसके लिये हम अंतःकरणसे आभारी हैं ।

सागर,
ज्येष्ठ सुदी ५ (शुक्लपंचमी)
श्रीर सं० २४५१,
विक्रम सं० १९८२

जाति सेवक—

मूलचन्द विलास जैन ।

विषयसूची ।

प्रथम खण्ड ।

१ णमोकार, मंत्र	१
२ ,, का माहात्म्य	१
३ पंचपुरमेष्टीके नाम	१
४ मेरी भावना... ..	२
५ चौबीस ती० के नाम	४
६ ,, के चिन्ह	५
७ नारद चक्रवर्ती	१६
८ नव नारायण	११
९ नव प्रतिनारायण	११
१०-११ बलभद्र, नारद	१७
१२ ग्यारह रुद्र	१७
१३ चौबीस कामदेव	१७
१४ चौदह कुलकर	१८
१५ नारद प्र० पुरुषोक्ते नाम	१८
१६ सिद्धलोचोके नाम	१९
१७ विद्यमान २० तीर्थकर ,,	१९
१८ अतीत चौबीसी	२०
१९ अनागत ,,	२०
२० चौदह गुणस्थान	२०
२१ सोलहकारण भावना... ..	२१
२२ आवकको २१ उत्तरगुण	२१
२३ आवककी ५३ क्रिया	२१
२४ ग्यारह प्रतिमा स्वरूप	२३
२५ आवकके १७ नियम	२६
२६-२७ सप्त व्यसन, अमर्ष्य ,,	२७
२८ नित्य षट्कर्म... ..	२७
२९ दशालक्षण धर्म	२७

द्वितीय खण्ड ।

१ इष्ट छत्तीसी... ..	२८
२ दर्शनपाठ	३६
३ आलोचना पाठ	४६
४ पञ्चकल्याणक	५०
५ निर्वाणकांड	५९
६ दर्शन पञ्चीसी	६५
७-८ महावीराष्टक, छहदाळा ७१-४	७१-४
११ सामायिक पाठ	८७
१२ ,, संस्कृत	९२
१३ समाधिमरण भाषा	९५
१४ वैराग्य भावना	१०६
१५ फूलमाल पञ्चीसी	१०६
१६ प्रातः स्तुति	११२
१७ सायंकाल स्तुति	११३
१८ मत्तमस्तोत्र संस्कृत	११४
१९ ,, भाषा	११९
२०-२१ बागह भावना	१२४-५
२२ सुवा वत्तीसी	१२७
२३ एक्रीमात्र भाषा	१३०
२४ नामावली स्तोत्र	१३४
२५ छहदाळा (ब्रुजजन)	१३५
२६ निशि भोजन कथा	१४३
२७ चौबीस दंडक	१४८
२८ कुगुरु० भक्तिका फल	१५३
२९ छोटे कर्मोंका फल	१५३
३०-३१ मोह रसस्वरूप, लेख्य १६३	१६३
३२ द्वादशाशुपेक्षा... ..	१६४

३३ करुणाष्टक भाषा ...	१६७
३४ मंगलाष्टक ...	१६८
३५ शील गहात्म्य ...	१७०
३६ बार्देस परीसह ...	१७३
तीसरा खण्ड ।	
१-२ अभिषेक, विनयपाठ १७८-८२	
३ देवशास्त्र गुरुपूजा सं०	१८४
४ ,, भाषा ...	१९७
५ वीस तीर्थंकर पूजा	२०१
६ अकृतिम वै० अर्घ	२०५
७ चित्र पूजा ...	२०७
८ चित्र ,, भाषाष्टक ...	२१२
९ समुच्चय चौवीसी पूजा	२१४
१० सप्तशतपि पूजा ...	२१७
११ सोलहकारण पूजा ...	२२१
१२ दशदृक्षणधर्मपूजा ...	२२४
१३ पंचमेरु ,, ...	२३१
१४ रत्नत्रय ,, ...	२३४
१५ नन्दीश्वर ,, ...	२४१
१६ निर्वाण क्षेत्र ,, ...	२४५
१७ देव पूजा ...	२४८
१८ सरस्वती ,, ...	२५२
१९ गुरु ,, ...	२५५
२० मक्खी पार्थनाथ पूजा	२५८
२१ गिरिनारक्षेत्र पूजा ...	२६२
२२ सोनागिर ,, ...	२६७
२३ रवित्रय ,, ...	२७१
२४ पावापुर क्षेत्र ,, ...	२७४
२५ चम्पापुर ,, ,, ...	२७७
२६ महावीर पूजा ...	२७९

२७ अकृत्रिम वै० पूजा	२८४
२९ सम्मोक्षिस्वर विधान...	२८९

चतुर्थ खण्ड ।

१ शांति पाठ: ...	२०२
२ विसर्जन ,, ...	३०४
३ भाषा स्तुति पाठ ...	३०५
४ जिनसहस्रनाम स्तोत्र	३०७
५ मोक्षशास्त्रम् ...	३१६
६ बारहमासा मुनिरात्र	३२८
७ मुद्रभात स्तोत्रम् ...	३३२
८ दृष्टाष्टक ,, ...	३३३
९ अष्टाष्टक ,, ...	३३४
१०-११ सूतक, विनती संग्रह	३३५-३७
१२ समाधिशातक भाषा...	३५२

पांचवा खण्ड ।

१ एकीभावस्तोत्रम् ...	३६६
२ स्वयंभूस्तोत्रम् ...	३६९
३ बृहत्स्वयंभूस्तोत्रम् ...	३७१
४ द्रव्यसंग्रह ...	३८६
५ रत्नकरंभावकाचार	३९१
६ आलाप पद्धति: ...	४०६
७ बारह मावना ...	४१९
८ दश आरतिर्	४२२
९ संकटहरण विनती...	४२६
१० भोजनोक्ती प्रार्थनाएँ	४२९
११ नरकोके दोहे ...	४२९
१२ जन्मकल्याणककी पूजा	४३६
१३ लघु पंचपञ्चमेष्टी वि०	४४१
१४ अरहंत पूजा ...	४५३
१५ रवित्रय कथा ...	४५८

श्रीवीतरागाय नमः ॥

जैनासिद्धान्तसंग्रह

प्रथम खंड ।

(१) णमोकार मंत्र ।

गाथा ।

।मो अरहंताणं । णमो सिद्धाणं । णमो अरियारियाणं ।
।मो उव्वज्झायाणं, णमो लोए सर्व्वसाह्वणं ।

स णमोकार मंत्रमें पांच पद, पैंतीस अक्षर, अठारन मात्रा हैं ।

(२) णमोकार मंत्रका माहात्म्य ।

महामंत्रका जाप किये, नर सब सुख पावै ।
अतिशयोक्ति इसमें, रंचक भी नहीं दिखावै ॥
देखो ! शून्यविवेक सुमग ग्वाहा भी आखिर ।
हुआ सुदर्शन कामदेव, इसके प्रभावकर ॥

(३) पञ्च परमेष्ठियोंके नाम ।

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु ।
उँ ह्रीं अ सि आ उ सा । उँ नमः सिद्धेभ्यः ॥
नोट-अ सि आ उ नाम पञ्च परमेष्ठीका है ।

ॐ में पञ्चपरमेष्ठीके नाम गर्भित हैं । यथा-
 अर्हन्ता अशरीरा, आयरिया, तह उवज्झया, मुनिनो ।
 पडमक्खर निप्पणो ॐकारोय पंचपरमेष्ठी ॥
 ही में २४ तीर्थकरोंके नाम गर्भित हैं ।

(४) मेरी भावना ।

(बाबू जुगलकिशोरजी कृत)

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
 सब जीवोंको मोक्षमार्गका, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
 बुद्ध, वीर जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वामीन कहो ।
 भक्ति-भावसे प्रेरित हो यह, चित्त उसीमें लीन रहो ॥१॥
 विषयोंकी आशा नहीं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं ।
 निज-परके हित-साधनमें जो, निशादिन तत्पर रहते हैं ॥
 स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
 ऐसे ज्ञानी साधु जगतके, दुखसमूहको हर्ते हैं ॥ २ ॥
 रहे सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे ।
 उनही जैमी चर्यामें यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥
 नहीं सताऊँ किसी जीवको, झूठ कभी नहीं कहा करूँ ।
 परधन-वानता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया चरूँ ॥३॥
 अहंकारका भाव न रखूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ ।
 देख दूसरोंकी चढ़तीको, कभी न ईर्ष्या-भाव धरूँ ॥
 रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य-व्यवहार करूँ ।

बने जहांतक इस जीवनेमें, औरोंका उपाकार करूँ ॥ ४ ॥
 भैत्रीभाव जगतमें मेरा, सब जीवोंसे नित्य रहे ।
 दीन दुखी जीवोंपर मेरे, उरसे करुणास्रोत बहे ॥
 दुर्जन क्रूर कुमार्गरतों पर, सोम नहीं मुझको आवे ।
 साम्यभाव रखूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥ ५ ॥
 गुणीजनोंको देख हृदयमें, मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
 बने जहांतक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ॥
 होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे ।
 गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥ ६ ॥
 कोई बुरा कठो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
 लाखों वर्षोंतक जीऊं या मृत्यु आज ही आजावे ॥
 अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे ।
 तो भी न्यायमार्गसे मेरा कभी न पद ढिगने पावे ॥ ७ ॥
 होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे ।
 पर्वत-नदी-स्मशान-भयानक अश्वीसे नहीं भय खावे ॥
 रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन, दृढ़तर बन जावे ।
 इष्टवियोग अनिष्टयोगमें सहनशीलता दिखलावे ॥ ८ ॥
 सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न घबरावे ।
 वैर-पाप-अभिमान छोड़ जग नित्य नयें मंगल गवे ॥
 घरघर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हा जावें ।
 ज्ञान चरित उन्नतकर अपना मनुज-जन्मफलें सब पावें ॥ ९ ॥
 ईति-भीति व्यापे नहीं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे ।

धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजाका किया करे ॥
 रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्तिसे जिया करे ।
 परम अहिंसा-धर्म जगमें, फैले सर्वहित किया करे ॥१०॥
 फैले प्रेम परस्पर जगमें, मोह दूर पर रहा करे ।
 अमिय कटुक कठोर शब्द नहि कोई मुखसे कहा करे ॥
 बनकर सब 'युगवीर' हृदयसे देशोन्नातो रह करे ।
 वस्तुस्वरूप विचार खुशीसे, सब दुख संकट सहा करे ॥११॥

(५) चौबीस तीर्थकरोंके नाम ।

- | | |
|----------------------|------------------------|
| १ श्री ऋषभनाथ, | २ श्री अजितनाथ, |
| ३ श्री संभवनाथ, | ४ श्री अभिनन्दनाथ, |
| ५ श्री सुमतिनाथ, | ६ श्री पद्मप्रभ, |
| ७ श्री सुपार्श्वनाथ, | ८ श्री चन्द्रप्रभ, |
| ९ श्री पुष्पदन्त, | १० श्री शीतलनाथ, |
| ११ श्री त्रेयांसनाथ, | १२ श्री वासुपूज्य, |
| १३ श्री विमलनाथ, | १४ श्री अनन्तनाथ, |
| १५ श्री धर्मनाथ, | १६ श्रीशान्तिनाथ, |
| १७ श्री कुन्धुनाथ, | १८ श्री अरनाथ, |
| १९ श्री मल्लिनाथ, | २० श्री सुनिसुव्रतनाथ, |
| २१ श्री नमिनाथ, | २२ श्री नेमिनाथ, |
| २३ श्री पार्श्वनाथ, | २४ श्री वर्द्धमान, |

चौवीस तीर्थकरोंके चिह्न ॥

१-ऋषभदेवके बैलका चिह्न ।

पहला भव सर्वार्थसिद्धि, जन्मनगरी अयोध्या, पिता नामि-
राजा, माता मरुदेवी, गर्भतिथि आषाढ़ वदि २, जन्मतिथि चैत्र
वदि ९, जन्म नक्षत्र उत्तराषाढ, काय ऊंची ५०० धनुष, रंग
सुवर्ण समान पीला, आयु ८४ लाख पूर्व, दीक्षातिथि चैत्र वदि ९,
दीक्षावृक्ष बड़ (बड़के नीचे दीक्षा ली), केवलज्ञान तिथि
फाल्गुण वदि ११, गणधर ८४, निर्वाण तिथि माघ वदी १४,
निर्वाण आसन पद्मासन (बैठे हुए), निर्वाणस्थान कैलाश । अंतर-
इनसे ९० लाख कोटि सागर गए पीछे २२ ती० अजितनाथ भए ।

२-अजितनाथके हाथीका चिह्न ।

पहला भव वैजयन्त, जन्मनगरी अयोध्या, पिताका नाम जित-
शत्रु, माताका नाम विजयादेवी, गर्भतिथि ज्येष्ठ वदि अमावस्या,
जन्मतिथि माघ शुदी १०, जन्मनक्षत्र रोहिणी, काय ऊंची
४९० धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ७२ लाख पूर्व,
दीक्षा तिथि माघ शुदी १०, दीक्षा वृक्ष सप्तच्छद (सतौना),
केवलज्ञान तिथि पौष शुदी ४, गणधर ९०, निर्वाण तिथि चैत्र
शुदी ९, निर्वाण आसन खड़गासन (खड़े हुए), निर्वाण स्थान
सम्मेदशिखर । अन्तर-इनसे ६० लाखकोटि सागर गए पीछे
३२ तीर्थकर संभवनाथ भए ।

३-संभवनाथके घोड़ेका चिह्न ।

पहला भव त्रैवेयक, जन्मनगरी श्रावस्ती, पिताका नाम

जितारी, माताका नाम सेना, गर्भतिथि फाल्गुन सुदी ८, जन्म-
तिथि कार्तिक शुदि १९, जन्मनक्षत्र पूर्वाषाढ, काय ऊंची ४००
धनुष, रंग पीला सुवर्ण समान, आयु ६० लाख पूर्व, दीक्षातिथि
मार्गशिर शुदि १९, दीक्षावृक्ष शाल, केवलज्ञान तिथि कार्तिक
वदि ४, गणधर १०५, निर्वाणतिथि चैत्र शुदि ६, निर्वाण
आसन खड्गासन, निर्वाण स्थान सम्मेशिखर, अन्तर-इनसे १०
लाख कोटि सागर गए पीछे ४ थे अभिनन्दननाथ भए ।

४-अभिनन्दननाथके वन्दरका चिह्न ।

पहला भव वैजयंत, जन्मनगरी अयोध्या, पिताका नाम
संवर, माताका नाम सिद्धार्थ, गर्भतिथि वृन्दावन और वखता-
वरसिंहकृत पाठोंमें वैशाख शुदि ६, रामचन्द्रकृतमें वैशाख शुदि
८, जन्मतिथि माघ शुदि १२, जन्मनक्षत्र पुनर्वसु, काय ऊंची
३५० धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ५० लाख पूर्व, दीक्षा-
तिथि माघ शुदि १२, दीक्षावृक्ष सरल, केवलज्ञान तिथि पौष
शुदि १४, गणधर १०६, निर्वाणतिथि वैशाख शुदि ६, निर्वाण
आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदाशिखर, अन्तर-इनसे ९,
लाख कोटी सागर गए पीछे ५ वे सुमतिनाथ भए ।

५-सुमतिनाथके चक्रवेका चिह्न ।

पहला भव ऊर्द्ध प्रवेयक, जन्मनगरी अयोध्या, पिताका
नाम मेघप्रभ, माताका नाम सुमंगला, गर्भतिथि श्रावण शुदि २,
जन्मतिथि चैत्र शुदि ११, जन्मनक्षत्र मघा, काय ऊंची ३००
धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ४० लाख पूर्व, दीक्षातिथि
वृन्दावन और वखतावरकृत पाठोंमें चैत्र सुदी ११, रामचन्द्रकृतमें

वैशाख सुदी ९, दीक्षावृक्ष प्रियंगु (कंगुनी), केवलज्ञान तिथि चैत्र सुदी ११, निर्वाण आसन खड्गगासन, निर्वाण स्थान सम्मे-
शिखर, अन्तर-इनसे ९० हजार कोटि सागर गए पीछे पद्मप्रभ भए ।

६-पद्मप्रभके कमलका चिह्न ।

पहला भव वैजयंत, जन्मनगरी कौशांबी, पिताका नाम धारण, माताका नाम सुसोमा, गर्भतिथि माघ वदी ६, जन्म-
तिथि कार्तिक सुदी ११, जन्मनक्षत्र चित्रा, काय ऊंची २९०
धनुष, रंग आरक्त (सुरख) कमलसमान, आयु ३० लाख पूर्व,
दीक्षातिथि वृन्दावन और वखतावरकृत पीठोंमें कार्तिक सुदी
११, रामचंद्रकृतमें कार्तिक वदी ११, दीक्षावृक्ष प्रियंगु (कंगुनी),
केवलज्ञान तिथि चैत्र शुदि १५, गणधर १११, निर्वाणतिथि
फाल्गुण वदी ४, निर्वाण आसन खड्गगासन, निर्वाण स्थान
सम्मेदशिखर, अंतर-इनसे ९ हजार कोटि सागर गए पीछे
७ वें सुपार्श्वनाथ भए ।

७-सुपार्श्वनाथके माथियेका चिह्न ।

पहला भव मध्यत्रैवेयक, जन्मनगरी काशी, पिताका नाम
सुप्रतिष्ठ, माताका नाम पृथिवी, गर्भतिथि वृन्दावनकृत पाठोंमें
भादों सुदी १, रामचन्द्र और वखतावरकृत पाठोंमें भादों सुदी ६,
जन्मतिथि ज्येष्ठ सुदी १२, जन्मनक्षत्र विशाखा, काय ऊंची
२०० धनुष, रंग हरा प्रियंगुमञ्जरी समान, आयु १०
लाख पूर्व, दीक्षा तिथि ज्येष्ठ सुदी १२, दीक्षावृक्ष शिरीष
(सिरस), केवलज्ञान तिथि फाल्गुण वदी ६, गणधर ९९, निर्वाण
तिथि फाल्गुण वदी ७, निर्वाण आसन खड्गगासन, निर्वाण स्थान

सम्मोदशिखर, अंतर—इनसे ९ सौ कोटि सागर गए पीछे ८ वें चन्द्रप्रभ भए ।

८—चन्द्रप्रभके अध्रचन्द्रका चिह्न ।

पहला भव वैजयंत, जन्मनगरी चन्द्रपुरी, पिताका नाम महासेन, माताका नाम लक्ष्मणा, गर्भतिथि चैत्र वदी ९, जन्म-तिथि पौष वदी ११, जन्मनक्षत्र अनुराधा, काय ऊंची १९० धनुष, रंग श्वेत (सफेद), आयु १० लाख पूर्व, दीक्षा तिथि पौष वदी ११, दीक्षावृक्ष नाग, केवलज्ञान तिथि फाल्गुण वदी ७, गणधर ९९, निर्वाणतिथि वृन्दावन और रामचन्द्रकृत पार्लोमें फाल्गुण सुदी ७, वखतावरकृतमें माघ वदी ७, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मोदशिखर, अंतर—इनसे ९० कोटि सागर गए पीछे ९ वें पुष्पदन्त भए ।

९—पुष्पदन्तके नाकू (भगर) का चिह्न ।

पहला भव अपरान्त, जन्मनगरी काकन्दी, पिताका नाम सुग्रीव, माताका नाम रामा, गर्भतिथि फाल्गुन वदी ९, जन्मतिथि मार्गशिर सुदी १, जन्मनक्षत्र मूला, काय ऊंची १०० धनुष, रंग श्वेत (सफेद), आयु २ लाख पूर्व, दीक्षातिथि मार्गशिर सुदी १, दीक्षावृक्ष शाल, केवलज्ञान तिथि कार्तिक सुदी २, गणधर ८८, निर्वाणतिथि वृन्दावनकृतमें कार्तिक सुदी २, वखतावरकृतमें आश्विन सुदी ८, रामचंद्रकृतमें भादों सुदी ८, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मोदशिखर, अंतर—इनसे ९ कोटी सागर गए पीछे १० वें शीतलनाथ भए ।

१०-शीतलनाथके कल्पवृक्षका चिह्न ।

पहला भव १९ वां आरणस्वर्ग, जन्मनगरी मदिकापुरी, पिताका नाम हृदरथ, माताका नाम सुनन्दा, गर्भतिथि चैत्र वदी ८, जन्मतिथि माघ वदी, १२, जन्मनक्षत्र पूर्वाषाढ़, काय ऊंची ९० धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु १ लाख पूर्व, दीक्षातिथि माघ वदी १२, दीक्षावृक्ष प्लक्ष (पिलखन), केवलज्ञान तिथि पोष वदी १४, गणघर ८१, निर्वाणतिथि आसोज सुदी ८, निर्वाणआसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदाशिखर, अंतर-इनसे १०० सागर घाट कोटिसागर गए पीछे ११ वें श्रेयांसनाथ भए ।

११-श्रेयांसनाथके गंडेका चिह्न ।

पहला भव पुण्योत्तर विमान, जन्मनगरी सिंहपुरी, पिताका नाम विष्णु, माताका नाम विष्णुश्री, गर्भतिथि वृन्दावन और बल्लतावरकृत पाठोंमें ज्येष्ठ वदी ८, रामचन्द्रकृत पाठमें ज्येष्ठ सुदी १, जन्मतिथि फाल्गुण वदी ११, जन्म नक्षत्र श्रवण, काय ऊंची ८० धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ८४ लाख वर्ष, दीक्षातिथि फाल्गुण वदी ११, दीक्षावृक्ष तिंदुक, केवलज्ञान तिथि वृन्दावन व रामचन्द्रकृत पाठोंमें माघ वदी अमावास्या, बल्लतावरकृतमें माघ वदी १०, गणघर ७७, निर्वाणतिथि श्रावणसुदी १९, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाण स्थान सम्मेदाशिखर, अन्तर-इनसे ९४ सागर गए पीछे ११ वें वासुपूज्य भए ।

१२-वासुपूज्यके भैंसेका चिह्न ।

पहला भव ८वां कापिष्ठ स्वर्ग, जन्मनगरी चंपापुरी, पिताका नाम वासुपूज्य, माताका नाम विजया, गर्भतिथि आषाढ़ वदी १,

जन्मतिथि फाल्गुन वदी १४, जन्मनक्षत्र शतमिषा, काय ऊंची ७० धनुष, रंग आरक्त (सुरक्त) केमूके फूल समान, आयु ७२ लाख वर्ष, दीक्षातिथि फाल्गुन वदी १४, दीक्षावृक्ष पाटल, केवलज्ञान तिथि वृन्दावन-वत्सतावर कृत पाठोंमें भादों वदी २, रामचंद्रकृतमें माघ सुदी २, गणधर ६६, निर्वाण तिथि भादों सुदी १४, निर्वाण आसन सद्भासन, निर्वाणस्थान चम्पापुरीका वन, अन्तर इनसे ३० सागर गए पीछे १२वें दिनलनाथ मए। वासु-पूज्य बालब्रह्मचारी मए न विवाह किया, न राज्य किया—कुमार अवस्थामें ही दीक्षा ली ।

१३-विमलनाथके मूर्वरका चिह्न ।

पहला भव ९वां शुक्र स्वर्ग, जन्मनगरी कपिला, पिताका नाम कृतवर्मा, माताका नाम नुरन्या, गर्भतिथि ज्येष्ठ वदी १०, जन्मतिथि वृन्दावन व वत्सतावर पाठोंमें माघ सुदी ३, रामचंद्रकृतमें माघ सुदी १४, जन्मनक्षत्र उत्तराषाढ, काय ६० धनुष ऊंची, रंग पीला सुवर्ण समान, आयु ६० लाख वर्ष दीक्षातिथि माघ सुदी ४, दीक्षावृक्ष जेदू, केवलज्ञान तिथि माघ सुदी ६, गणधर ९९, निर्वाणतिथि आषाढ़ वदी ६, निर्वाण आसन सद्भासन, निर्वाणस्थान सम्पेदशिखर, अन्तर-इनके पीछे ९ सागर गए बाद १४ वें अनंतनाथ मए ।

१४-अनंतनाथके सेहीका चिह्न ।

पहला भव १२ वां सहस्रार स्वर्ग, जन्मनगरी अयोध्या, पिताका नाम सिंहसेन, माताका नाम सर्वयक्षा, गर्भतिथि कार्तिक वदी १, जन्मतिथि ज्येष्ठ वदी १२, जन्मनक्षत्र रेवती, काय

ऊंची १० धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु १० लाख वर्ष, दीक्षातिथि ज्येष्ठ वदी १२, दीक्षावृक्ष पीपल, केवलज्ञान तिथि चैत्र वदी अमावस्या, गणघर १०, निर्वाणतिथि वृन्दावन व बखतावरकृत पाठोंमें चैत्र वदी ४, रामचन्द्रकृतमें चैत्र कृष्ण अमावास्या, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अन्तर-इनसे ४ सागर गए पीछे १५वें धर्मनाथ भए ।

१५-धर्मनाथके चन्द्रदण्डका चिह्न ।

पहला भव पुष्पोत्तर विमान, जन्मनगरी रत्नपुरी, पिताका नाम भानु, माताका नाम सुव्रता, गर्भतिथि वृन्दावन-बखतावरकृत पाठोंमें वैशाख सुदी ८, रामचन्द्रकृत वैशाख सुदी १३, जन्मतिथि माघ सुदी १३, जन्मनक्षत्र पुष्य काय ऊंची ४५ धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु १० लाख वर्ष, दीक्षातिथि माघ सुदी १३, दीक्षावृक्ष दधिपर्ण, केवलज्ञान तिथि पौष सुदी १९, गणघर ४३, निर्वाणतिथि ज्येष्ठ सुदी ४, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अन्तर-इनसे पौष पत्थ घाट तीन सागर गए पीछे १६वें शांतिनाथ भए ।

१६-शांतिनाथके हिरणका चिह्न ।

पहला भव पुष्पोत्तर विमान, जन्मनगरी हस्तनागपुर, पिताका नाम विश्वसेन, माताका नाम ऐरा, गर्भतिथि भादों वदी ७, जन्मतिथि ज्येष्ठ वदी १४, जन्मनक्षत्र भरणी, काय ऊंची ४० धनुष, रंग पीला सुवर्ण समान, आयु १ लाख वर्ष, दीक्षातिथि ज्येष्ठ वदी १४, दीक्षावृक्ष नंदी, केवलज्ञान तिथि वृन्दावन बखतावरकृत पाठोंमें पौष सुदी १०, रामचन्द्रकृतमें पौष सुदी

११, गणघर १६, निर्वाणतिथि ज्येष्ठ वदी १४, निर्वाणआसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अन्तर-इनसे आध पल्य गए पीछे १७वें कुन्धुनाथ भए ।

शांतिनाथ तीर्थकर, चक्रवर्ती और कामदेव तीन पदवीके धारी भए ।

१७-कुन्धुनाथके वरुरेका चिह्न ।

पहला भव पुष्पोत्तरविमान, जन्मनगरी हस्तनागपुर, पिताका नाम सूर्य माताका नाम श्रीदेवी, गर्भतिथि श्रावण वदी १०, जन्मतिथि वैशाख सुदी १, जन्मनक्षत्र कृतिका, काय ऊंची ३५ धनुष रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ९९ हजार वर्ष, दीक्षा तिथि वैशाख सुदी १, दीक्षावृक्ष तिलक, केवलज्ञान तिथि चैत्र सुदी ३, गणघर ३९, निर्वाणतिथि वैशाख सुदी १, निर्वाण आसन खड्गासन निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अन्तर-इनसे छह हजार कोटि वर्षघाट पाव पल्य गए पीछे अरनाथ भए । कुन्धुनाथ तीर्थकर, चक्रवर्ती और कामदेव तीन पदवीके धारी भए ।

१८-अरनाथके मच्छीका चिह्न ।

पहला भव सर्वार्थसिद्धि, जन्मनगरी हस्तनागपुर, पिताका नाम सुदर्शन, माताका नाम मित्रा, गर्भतिथि फाल्गुण सुदी ३, जन्मतिथि मार्गशिर सुदी १४, जन्मनक्षत्र रोहिणी, काय ऊंची ३० धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ८४ हजार वर्ष, दीक्षा-तिथि वृन्दावन बखतावरकृत पाठोंमें मार्गशिर सुदी १४, रामचन्द्रकृतमें मार्गशिर सुदी १०, दीक्षावृक्ष आम्र, केवलज्ञान तिथि कार्तिक सुदी १२, गणघर ३०, निर्वाणतिथि वृन्दावन-

बस्तावरकृत पाठोंमें चैत्र सुदी ११, रामचन्द्रकृतमें चैत्र वदी अमावास्या, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदाशिखर, अंतर-इनसे पैसठलाख चौरासीहजार वर्ष घाट हजार कोटी वर्ष गए १९वें मल्लिनाथ भए ।

अरनाथ तीर्थंकर, चक्रवर्ती और कामदेव तीन पदवीके धारी भए ।

१९-मल्लिनाथके कलशका चिह्न ।

पहला भव विजय, जन्मनगरी मिथिलापुरी, पिताका नाम कुम्भ, माताका नाम रक्षता, गर्भतिथि चैत्र सुदी १, जन्मतिथि मार्गशिर सुदी ११, जन्मनक्षत्र अश्विनी, काय ऊंची २५ धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ५५ हजार वर्ष, दीक्षातिथि मार्गशिर सुदी ११, दीक्षावृक्ष अशोक, केवलज्ञान तिथि पौष वदी २, गणघर २८, निर्वाणतिथि फाल्गुण सुदी ५, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदाशिखर, अंतर-इनके पाछ १४ लाख वर्ष गए २०वें श्री मुनिसुव्रतनाथ भए ।

मल्लिनाथ बालब्रह्मचारी भए न विवाह किया, न राज्य किया-कुमार अवस्थामें ही दीक्षा लो ।

२०-मुनिसुव्रतनाथके कछवेका चिह्न ।

पहला भव अपराजित, जन्मनगरी कुशाग्रनगर अथवा राजग्रही, पिताका नाम सुमित्र, माताका नाम पद्मावती, गर्भ तिथि श्रावण वदी २, जन्मतिथि वैशाख वदी १०, जन्मनक्षत्र श्रवण, काय ऊंची १० धनुष, रंग श्याम अंजनगिर समान, आयु ३० हजार वर्ष, दीक्षातिथि वैशाख वदी १०, दीक्षावृक्ष

चंपक (चंबेली), केवलज्ञान तिथि वैशाख वदी ९, गणधर १८, निर्वाणतिथि फाल्गुन वदी १२, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अन्तर-इनके पीछे ६ लाख वर्ष गए २१वें नमिनाथ भए ।

२१-नमिनाथके लाल कमलका चिह्न ।

पहला भव १४ वां प्राणत स्वर्ग जन्मनगरी मिथिलापुरी, पिताका नाम विजय माताका नाम विप्रा, गर्भतिथि आसौज वदी २, जन्मतिथि आषाढ़ वदी १०, जन्मनक्षत्र अश्विनी, काय ऊंची २५ धनुष, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु १० हजार वर्ष, दीक्षातिथि आषाढ़ वदी १०, दीक्षावृक्ष बौलश्री केवलज्ञान तिथि मार्गशिर सुदी ११, गणधर १७, निर्वाणतिथि वैशाख वदी १४, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अन्तर-इनसे ५ लाख वर्ष गए पीछे २२वें नेमिनाथ भए ।

२२-नेमिनाथके शंखका चिह्न ।

पहला भव वंजयंत, जन्मनगरी सौरीपुर वा हारिका, पिताका नाम समुद्रविजय, माताका नाम शिवादेवी, गर्भ तिथि वृन्दावन-वस्तावरकृत पाठोंमें कार्तिक सुदी ६, रामचन्द्र कृतमें कार्तिक वदी ६, जन्मतिथि श्रावण सुदी ६, जन्मनक्षत्र चित्रा, काय ऊंची ० धनुष, रंग श्याम मोरके कठ समान, आयु १ हजार वर्ष, दीक्षातिथि श्रावण सुदी ६, दीक्षावृक्ष मेषशृंग, केवलज्ञानतिथि आसौज सुदी १, गणधर ११, निर्वाणतिथि वृन्दावन-वस्तावरकृत पाठोंमें आषाढ़ सुदी ८, रामचन्द्र कृतमें आषाढ़ सुदी ७, निर्वाण आसन, खड्गासन, निर्वाणस्थान

गिरनार पर्वत, अंतर-इनसे पौने चौरासी हजार वर्ष गण पीछे २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ भए ।

नेमिनाथ बालब्रह्मचारी भए, न विवाह किया न राज्य-कुमार अवस्थामें ही दीक्षा ली ।

२३-पार्श्वनाथके सर्पका चिह्न ।

पहला भव ११वां आनत स्वर्ग, जन्मनगरी काशीपुरी, पिताका नाम अश्वसेन, माताका नाम ताम्रा, गर्भतिथि वैशाख वदी २, जन्मतिथि पौष वदी ११, जन्म नक्षत्र विशाखा, काय ऊंची ९ हाथ, रंग हरा काचि-शालि समान, आयु सौ वर्ष दीक्षा तिथि पौष वदी ११, दीक्षावृक्ष प्रवल, केवलज्ञान तिथि चैत्र वदी ४, गणधर १०, निर्वाणतिथि श्रावण सुदी ७, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान सम्मेदशिखर, अंतर-इनसे अढ़ा-इसौ वर्ष गण पीछे २४वें वर्द्धमान भए ।

पार्श्वनाथ बालब्रह्मचारी भए, न विवाह किया न राज्य-कुमार अवस्थामें ही दीक्षा ली ।

२४-महावीरके शेर (सिंह) का चिह्न ।

पहला भव पुष्पोत्तर, जन्मनगरी कुण्डलपुर, पिताका नाम सिद्धार्थ, माताका नाम प्रियकारिणी (त्रिशला), गर्भतिथि आषाढ़ सुदी ९, जन्मतिथि चैत्र सुदी १३, जन्मनक्षत्र हस्त, काय ऊंची ७ हाथ, रंग सुवर्ण समान पीला, आयु ७२ वर्ष, दीक्षातिथि मार्गशिर वदी १०, दीक्षावृक्ष शाल, केवलज्ञान तिथि वैशाख सुदी १०, गणधर ११, निर्वाणतिथि कार्तिक वदी अमावास्या, निर्वाण आसन खड्गासन, निर्वाणस्थान पावापुर ।

यह वालब्रह्मचारी भए, न विवाह किया न राज्य किया, कुमार अवस्थामें ही दीक्षा ली । जब ये मोक्ष गए चौथे कालके ३ वर्ष साढ़े आठ महिना बाकी रहे थे ।

(६) चारह चक्रवर्ती ।

१ भरतचक्री, २ सगरचक्री, ३ मधवाचक्री, ४ सनत्कुमारचक्री, ५ शान्तिनाथचक्री (तीर्थंकर), ६ कुन्धुनाथचक्री (तीर्थंकर), ७ अरनाथचक्री (तीर्थंकर), ८ समभूमचक्री, ९ पद्मचक्री वा महापद्म, १० हरिषेणचक्री, ११ जयचक्री, १२ ब्रह्मदत्तचक्री ।

(७) नव नारायण ।

१ त्रिपृष्ठ, २ द्विपृष्ठ, ३ स्वयंभू, ४ पुरुषोत्तम, ५ पुरुषसिंह, ६ पुण्डरीक, ७ दत्त, ८ लक्ष्मण, ९ कृष्ण ।

(८) नव प्रतिनारायण ।

१ अश्वघ्रीव, २ तारक, ३ भेरक, ४ मधु (मधुकैटभ) ५ निशुंभ, ६ बली, ७ प्रल्हाद, ८ रावण, ९ जरासंध ।

(९) बलभद्र ।

१ अचल, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ, ५ सुद-

शेन, ६ आनंद, ७ नंदन (नंद), ८ पद्म (रामचन्द्र),
९ राम (बलभद्र) ।

नोट-१४ तीर्थकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ९ बलभद्र यह मिलकर ६३ शलाकाके पुरुष कहलाते हैं ।

(१०) नव नारद ।

१ भीम, २ महाभीम, ३ रुद्र, ४ महारुद्र, ५ काल,
६ महाकाल, ७ दुर्मुख, ८ नरकमुख, ९ अधोमुख ।

(११) ग्यारह रुद्र ।

१ भीमबली, २ जितशत्रु, ३ रुद्र, ४ विश्वानल,
५ सुप्रतिष्ठ, ६ अचल, ७ पुण्डरीक, ८ अजितधर,
९ जितनाभ, १० पाठ, ११ सात्यकी ।

(१२) चौबीस कामदेव ।

१ बाहुबली, २ अमिततेज, ३ श्रीधर, ४ दशभद्र,
५ प्रसेनजित्, ६ चंद्रवर्ण, ७ अग्निमुक्ति, सनत्कुमार
(चक्रवर्ती), ९ वत्सराज, १० कनकप्रसु,
११ सेधवर्ण, १२ शांतिनाथ (तीर्थकर), १३ कुंथुनाथ,
(तीर्थकर), १४ अरनाथ (तीर्थकर), १५ विजयराज,
१६ श्रीचंद्र, १७ राजानल, १८ हनुमान्, १९ धलराजा,
२० वसुदेव, २१ प्रद्युम्न, २२ नागकुमार, २३ श्रीपाल,
२४ जंबुस्वामी ।

(१३) चौदह कुलकर ।

१ प्रतिश्रुति, २ सन्मति, ३ क्षेमंकर, ४ क्षेमंधर, ५ सीमंकर, ६ सीमंधर, ७ विमलवाहन, ८ चक्षुमान, ९ यशस्वी, १० अभिचंद्र, ११ चंद्राभ, १२ मरुदेव, १३ प्रसेनजित्, १४ नाभिराजा ।

नोट-५८ तो यह और ६१ शलाका पुरुष इनमें चौबीस तीर्थंकरोंके ४८ माता पिता मिलाकर यह सर्व १६९ पुण्यपुरुष कहलाते हैं अर्थात् जितने पुण्यवान् पुरुष हुए हैं उनमें यह मुख्य गिने जाते हैं ।

(१४) बारह प्रसिद्ध पुरुषोंके नाम ।

१ नाभि, कुलकरोंमें. २ श्रेयांस, दानमें. ३ बाहुबली, बलमें. ४ भरत, चक्रा. ५ रामचन्द्र, बलभद्रोंमें. ६ हनुमान्, कामदेवोंमें. ७ सीता, सतियोंमें. ८ रावण, मानियोंमें. ९ कृष्ण नारायणोंमें. १० महादेव, रुद्रोंमें. ११ भीम, योद्धावोंमें. १२ पार्श्वनाथ, तपसर्ग सहनेमें प्रसिद्ध देव ।

तात्पर्य-कुलकरोंमें नाभिराजा, दान देनेमें श्रेयांस राजा, तप करनेमें बाहुबली एक साल तक कायोत्सर्ग खड़े रहे, भावकी शुद्धतामें भरत चक्रवर्तीको दीक्षा लेते ही केवलज्ञान हुवा, बलदेवोंमें रामचन्द्र, कामदेवोंमें हनुमान्, सतियोंमें सीता मानियोंमें रावण, नारायणोंमें कृष्ण, रुद्रोंमें महादेव, बलवानोंमें भीम, तीर्थंकरोंमें पार्श्वनाथ, यह पुरुष जगत्में बहुत प्रसिद्ध हुए हैं ॥

(१५) सिद्धक्षेत्रोंके नाम ॥

१ मांगीतुंगी, २ मुक्तागिरि (मेढगिरी), ३ सिद्धवरकूट,
४ पावागिरि चेलनानदी के पास, ५ शत्रुजय, ६ बड़वानी, ७ सोना-
गिरि, ८ नैनागिरी (नैनानंद), ९ द्रोणागिरि, १० तारंगा,
११ कुंथुगिरि, १२ गजपथ, १३ राजग्रही, १४ गुणावा, १५
पटना, १६ कोटिशिला, १७ चौरासी ।

(१६) महाविदेहक्षेत्रके २० विद्यमान तीर्थकर ।

१ सीमन्धर, २ युगमंधर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ सुजात,
६ स्वयंप्रभु, ७ वृषमानन, ८ अनन्तवीर्य, ९ सुरप्रभु, १० विशालकीर्ति
११ बज्रधर, १२ चंद्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ मुजंगम,
१५ ईश्वर, १६ नेमप्रभु (नेमि) १७ वीरसेन, १८ महामद्र,
१९ देवयश, २० अजितवीर्य ।

(१७) अतीत (पिछली) चौबीसी ।

१ श्रीनिर्वाण, २ सागर, ३ महासाधु, ४ विमलप्रभु,
५ श्रीधर, ६ सुदत्त, ७ अमलप्रभु ८ उद्धर, ९ अंगिर, १० सन्मति,
११ सिधुनाथ, १२ कुसुमांजलि, १३ शिवगण, १४ उत्साह,
१५ ज्ञानेश्वर, १६ परमेश्वर, १७ विमलेश्वर, १८ यशोधर, १९
कृष्णमति, २० ज्ञानमति, २१ शुद्धमति, २२ श्रीमद्र, २३ अति-
क्रांत, २४ शांति ।

(१८) अनागत (आइन्दा) चौवीसी ।

१ श्रीमहापद्म, २ सुरदेव, ३ सुपाश्वर्य, ४ स्वयंप्रभु, ५ सर्वात्म्य, ६ श्रीदेव, ७ कुलपुत्रदेव, ८ उदंकदेव, ९ प्रोष्ठिलदेव, १० जयकीर्ति, ११ मुनिसुव्रत, १२ अरह (‘अमम’) १३ निष्पाप, १४ निःकषाय, १५ विपुल, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्त, १८ समाधिगुप्त, १९ स्वयंभू, २० अनिवृत्त, २१ जयनाथ, २२ श्रीविमल, २३ देवपाल, २४ अनन्तवीर्य ।

(१९) चौदह गुणस्थान ।

१ मिथ्यात्व, २ साप्तादन, ३ मिश्र, ४ अविरत सम्यत्त्व, ५ देशव्रत, ६ प्रमत्त, ७ अप्रमत्त, ८ अपूर्वकरण, ९ अनिवृत्तिकरण, १० सूक्ष्मसांपराय, ११ उपशांतकषाय वा उपशांतमोह, १२ क्षीणकषाय वा क्षीणमोह, १३ सयोगकेवली, १४ अयोगकेवली ।

(२०) सोलहकारण भावना ।

१ दर्शनविशुद्धि, २ विनयसंपन्नता, ३ शीलव्रतेष्वनतिचार, ४ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, ५ संवेग, ६ शक्तितस्त्याग, ७ शक्तितस्तप, ८ साधुसमाधि, ९ वैय्यावृत्त्य, १० अर्हद्वक्ति, ११ आचार्यभक्ति, १२ बहुश्रुतभक्ति, १३ प्रवचनभक्ति, १४ आवश्यकपरिहाणि, १५ मार्गप्रभावना, १६ प्रवचनवात्सल्य ।

(२१) श्रावकोंके २१ उत्तरगुण ।

१ लज्जावंत, २ दयावंत, ३ प्रसन्नता, ४ प्रतीतिवन्त, ५ परदोषाच्छादन, ६ परोपकारी, ७ सौम्यदृष्टि, ८ गुणग्राही, ९ १० मिष्टवादी, ११ दीर्घविचारी, १२ दानवंत, १३ शीलवंत, १४ कृतज्ञ, १५ तत्त्वज्ञ, १६ धर्मज्ञ, १७ मिथ्यात्व रहित, १८ संतोषवंत, १९ स्याद्वादभाषी, २० अमक्ष्यत्यागी, २१ षट्कर्मप्रवीण ।

(२२) श्रावककी ५३ क्रिया ।

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १ समताभाव, ११ प्रतिमा, ४ दान, ३ रत्नत्रय, १ जलगालन क्रिया, १ रात्रि-भोजनत्याग (दिनमें ही भोजन शोधकर खाना अर्थात् छानबीन कर देखभालकर खाना ।)

श्रावकोंके ८ मूलगुण—१ उदंबर । ३ मकार ।

१२ व्रत—१ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत ।

१ अणुव्रत—१ अहिंसा अणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ परस्त्री-त्याग अणुव्रत, ४ (अचौर्य) चोरी त्याग अणुव्रत, ५ परिग्रहप्रमाण अणुव्रत ।

३ गुणव्रत—१ दिग्व्रत, २ देशव्रत, ३ अनर्थदंडत्याग ।

४ शिक्षाव्रत=१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अतिथिसंविभाग, ४ भोगोपभोगपरिमाण ।

१२ तप—

आचार्यके ३६ गुणोंमें लिखे हैं । इनके भी वही नाम ।

ज्यादे इतना है कि मुनियोंके महाव्रत होते हैं, श्रावकोंके अणुव्रत अर्थात् शक्ति अनुसार ।

११ प्रतिमा-१ दर्शनप्रतिमा, २ व्रत, ३ सामायिक, ४ प्रोषधोपवास, ५ सच्चित्त्याग, ६ रात्रिभुक्ति अथवा दिवा मैथुन त्याग, ७ ब्रह्मचर्य, ८ आरम्भ त्याग, ९ परिग्रहत्याग, १० अनुमति त्याग, ११ उद्दिष्ट त्याग ।

चार दान-आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान, अमयदान ।

यह ४ दान श्रावकों करने योग्य हैं ।

३ रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र ।

यह तीन रत्न श्रावकोंके धारने योग्य हैं । इनका खुलासा (अर्थ) जैन बाल गुटकेके दूसरे भागमें सम्यक्के वर्णनमें लिखा है । इनका नाम रत्न इस कारणसे है कि जैसे सुवर्णादिक सर्व धनमें रत्न उत्तम अर्थात् बहुमूल्य होता है इसी प्रकार कुल नियम, व्रत, तपमें यह तीन सर्वमें उत्तम हैं । जैसे कि बिना अंक बिन्दियां किसी कामकी नहीं इसी प्रकार वगैर इन तीनोंके सारे व्रत नियम कुछ भी फलदायक नहीं हैं । यह तीनों मानिन्द शुरूके अंकके हैं इसलिये इन्हें तीनोंको रत्न माना है ।

दातारके २१ गुण-९ नवधाभक्ति, ५ गुण, ५ आभूषण ।

यह ११ गुण दातारके हैं अर्थात् पात्रको दान देनेवाले दातामें यह ११ गुण होना चाहिये ।

दातारकी नवधा भक्ति-पात्रको देखकर बुलाना, उच्चासन पर बैठाना, चरण धोना, चरणोदक मस्तक पर चढ़ाना,

पूजा करना, मन शुद्ध रखना, वचन त्रिनयनरूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना, शुद्ध आहार देना ।

इसे नवधा भक्ति कहते हैं अर्थात् दातारको यह नवप्रकारकी भक्तिपूर्वक पात्रदान करना चाहिये ।

दातारके सात गुण—१. श्रद्धावान् होना, २ शक्तिवान् होना, ३ अलोभी होना, ४ दयावान् होना, ५ भक्तिवान् होना, ६ क्षमावान् होना, ७ विवेकवान् होना ।

दातारमें यह सात गुण होते हैं अर्थात् जिसमें यह सात गुण हों वह सच्चा दातार है ।

दातारके पांच भूषण—१ आनन्दपूर्वक देना, २ आदरपूर्वक देना, ३ प्रिय वचन कहकर देना, ४ निर्मल भाव रखना, ५ दान दकर जन्म सुफल मानना ।

दातारके पांच दूषण—विलम्बसे देना, विमुख होकर देना, दुर्वचन कहकर देना, निरादर करके देना, देकर पछताना ।

ये दाताके पांच दूषण हैं अर्थात् दातारमें यह पांच बात नहीं होनी चाहिये ।

[२३] ग्यारह प्रतिमाओंका सामान्य स्वरूप ॥

दोहा ।

प्रणम पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार; श्रावकप्रतिमा एकदश, कहुं भविजन हितकार ॥१॥ सर्वैयां ३१ ॥ श्रद्धा कर त्रै पालें, सामाधिक दोष टालें, पोसा माँडें, सचित्तकों ल्यौगें

लों घटायकें । रात्रिमुक्त परिहरै ब्रह्मचर्य नितै घेरै, आरम्भको त्याग करै मन वच कायकें । परिग्रह काज टार, अघ अनुमति छारै स्वनिमित्त कृतै टारै आतम लोलायकें । सब एकादश येह प्रतिमा जु शर्म गेह, धारै देश व्रती ह्वै उर वढायकें ।

दर्शन प्रतिमा स्वरूप-अष्ट मूलगुण संग्रह करै, व्यसन अमक्ष्य सबै परिहरै । युत अष्टांग शुद्ध सम्यक्त, धरहि प्रतिज्ञा दर्शन रक्त ॥ १ ॥

व्रत प्रतिमा स्वरूप-अणुव्रतपन अनिचार विहीन, धरहि जो पुन गुणव्रत तीन, चौ शिक्षाव्रत संजुत सोय; व्रत प्रतिमा घर श्रावक होय ॥ २ ॥

सामायिक प्रतिमा स्वरूप-(गीतका छंद) सब जीवमें समभाव धर शुभ भावना संयममहीं, दुरध्यान आरत रौद्र तनकर त्रिविध काल प्रमाणहीं । परमेष्ठिन जिन वचन जिन वृष बिंब जिन जिग्रनह तनी, वंदन त्रिकाल करहि सुजानहु भव्य सामायिक धनी ॥ ३ ॥

प्रोषध प्रतिमा स्वरूप-पद्धरी छंद वर मध्यम जघन त्रिविध धरेय, प्रोषध विधि युत निजबल प्रमेय; प्रति मास, चार पर्वी मंझार, जानहु सो प्रोषध नियम धार ॥ ४ ॥

सचित्तत्याग प्रतिमा स्वरूप-(चौपाई) जो परिहरै सचित्त सब चीज, पत्र प्रवाल कंदं फलबीज । अरु अपासुक जल भी सोय, सचित्त त्याग प्रतिमा घर होय ॥ ५ ॥

रात्रिमुक्तत्याग प्रतिमा स्वरूप-(अडिछ छंद) मन

वच तन कृत कारित अनुमौदै नही, नवविध मैथुन दिवस मांदि
जो वर्जही । अरु चतुर्विध आहार निशामाहीं तजै, रात्रिभुक्ति
परित्याग प्रतिमा सो सजै ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्य प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई) पूर्व उक्त मैथुन नव
भेद, सर्व प्रकार तजै निरखेद, नारि कथादिक भी परिहरे, ब्रह्म-
चर्य प्रतिमा सो धरे ॥ ७ ॥

आरंभ त्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई) जो कछु
अरूप बहुत अघ काज, ग्रह संबंधी सो सब त्याज । निरारम्भ है
वृषरत रहै, सो जिय अष्टम प्रतिमा वहै ॥ ८ ॥

परिग्रहत्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई) बख मात्र
रख परिग्रह अन्य, त्याग करै जो व्रतसंपन्न । तामें पुन मूर्छा पर-
है, नवमी प्रतिमा सो भवि धरै ॥ ९ ॥

अनुमतित्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई) जो प्रमाण
अघमय उपदेश, देय नहीं परकोलवलेश । अरु तमु अनुमोदन भी
तजै, सोही दशमी प्रतिमा सजै ॥ १० ॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई) ग्यारम थान
भेद हैं दोय, इक छुलक इक ऐक सोय । खंडवस्त्र घर प्रथम
सुजान, युतकोपीन हि दुंतिय पिछान ॥ ११ ॥

ए गृह त्याग मुनिन ढिंंग रहैं, वा मठ, मंदिरमें निवसह ।
उत्तर उदंड उचित आहार, करहि शुद्ध अन्नायन बार ॥ दोहा ॥
इम सब प्रतिमा एकदश, दौल देशव्रत यान । ग्रह अनुक्रम मूळ सह
पालें भवि सुखदान

[२४] श्रावकके १७ नियम ।

१ भोजन, संचित वस्तु, २ गृह, ४ संग्राम, ५ दिशा-
गमन, ६ औषधिविलेपन, ७ तांबूल, ८ पुष्पसुगंध, ९ नाच,
१० गीतश्रवण, ११ स्नान, १२ ब्रह्मचर्य, १३ आभूषण, १४
वस्त्र, १५ शय्या, १६ औषध खाना, १७ घोड़ा बैलादिककी सवारी ।

नोट—इनमेंसे जिस जिसकी जरूरत हो उसका प्रमाण
रखकर शेषका प्रतिदिन त्याग किया करें ।

[२५] सात व्यसनका त्याग ।

१ जुवा, २ मांस, ३ मदिरा, ४ गणिका (रंडी), ५
शिकार, ६ चोरी, ७ परस्त्री ।

[२६] बावीस अभक्ष्यका त्याग ॥

पांच उदम्बर—

१ उदम्बर (गूलर), २ कटुम्बर, ३ बड़फल, ४ पीपलफल,
५ पाकरफल (पिलखन फल) ।

तीन मकार ।

१ मांस, २ मधु, ३ मदिरा ।

नोट—इन तीनोंको तीन मकार इस कारणसे कहते हैं कि
इन तीनों नामोंके शुरूमें 'म' है ।

बाकी चौदह ये हैं ।

१ ओला, २ विदल, ३ रात्रिभोजन, ४ बहुबीजा,

५ वैंगन, ६ अचार, ७ विना चीन्हे फल (अनजान), ८ कन्दमूल,
९ माटी, १० विष, ११ तुच्छफल, १२ तुषार (बरफ), १३
चलितरस, १४ माखन ।

नोट—५ उदम्बर, ३ मकार, १४ दूसरे ये बाईस अभक्ष्य हैं ।

[२७] श्रावकके नित्य षट्कर्म ।

षट् नाम छका है । १ देवपूजा, २ गुरुसेवा, ३ स्वाध्याय,
४ संयम, ५ तप, ६ दान । यह छह कर्म श्रावकके नित्य
करनेके हैं ।

[२८] दशलक्षण धर्म ।

१ उत्तम क्षमा, २ उत्तम मार्दव, ३ उत्तम आज्ञा, ४ उत्तम
सत्य, ५ उत्तम शौच, ६ उत्तम संयम, ७ उत्तम तप, ८ उत्तम
त्याग, ९ उत्तम आर्किचन्य, १० उत्तम ब्रह्मचर्य



द्वितीय खंड ।

(१) इष्टछत्तीसी अर्थात्
पंचपरमेष्ठीके १४३ मूलगुण ।

सोरठा ।

प्रणमं श्री अर्हंत, दयाकथित जिनधर्मको ।
गुरु निरग्रंथ महंत, अवर न मानूं सर्वथा ॥ १ ॥
बिन गुणकी पहिचान, जैन वस्तु समानता ।
ताते परम बखान, परमेष्ठी गुणको कहूं ॥ २ ॥
रागद्वेषयुत देव, मानै हिंसाधर्म पुनि ।
समग्रजनकी सेव, सो मिथ्याती जग अमै ॥ ३ ॥

अथ अरहंतके ४६ मूलगुण ।

दोहा ।

चौतीसों अतिशय साहित, प्रातिहार्य पुनि आठ ।
अनंत चतुष्टय गुणसाहित, ये छियालीसों पाठ ॥ ४ ॥
अथ—१४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, ४ अनंतचतुष्टय ये
अरहंतके ४६ मूलगुण होते हैं । अब इनका भिन्न १ वर्णन करते हैं—

जन्मके १० अतिशय ।

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पसेव निहार ।
प्रियहितवचन अतुल्य बल, रुधिर दत्त आकार ॥ ५ ॥

लच्छन सटसरु आठ तन, समचतुष्कसंठान ।

वज्रवृषभनाराच जुत, ये जनमत दश जान ॥ ६ ॥

अर्थ-१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३ पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हितमिताप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्य बल, ७ दुग्धवत् श्वेत रुधिर, ८ शरीरमें एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्त्रसंस्थान, १० वज्रवृषभनाराचसंहनन । ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही उत्पन्न होते हैं ।

केवलज्ञानके दश अतिशय ।

योजन शत इकमें सुभिख, गगनगमन मुख चार ।

नहिं अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार ॥ ७ ॥

सब विद्या ईश्वरपनों, नाहिं बड़ें नख केश ।

अनिमिष दृग छाया रहित, दश केवलके वेश ॥ ८ ॥

अर्थ-१ एकसौ योजनमें सुभिक्षता, अर्थात् जिस स्थानमें केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ कोशमें सुकाल होता है, २ आकाशमें गमन, ३ चार मुखोंका दीखना, ४ अदयाका अभाव, ५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना, ९ नेत्रोंकी पलकें नहीं झपकना, १० छाया रहित । ये १० अतिशय केवलज्ञान उत्पन्न होनेसे प्रगट होते हैं ॥ ८ ॥

देवकृत १४ अतिशय ।

देवरचित हैं चार दश, अर्द्धमागधी भाष ।

आपसमाहीं मित्रता, निर्मल दिश आकाश ॥ ९ ॥

होत फूल फल ऋतु सबै, पृथिवी कांच समान ।

चरणकमलतल कमल हैं, नभतैं जय जय वान ॥ १० ॥

मंद सुगंध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि ।

भूमिविषै कंटक नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि ॥ ११ ॥

धर्मचक्र आगे चले, पुनि वसु मंगल सार ।

अतिशय श्रीअरहंतकै, ये चौतीस प्रकार ॥ १२ ॥

अर्थ—१ भगवान्की अर्द्धमागधी भाषाका होना, २ समस्त जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना, ५ सब ऋतुके फल पुष्प धान्यादिकका एक ही समय फलना, ६ एक योजनतककी पृथिवीका दर्पणवत् निर्मल होना, ७ चलते समय भगवान्के चरणकमलके तले सुवर्ण-कमलका होना, ८ आकाशमें जयजय ध्वनिका होना, ९ मंद-सुगंधित पवनका चलना, १० सुगंधमय जलकी वृष्टि होना, ११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टकरहित होना, १२ समस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवान्के आगे धर्मचक्रका चलना, १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घंटादि अष्ट मंगल द्रव्योंका साथ रहना । इसप्रकार सब मिलाकर १४ अतिशय अरहंत भगवान्के होतैं हैं ॥ १२ ॥

अष्ट प्रातिहार्य ।

तत्सर्वभूतके निकटमें, सिंहासन छविदार ।

तीन छत्र सिरपर लभै, भामंडल पिछवार । १३॥

दिव्यध्वनि मुखतैं खिरै, पुष्पवृष्टि सुर होय ।

दाहैं चौसठ चमर सुरै, बाँजें दुंदुभि जोय ॥ १४॥

अर्थ-१ अशोकवृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भगवानके सिरपर तीन छत्रका फिरना, ४ भगवानके पीछे भामंडलका होना, ५ भगवानके मुखसे दिव्यध्वनिका होना, ६ देवोंके द्वारा पुष्पवृष्टिका होना, ७ यक्षदेवोंद्वारा चासठ चबूतोंका डरना, दुंदुभि बाजोंका बजना, य आठ प्रातिहार्य हैं ।

अनन्तचतुष्टय ।

ज्ञान अनंत अनंत सुख, दर्श अनंत प्रमान ।

बल अनंत अर्हत सो, इष्टदेव पहिचान ॥१५॥

अर्थ-१ अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, ३ अनन्तसुख, ४ अनन्तवीर्य । जिसमें इतने गुण हों, वह अरहन्त परमेश्वरी है ।

अष्टादशदोषवर्जन ।

जन्म जरा त्रषा क्षुधा विस्मय आरत खेद ।

रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद ॥१८॥

राग द्वेष अरु मरण जुत, ये अष्टादश दोष ।

नार्हि हात अर्हतके, सो छवि लायक मोष ॥१७॥

अर्थ-१ जन्म, २ जरा, ३ तृषा, ४ क्षुधा, ५ आश्चर्य, ६ अरति (पीडा), ७ खेद (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद

११ मोह, १२ भय, १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ पसीना,

१६ राग, १७ द्वेष, १८ मरण, ये १८ दोष अरहन्त भयवानमें

नहीं होते ॥१७॥

सिद्धोंके ८ गुण ।

सोरठा ।

समकित दर्शन ज्ञान, अगुरुलघू अवगाहना ।

सूच्छम वीरजवान, निराबाध गुण सिद्धके ॥१८॥

अर्थ-१ सम्यक्तव, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघुत्व,
५ अवगाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनंतवीर्य्य, ८ अन्याबाधत्व, ये
सिद्धोंके ८ मूलगुण होते हैं ॥१८॥

आचार्यके ३६ गुण ।

द्वादश तप दश धर्मजुत, पाँच पंचाचार ।

षट् आवश्यक त्रिगुति गुण, आचारज पदसार ॥

अर्थ-तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुति
३ । ये आचार्य महारानके ३६ मूलगुण होते हैं । अब इनको
भिन्न २ कहते हैं ॥१९॥

द्वादश तप ।

अनशन ऊनोदर करें, व्रतसंख्या रस छोर ।

विविक्तशयन आसन धरें, कायकलेश सुठोर ॥

प्रायश्चित्त धर विनयजुत, वैयाव्रत स्वाध्याय ।

पुनि, उत्सर्ग विचारक, धरें ध्यान मन लाय ॥२१॥

अर्थ-१ अनशन, २ ऊनोदर, ३ व्रतपरिसंख्यान, ४ रस-
परित्याग, ५ विविक्तशय्यासन, ६ कायकलेश, ७ प्रायश्चित्त लेना,
८ पांच प्रकार विनय करना, ९ वैयाव्रत करना, १० स्वाध्याय

करना, ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना), आर
११ ध्यान करना, ये बारह प्रकारके तप हैं ॥ २१ ॥

दश धर्म ।

क्षमा मार्दव आर्जव, सत्यवचन चित्त पाग ।

संजम तप त्यागी सरव, आर्किचन तिय त्याग ॥

अर्थ-१ उत्तमक्षमा, २ मार्दव, ३ आर्जव, ४ सत्य,
५ शौच ६, संयम, ७ तप, ८ त्याग, ९ आर्किचन्य, १० ब्रह्मचर्य;
ये दश प्रकारके धर्म हैं ॥ २२ ॥

आवश्यक ।

समता घर बंदन करें, नाना थुती बनाय ।

प्रतिक्रमण स्वाध्यायजुत कायोत्सर्ग लगाय ॥

अर्थ-१ समता (समस्त जीवोंसे समताभाव रखना)
२, वंदना, ३ रतुति (पंचपरमेष्ठीकी स्तुति) करना, ४ प्रतिक्रमण
(लगे हुए दोषोंपर पश्चात्ताप) करना, ५ स्वाध्याय, और ६ कायो-
त्सर्ग (ध्यान) करना ये छह आवश्यक हैं ॥ २३ ॥

पंचाचार और तीन गुप्ति ।

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, बीरन पंचाचार ।

गोपे मनवचकायको, गिन छतौस गुन सार ॥

अर्थ-१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपा-
चार, ५ वीर्याचार, १ मनोगुप्ति (मनको वशमें करना) २ वचन-
गुप्ति (वचनको वशमें करना) ३ कायगुप्ति (शरीरको वशमें करना),
इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं ॥ २४ ॥

उपाध्यायके २५ गुण ।

चौदह पूरवको धरें, ग्यारह अंग सुजान ।

उपाध्याय पच्चीस गुण, पढ़ें, पढ़ावें ज्ञान ॥१४॥

अर्थ—११ अंग १४ पूर्वको आप पढ़ें, और अन्यको पढ़ावें ये ही उपाध्यायके २५ गुण हैं ॥१५॥

ग्यारह अंग ।

प्रथमहि आचारांग गनि, दूनों सूत्रकृतांग

ठाणअंग तीनों सुमग, चौथो समवायांग ॥१६॥

व्याख्या प्रज्ञप्ति पंचमो, ज्ञातृकथा षट् आन ।

पुनि उपासकाध्ययन है, अन्तःकृत दशठाण ॥१७॥

अनुत्तरणउत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान ।

बहुरि प्रश्नव्याकरणजुत, ग्यारह अंग प्रमान ॥१८॥

अर्थ—१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अंतःकृतदशांग, ९ अनुत्तरोत्पाददशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, ११ विपाकसूत्रांग, ये ग्यारह अंग हैं । २८ ।

चौदह पूर्व—उत्पादपूर्व अप्रायणी. तीनों वीरजवाद ।

अस्ति नास्ति प्रवाद पुनि. पंचम ज्ञानप्रवाद ॥

छट्टो कर्मप्रसाद हैं सतप्रवाद पहिचान ।

अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमो प्रत्याख्यान ॥ ३० ॥

विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महंत ।

प्राणवाद किया बहुल लोकोर्धेदु है अंत ॥ ३१ ॥

अर्थ-१ उत्तादपूर्व, २ अग्रायिणी पूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व,
४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ५ ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व,
७ सत्प्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्या-
नुवादपूर्व ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्रागानुवादपूर्व १३ क्रिया-
विशालपूर्व, १४ लोकविन्दुपूर्व ये १-४ पूर्व हैं ॥ ३१ ॥

सर्वसाधुके २८ मूलगुण ।

पंचमहाव्रत ।

हिंसा अनृत तत्करी, अब्रह्म परिग्रह पाय ।

मनवचतनै त्यागवो, पंचमहाव्रत थाय ॥ ३२ ॥

अर्थ-१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य
महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत ये पांच
महाव्रत हैं ।

पांच समिति ।

इर्या भाषा एषणा, पुनि क्षेपन आदान ।

प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पांचों समिति विधान ॥

अर्थ-१ इर्यासमिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति,
४ आदाननिक्षेपणसमिति, ५ प्रतिष्ठापनासमिति, ये पांच समिति
हैं ॥ ३३ ॥

पांच इंद्रियोंका दमन ।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोष ।

षट् आवशि मंजन तजन, शयन भूमिको शोष ॥

अर्थ-१ स्पर्शन (लङ्का), रसना, २ घ्राण, ३ चक्षु,

और ५ श्रोत्र इन पांच इन्द्रियोंका वश करना सो इन्द्रियदमन है (उह आवश्यक आचार्यके गुणोंमें देखो) ॥ ३४ ॥

शेष सात गुण ।

वस्त्रत्याग कचलोच अरु. लघु भोजन इकवार ।

दांतन मुखमें ना करें, ठाड़े लेहि अहार ॥

अर्थ-१ यावज्जीव स्नानका त्याग, २ शोधकर (देख माल कर) मूमिपर सोना, ३ वस्त्रत्याग (दिगम्बर होना) ४ केशोंका लोच करना, ५ एकवार लघुभोजन करना, ६ दन्तधावन नहीं करना, ७ खड़े खड़े आहार लेना, इन सात गुणोंसहित २८ मूल गुण सर्व मुनियोंके होते हैं । ३६ ॥

साधर्मी भवि पठनको, इष्टछतीसी ग्रंथ

अल्पबुद्धि बुधजन रच्यो, हित मित शिवपुरपंथ ।

इति पंचपरमेष्ठांके १४३ मूलगुणोंका वर्णन समाप्त ।

(२) दर्शनिष्काण्डा

अनादिनिधन महामन्त्र

गाथा-णमो अरहंताणं. णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं

णमो उवज्झयाणां. णमो लोए सब्बसाहणं ॥ १ ॥

मंदिरजंके वेदीगृहमें प्रवेश करते ही "न्य जय जय, निःसहि. निःसहि, निःसहि" इस प्रकार उच्चारण करके उपर्युक्त महामन्त्रका ९ बार पाठ करे । तत्पश्चात्—

चत्वारि मंगलं-अर्हंत मंगलं । सिद्ध मंगलं । साहू मंगलं ।
 केवलिपण्णतो धम्मो मंगलं ॥ १ ॥ चत्वारि लोगुत्तमा-अरहंत
 लोगुत्तमा । सिद्ध लोगुत्तमा । साहू लोगुत्तमा । केवलिपण्णतो
 धम्मो लोगुत्तमा ॥ २ ॥ चत्वारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंत सरणं
 पव्वज्जामि । सिद्धसरणं पव्वज्जामि । साहूसरणं पव्वज्जामि ।
 केवलिपण्णतो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥ ॐ झौं झौं स्वाहा ॥

देवदर्शन ।

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पापनाशनं ।
 दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनं ॥
 दर्शनेन जिनेन्द्राणाम्, साधूनां वंदनेन च ।
 न चिरं तिष्ठति पामम्, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥
 चीतरागगुलं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभं ।
 अनेकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥
 दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनं ।
 बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनं ॥
 दर्शनं जिनचंद्रस्य, सद्धर्माभूतवर्षणं ।
 जन्मदाहविनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ॥
 जीवादितत्त्वं प्रतिदर्शकाय ।
 सम्यक्तमुख्याष्टगुणाश्रयाय ॥
 प्रशांतरूपाय दिगंबराय ।
 देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥
 चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने ।
 परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेवशरणं मम ।
 तस्मात्कारुण्यमार्वेन, रक्षं रक्ष जिनेश्वर ॥
 नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये ।
 वीतरागात्परो देवो, न मृतो न भविष्यति ॥
 जिने भक्तिजिने भक्ति-जिने भक्तिर्दिने दिने ।
 सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥
 जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा मृतं चक्रवर्त्यपि ।
 स्थंचितोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासेत ॥
 जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिमुपाजितं ।
 जन्ममृत्युजरारोगं हन्यते जिनदर्शनात् ॥

अद्याभव सुफलता नयनद्वयस्य ।
 देव त्वदीयचरणान्बुजवीक्षणेन ।
 अद्य त्रिलोकतिलकप्रतिभाषते मे
 संसारवारिधिरयं चुलकप्रमाणं
 इति देवदर्शनं ।

वर्तमान चौबीस तीर्थकरोंके नाम ।

श्रीऋषभ १, अजित २, संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५,
 पद्मप्रभु ६, सुपार्श्व ७, चंद्रप्रभु ८, पुष्पदंत ९, शीतल १०,
 श्रेयान्त ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धर्म १५,
 शान्ति १६, कुन्धु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०,
 नमि २१, नेमि २२, पार्श्वनाथ २३, महांवीर २४, इति वर्तमा-
 नकालसम्बन्धितुविंशतितीर्थकरेभ्यो नमोनमः ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम ।
 त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥ १ ॥
 अद्य संसारगम्भीरपारावारः सुदुस्तरः ।
 सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥
 अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते ।
 स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥
 अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम् ।
 संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥
 अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम् ।
 दुर्गतैर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥
 अद्य सौम्या गृहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः ।
 नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥
 अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः ।
 सुखसंगं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ७ ॥
 अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् ।
 सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥
 अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः ।
 उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥
 अद्याहं सुकृती भूतो निर्धृताशेषकल्मषः ।
 भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥
 अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः ।
 तस्य सर्वार्थसंसिद्धिं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥
 इति अद्याष्टकस्तोत्रं

इस प्रकार बोलकर साष्टांग नमस्कार करना चाहिये ।
नमस्कारके पश्चात् पूजनक लिये चावल चढ़ाना हा तो नीचे लिखा
श्लोक तथा मंत्र पढ़कर चढ़ावे—

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्सुमक्त्या ।

दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतोर्धैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

यदि पुष्पोंसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा श्लोक और
मंत्र पढ़कर चढ़ावे ।

विनीतमव्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् ।

कुन्दारविन्दप्रमुखप्रसूनैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २॥

ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय देवशास्त्रगुरुभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

यदि किसीको लोंग, बदाम, पलायची दाढ़िम आदि कोई
प्राप्तुक फल चढ़ाना हो तो नीचे लिखा श्लोक और मंत्र पढ़कर
चढ़ावे ।

क्षुम्भद्विभ्यन्मनसाप्यगम्यान् कुवादिवादाऽऽखलितप्रभावान् ।

फलैरलं मोक्षफलामिसारैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ३॥

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यदि किसीको अर्घ चढ़ाना हो, तो नीचे लिखा श्लोक व
मंत्र बोलकर चढ़ाना चाहिये ।

मद्धारिगन्वाक्षतपुष्पजातेर नैवेद्यदीपामलधूपधूमेः ।

फलैर्विचित्रैर्धनपुष्पयोगान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ४॥

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं समर्पयामि ॥ ४॥

इस प्रकार चार प्रकारके द्रव्योंमेंसे जो द्रव्य हो, उसी द्रव्यका श्लोक व मंत्र पढ़कर वह द्रव्य चढ़ाना चाहिये । तत्पश्चात् नीचे लिखी दोनों स्तुतियां अथवा दोनोंमेंसे कोई एक स्तुति अवश्य पढ़नी चाहिये ।

दौलतराम कृत स्तुति ॥

दोहा-सकल-ज्ञेय-ज्ञायक तदपि, निजानंदरसलीन ।

सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन ॥

पद्धारिछन्द ।

जय वीतराग विज्ञानपूर, जय मोहतिमिरको हरनसूर ॥

जय ज्ञान अनंतानंतधार, दृगसुखवीरजमंडित अपार ॥१॥

जय परमशांतिमुद्रासमेत, भविजनको निजअनुमृतिहेत ॥

भवि भागनवश जोगे वशाय, तुम धुनि है सुनि विभ्रम नशाय ॥२॥

तुम गुणचित्तत निजपरविवेक, प्रगटै, विघटें आपद अनेक ॥

तुम जगभूषण दूषणवियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥३॥

अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप, परमात्मपरमपावन अनूप ॥

शुभ अशुभविभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥४॥

अष्टादशदोषविमुक्त धीर, सुचतुष्टयमय राजत गंभीर ।

मुनि गणधरादि सेवत महंत, नवकेवललब्धिधरमा धरंत ॥५॥

तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ॥

भवसागरमें दुख छारवारि, तारनको और न आप टारि ॥६॥

यह लखि निज दुखगदहरणकाज, तुमही निमित्तकारण इलाज ॥

जौनें, तात मैं शरण आय, उचरूं निज दुख जो चिर लहाय ॥७॥

मैं अम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधिफल पुण्यपाप ॥
 निजको परको करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥८॥
 आकुलित भयो अज्ञानधारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ॥
 तनपरणतिमें आपो चितारि, कबहुं न अनुभवो स्वपदसार ॥९॥
 तुमको विन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत भिनेश ॥
 पशु नारक नर सुर गतिमझार, भव घर घर मरचां अनंतवार ॥१०॥
 अब काललाब्धिवलतैं दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥
 मन शांत भयो भिट सकलद्वंद, चाख्यो स्वात्मरस दुस्तनिकंद ॥११॥
 तातैं अब ऐसा करहु नाथ विछुरै न कभी तुव चरणसाथ ॥
 तुम गुणगणको नहिं छेव देव, जगतारनको तुव विरद एव ॥१२॥
 आत्मके आहित विषय कषाय, इनम मंत्री परिणत न जाय ॥
 मैं रहूं आपमें आप लीन, सो करो होहु ज्यों निजाधीन ॥१३॥
 मेरें न चाह कुछ और ईश, रत्नत्रयनिधि दीम मुनीश ॥
 मुझ कारजके कारन तु आप, शिवं करहु हरहु मम मोहताप ॥१४॥
 शशि शांतिकरन तपहरनहेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥
 पीवत पिचूप ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥१५॥
 त्रिमुवन तिहुकालमैझार काय, नहिं तुम विन निजसुखदाय होय ॥
 मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजशधि उत्तारन तुम जिहान ॥१६॥
 दाहा—तुमगुणगणमाण गणपती, गणत न पार्वहिं पार ।

‘दौल’ स्वल्पमति । कम कहे, नभूं त्रियोग समार ॥

अथ बुधजनकृत स्तुति ।

प्रभु पतिपावन मैं अपावन, चरन आधो-शरनजी ।

यो विरद आप निहार स्वामी, मेटे जांमन मरनजी ॥
 तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविधप्रकारजी ।
 या बुद्धिसेती निज न जाण्या, भ्रमगिण्या हितकारजी ॥ ॥
 भवविकटवनमें करम वैरी, ज्ञानघन मेरो हरयो ।
 तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरता फिरयो ॥
 धन घड़ी यो, धन दिवस योही, धन जनम मेरो भयो ।
 अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो ॥२॥
 छवि वीतरागी नगनमुद्रा, दृष्टि नासापै धरें ।
 वसुं प्रातःहार्य अनन्तगुणयुत, कोटिरविछविको हूरें ॥
 मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो ।
 मो उर हरख ऐसो भयो, मनु रक चिंतामणि लंयो ॥३॥
 मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊं तुव चरनजी ।
 सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरनजी ॥
 जाचू नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथ जी ।
 'बुध' जाचहू तुव भक्ति भवभव, दोजिये शिवनाथजी ॥४॥

इस प्रकार एक या दोनों स्तुति पढ़कर पुनः साष्टांग नमस्कार करना चाहिये । तपश्चात् नीचे लिखा श्लोक पढ़कर गंधोदक-मस्तकपर तथा हृदयादि उत्तम अंगोंमें भी लगाना चाहिये ।

निर्मल निर्मलीकरणं पवित्रं पापनाशनम् ।

जिनगन्धोदकं वन्दे अष्टकर्मविनाशकम् ॥१॥

यदि आशिका लेंनी हो तो यह दोहा पढ़कर लेना चाहिये ।
 दोहा—श्रीजिनवरकी आशिका, लीमें शीस चढ़ाय ।

भवभवके पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥१॥

तत्पश्चात् नीचे लिखे दो अथवा एक कवित्त पढ़कर शास्त्र-
जीको (जिनवाणीको) साष्टांग नमस्कारें करके शास्त्रजी सुनना चा-
हिये। अथवा थोड़ी बहुत किसी भी शास्त्रकी स्वाध्याय करना चाहिये।

कवित्त ।

वीराहिमाचलतैं निकसी, गुरुगौतमके मुख कुंड डरी है ।
मोहमहाचल भेद चली, जगकी जड़तातप दूर करी है ॥
ज्ञानपयोनिधिमाहिं रली बहुभंग तरंगनिसों उछरी है ।
ता शुचि शारद गंगनदीप्रति मैं अँजुलीकर शीस धरी है ॥१॥
या जगमदिरमें अनिवार अज्ञान अंधेर छयो अति भारी ॥
श्रीजिनकी धुनि दीपाशिखासम, जो नाहिं होत प्रकाशनहारी ॥
तो किस भांति पदारथपांति, वहां लहते, रहते अविचारी ।
या विधि संत कहैं धनि हैं धनि, हैं जिनवैन बड़े उपकारी ॥२॥
रात्रिको भी इसी प्रकार दर्शन करके तत्पश्चात् दीप धूपसे
नीच लिखी अथवा जिस पर रुचि हो वह आरती करना चाहिये ।

पंचपरमेष्ठीकी आरती ।

चाल खंडी ।

मनवचतनकर शुद्ध पंचपद, पूजों भविजन सुखदाई ।
सबजन मिलकर दीप धूप ले, करहुं आरती गुणगाई ॥टेका॥
प्रथमाह श्री अरहंत परमगुरु, चौतिस अतिशय सहित वसैं ॥
प्रातिहार्य वष्टु अतुल चतुष्टय, सहित समवसृत माहिं लस ।

क्षुधा तृषा भयं जन्मं जरां मृति, रोगं शोकं रंति अरंति महा ।
विस्मयं खेदं स्वेदं भेदं निद्रां, रागं द्वेषं मिल मोहं दहा ॥
इन अष्टादश दोषरहित नित, इन्द्रादिक पूजत आई ।

सबजन मिल० ॥ १ ॥

दूजे सिद्ध सदा सुखदाता, सिद्धशिलापर राजत हैं ।
सम्यक्दशन ज्ञान वीर्य अरु, सूक्ष्मपणाका छाजत हैं ॥
अगुरुलघू अवगहनशाक्ते घर, बाधाविन अशरीरा हैं ।
तिनका सुमरण नित्य कियेतें, शीघ्र नशत भवपीरा हैं ॥
या कारण नित चित्तशुद्ध कर भजहु सिद्ध शिवके राई ।

सबजन मिल० ॥ १ ॥

तीजे श्री आचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी ह ।
दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज पंचाचार-प्रचारी हैं ॥
द्वादशतप दशधर्म गुप्तित्रय, षट् आवश्यक नित पालें ।
सब मुनिजनको प्रायश्चित दे, मुनिव्रतके दूषण टालें ॥
ऐसे श्री आचार्य गुरुनकी, पूजा करिये चित लाई ।

सबजन मिल० ॥ १ ॥

चौथे श्रीउवशायचरणपंकजरज, सुखदा भविजनको ।
ग्यारह अंग सु पूर्वचतुर्दश, पढ़ें पढावें मुनिगणको ॥
मुनिके सब आचरण आचरें, द्वादश तपके धारी हैं ।
स्यादवाद सुखकारी विद्या, सबजगमें विस्तारी हैं ॥
ऐसे श्रीउवशाय गुरुनके, चरणकमल पूजहु माई ।

सबजन मिल० ॥ ४ ॥

पंचमि आरति सर्वसाधुकी, आठवीस गुण-मूल धरें ।

पंचमहाव्रत पंचसमितिधर इन्द्रिय-पांजों दमन करें ॥

पट् आवश्यक केशलोंच एक बार खड़े भोजन करते ।

दाँतण स्नान त्याग भू सोवत, यथाजात मुद्रा धरते ॥

या विधि "पन्नालाल" पंचपद, पूजत भवदुख नशनाई ।

सबजन मिलकर ॥ ९ ॥

इस प्रकार आरती बोलकर नीचे लिखा श्लोक, दोहा और
मंत्र पढ़कर आरतीको मस्तक चढ़ावें ।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैः कनक्ताञ्चनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

दोहा-स्वपरप्रकाशनज्योति अति, दीपक तमकरहीन ।

जासूं पूजूं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥



(३) आलोचना फाट ।

दोहा-वंदो पांजों परम गुरु, चौबीसों जिनराज ।

करूं शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज ॥ १ ॥

सखी छन्द (१४ मात्रा)

मुनिये जिन-भुरजु हमारी, हम दोष किये अति भारी ॥

तिनकी अज्ञान-मिथुनिकाजा, तुम अरन लही जिनराज ॥ २ ॥

इक बे ते चउ ईद्री वा, मनरहित सद्धित जे जीवा ॥

तिनकी नहिं करुना भारी, निरदर्ह ह्ये घात विचारी ॥ ३ ॥

समरम्भ समारम्भ आरम्भ, मनबचतन कीनो प्रारम्भ ॥

कृत कारित मोदन करिके, क्रोधादि चतुष्टय घरिके ॥ ३ ॥
 शत आठ जु इम भेदनतैं, अध कीने परछेदनतैं ॥
 तिनकी कहूं कहँलौ कहानी, तुम जानत केवलजानी ॥ ४ ॥
 विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके ॥
 वश होय घोर अध कीने, वचतैं नहिं जात कहीने ॥ ५ ॥
 कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी ॥
 या विध मिथ्यातः अमायो, चहुंगतिमधि दोष उपायो ॥ ७ ॥
 हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनितासौं दृगजोरी ॥
 आरम्भपरिग्रहभीनो, पन पाप जु याविधि कीनो ॥ ८ ॥
 सपरस रसना भ्राननको, दृग कान विषय सेवनको ॥
 बहु कर्म किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने ॥ ९ ॥
 फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये ॥
 नहिं अष्ट मूलगणधारे, सेये जु विसन दुखकोरे ॥ १० ॥
 दुइ बीस अभख भिन गाये, सो भी निशदिन मुंजाये ॥
 कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों कर उदर भरायो ॥ ११ ॥
 अनंतान जु बंधी जानो, प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानो ॥
 संजबलन चौकंडी गुनिये, सब भेद जु षोडश सुनिये ॥ १२ ॥
 परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संजोग ॥
 पनवीस जु भेद भये इम, इनके दश पाप किये हम ॥ १३ ॥
 निद्रावश शयन करायो, सुननेमधि दोष लगायो ॥
 फिर भाग विषयवन धायो, जानाविष विषफलं खायो ॥ १४ ॥
 आहार निहार विहारा, इनमें नहिं यतन विचारा ॥
 विन देखा घरा उठायो, विन शोषा भोजन खाया ॥ १५ ॥

तब ही परमाद सतायो, बहुविध विकल्प उपनायो ॥
 कछु सुधि बुधि नाहि रही है, मिथ्यामति छाये गई है ॥ १६ ॥
 मरजादा तुम ढिग छीनी, ताहूँ दोष जु कीनी ॥
 भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषै सब लहिये ॥ १७ ॥
 हा हा मैं दुठ अपराधी, त्रस जीवनराशि धिराधी ॥
 थावरकी जतन न कीनी, उरमैं करुणा नहिं छीनी ॥ १८ ॥
 पृथिवी बहु खोद कराई, महलदिक जागां चिनाई ।
 विन गाल्यो पुन जल ढोल्यो, पंखातैं पवन बिलोल्यो ॥ १९ ॥
 हा हा मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी ॥
 या मधि जीवनि के खंदा, हम खाये धरि आनंदा ॥ २० ॥
 हा परमादवसाई, विन देखे अगनि जलाई ॥
 तामध्य जे जीव जु आवे, ते हू परलोक सिधाये ॥ २१ ॥
 बीषो अन राति पिसायो, ईधन विन सोध्य जलायो ॥
 शाहू ले आगां बुहारी, धिटियादिक जीव विदारी ॥ २२ ॥
 जल छान जीवानी कीनी सोहु पुनि डारि जु दीनी ॥
 नहिं जलथानक पटुचाई किरिया विन पाप उपाई ॥ २३ ॥
 जल मल भोरिनमें गिरायो, रुमि कुल बहु घात करायो ॥
 नदिय न निच चीर धुवाये कोसनक जीव मराये ॥ २४ ॥
 अज्ञादिक श्राव करई तामैं जु जीव निसराई ।
 तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया ॥ २५ ॥
 पुनि द्रव्य कमावन काजे बहु आरंभ हिंसा साने ॥
 किये अघ तुसनावश भारी, करुना नहिं रच विचारी ॥ २६ ॥
 इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्रीभगवता ॥

संतति चिरकाल उपाई, बानीतैं कहिय न जाई ॥२७॥
 ताको जु उदय जब आयो, नानाविष भोहि सतायो ॥
 फल भुंजत जो दुख पाउं, वचैत कैसें करि गाउं ॥२८॥
 तुम जानत केवल ज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी ॥
 हम तौ तुम शरन लही है, जिन तारन विरद सही है ॥२९॥
 जो गांवपति इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै ॥
 तुम तीन भुवनके स्वामी, दुख मेटो अंतरजामी ॥३०॥
 द्रौपदिको चीर बढ़ायो, सीताप्रति कमल रचायो ॥
 अंजनसे किये अकामी, दुख मेटो अंतरजामी ॥३१॥
 मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद निहारो ॥
 सब दोष राहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३२॥
 इंद्रादिक पद नाहिं चाहूं, विषयनिमै नाहिं लुभाउं ॥
 रागादिक दोष हरीजे, परमात्म निजपद दीजे ॥३३॥

दोहा-दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीजे मोय ।

सब जीवनकोसुख बढ़े, आनंद मंगल होय ॥३४॥

अनुभव माणिक पारंखी, जौहरी आप जिनंद ।

ये ही वर मोहि दीजिये, चरन सरन आनंद ॥३५॥

इति आलोचना पाठ समाप्त ॥



स्वर्गीय कविवर पं० रूपचंद्रजी पांडेकृत-

[४] पंचकल्याणक पाठ ।

श्री गर्भकल्याणक ।

पणविवि पंच परमगुरु, गुरुं जिनशासनो ।

सकलसिद्धिदातार सु, विघनविनासनो ॥

शारद अरु गुरु गौतम, सुमतिप्रकासनो ।

मंगलकर चउ-संघर्हि पापपणासनो ॥

पापै पणासन गुणर्हि गरुवा दोष अष्टादश रहे ।

धरि ध्यान कर्म विनाशि केवल-ज्ञानं अविचल जिन लहे ।

अमु पंचकल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावर्हि ।

त्रैलोक्यनाथ सु देव जिनवर, जगत मंगल गावर्हि ॥१॥

जाकै गरमकल्याणक, धनपति आइयो ।

अवधिज्ञान प्रमाण सु इंद्र पठाइयो ॥

रवि नव बारह योजन, नयरि सुहावनी ।

कनकरयणमणिमंडित, मंदिर अती बनी ॥

अति बनी पोरि पगारि परिया, सुवन उपवन सेहिण् ।

नर नारि सुंदर चतुरमेख सु, देख जनमन मोहिण् ॥

तहां जनकगृह छह मास प्रथमर्हि, रतनधारा बरपियो ।

पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा, करहि सब विधि हरपियो ॥२॥

सरकुंजरसम कुजर धवल धुरंधरो ।

केहि केशरशोभित, नखशिखसुंदरो ॥

कमलाकलशन्हवन, दोय दात सुहावनी ।

रवि शशि मंडल मधुर, मीन जुग पावनी ॥
 पावन कनक घटयुग्म पूरण, कमलकलित सरोवरो ।
 कल्लोलमालाकलित सागर, सिंहप्रीठ मनोहरो ॥
 रमणीक अमरविमान ऋणिपती, भवन मुवि छविछाज्जण ।
 रुचि रतनराशि दिपंत दहन सु, तेजपुंज विराजण ॥ १ ॥
 ये सखि सोलह स्वर्ग, सुती सयनमें ।
 देखे माय मनोहर, पच्छिम-रयनमें ॥
 उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकासियो ।
 त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहि भासियो ॥
 भासियो फल तिहि चिति दपति, परम आनंदित भए ।
 छहमासपरि नवमास पुनि तहँ, रयन दिन सुखसुं गए ॥
 गर्भावतार महंत महिमा सुनत सब सुख पावहीं ।
 जन 'रूपचंद्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ ४ ॥

श्री जन्म कल्याणक.

मतिश्रुतअवधि विराजित, निज जब जनमियो ।
 तिहँलोक भयो छोभित, सुरगण मरमियो ॥
 कल्पवासिधर घंट, अनाहद वज्रियो ॥
 जोतिषधर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥
 गज्जियो सहजहि संख भावन, भवन सबद सुहावने ।
 व्यंतरनिलय पटु पटहि वज्रिय कहत महिमा क्यौं वने ॥
 कंपित सुरासन अब धिबल तव जनम जिनको जानियो ।
 धनराज तव गनराज साया-मयी निरमय आनियो ॥ ५ ॥

योजन लाख गयंद वदन-सौ निरमए ।

वदन वदन वसुदंत, दंत सर संठए ॥

सर सर सौ-पणवीस कमलिनी छानहीं ।

कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विरामहीं ॥

राजहीं कमलिनि कमल अठोतर,-सौ मनोहर दल बने ।

दल दलहिं अपछर नटाहिं नवरस, हावभाव सुहावने ॥

मणि कनककंकण वर विचित्र, सु अमरमंडप सोहये ॥

घन घंट चँवर धुजा पनाका देखि त्रिभुवन मोहये ॥ ६ ॥

तिहिं करि हरि चढ़ि आयो, सुरपरिवारि यो ।

पुरहिं प्रदच्छन देत सु, जिन जयकारियो ॥

गुप्त जाय जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची ।

मायामयी शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची ।

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृप्ति न हजिये ।

तब परमहरपितहृदय हरिने, सहस लोचन पूजिये ॥

शुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछंग धरि प्रमु लीनए ।

ईशानइंद्र सु चंद्रछवि शिर, छत्र प्रमुके दीनए ॥ ७ ॥

सनतकुमार महेंद्र, चमर दुहि ढारहीं ।

शेष शक्र जयकार, सबद उच्चारहीं ॥

उच्छवसहित चतुर्विधि, सुर हरषित भए ।

योनन सहस निन्याणवे, गगन उलंधि गए ॥

लंधि गये सुरगिरि जहाँ पांडुक,-वन विचित्र विराजहीं ।

पांडुकशिला तहाँ अर्द्धचंद्रसमान, मणि छवि छाजहिं ॥

योनन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गणी ।

वर अष्ट मंगल कनक कलशनि, सिंहपीठ सुहावनी ॥ ८ ॥

रात्रि माणिमंडप शोभित मध्य सिंहासनो ।

थाप्यो पूरव-मुख तहाँ, प्रभु कमलासनो ॥

बाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने ।

दुंदुभि प्रमुख मधुर, धुनि, और जु बाजने ॥

बाजने बाजहिं सचीं सब मिलि, धवल मंगल गावहीं ॥

कर, करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक भावहीं ॥

भरि छीरसागर-जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं ।

सौधर्म अरु ऐशानइंद्र सु, कलश ले प्रभु न्हावहीं ॥९॥

वदन-उदर-अवगाह, कलशगत जानिये ।

एक चार वसु योजन, मान प्रमानिये ॥

सहस-अठोतर कलशा, प्रभुके सिर डैरे ।

फुनि शृंगारप्रमुख आ, -चार सबै करै ॥

करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, आनि फुनि मातहिं दयो ।

घनपातिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो ॥

जनमामिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।

जन 'रूपचंद्र' सुदेव भिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥१०॥

श्री तप कल्याणक ।

श्रमजलरहित शरीर, सदा सब मलरहिउ ।

छीर-वरन वर रुधिरं, प्रथमआकृति लहिउ ॥

प्रथम सारसंहनन, सुरूप विराजहीं ।

सहज-सुगंध सुलच्छन, -मंडित छानहीं ॥

छाजहि अंतुलबल परमं प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने ।
दश सहज अतिशय सुमंग मूरति, वालंलील कहावने ॥
आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचित उचित जु नित नये ।
अमरोपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोगं विभोगये ॥ ११ ॥

भवतन-भोगं-विरत्त, कदाचित् चित्त ए ।

घन योवने पिय पुत्त, कलत्त अनित्त ए ॥

कोई न शरन मरनदिन, दुख चहुंगति भयों ।

सुख दुख एकहि भोगत; जिय विधिवश पर्यो ॥

पर्यो विधि वश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो ।

तन अशुचिपरतें होय आस्रव, परिहरो सो संवरो ॥

निर्जरा तपबल होय समाकित, -दिन सदा त्रिभुवन अम्यो ।

दुर्लभ विवेक विना न कबहुं, परम धरमविषै रम्यो ॥ १२ ॥

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया ।

लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया ॥

कुसुमांजलि दे चरन, कमल शिरनाइया ।

स्वयंबुद्ध प्रभु श्रुति करि, तिन समुझाइया ॥

समुझाय प्रभु ते गये निजपद, फुनि महोच्छ्रव हरि कियो ।

रुचिरुचिर चित्र विचित्र शिविका, कर सुनंदन बन लियो ।

तहँ पंचमुष्टि लोच कीनों, प्रथम सिद्धहि नुति करी ।

मंडित महाव्रत पंच दुर्द्धर, सकल परिग्रह परिहरि ॥ १३ ॥

मणिमयभाजन केश परिद्विय सुरमती ।

छीर-समुद्र-जल खिपिकरि, गयो अमरावती ॥

तप संनमबल प्रसुको, मनपर्जय भयो ।
 मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो ॥
 गयो कछु तहँ काल तपबल, रिद्धि वसुविधि सिद्धिया ।
 जसु धर्मध्यानबलेन खयगये, सत्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥
 खिपि सातवें गुण-जतन विन-तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि चढ़े ।
 करि करण तीन प्रथम शुक्लबल, खिपकश्रेणी प्रसु चढ़े ॥ १४ ॥
 प्रकृति छतीस नवें गुण, थान विनासिया ।
 दशमें सूच्छमलोम-प्रकृति तहँ नासिया ।
 शुक्ल ध्यान पद दूजो, फुनि प्रसु पूरियो, ।
 बारहमें-गुण सोलह, प्रकृति जु चूरियो ॥
 चूरियो त्रेसाठे प्रकृति इहविधि, घातिया कर्महंतणी ।
 तप कियो ध्यानप्रयत बारह, विधि त्रिलोकशिरोमणी ॥
 निःक्रमणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।
 जन 'रूपचंद्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ १५ ॥

श्रीज्ञान कल्याणक ।

तेहरमें गुण-थान, सयोगि जिनेसुरो :
 अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो ॥
 समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो ।
 आगम युक्ति प्रमाण, गगनतल परिठयो ॥
 परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामंडप सोहये ।
 तिहिं मध्य बारह बने कोठे, वनक सुरनर मोहये ॥
 मुनि कल्पवासिनि अरजिका फुनि, ज्योति-भौम-भवन-तिया

फुनि मवन व्यंतर नमग सुर नर, पशुनि कोठे बेठिया ॥१६॥

मध्यप्रदेश तीन, थणिपीठ तहां बने ।

गंधकुटी सिंहासन, कमल मुहावने ॥

तीन छत्र सिर शोभित. त्रिभुवन मोहए ।

अंतराक्ष कललाग्न प्रभु तन सोहए ॥

सोहए चौसठि चमर दरत, अशोकतर तल झनए ।

फुनि दिव्यधुनि प्रतिशब्द जुत तहँ, देवदुंदुभि वानए ॥

सुरपुहुपशुष्टि सुप्रमानंडल, कोटि रवि छवि लानए ।

इम अष्ट अनुपम प्रातिहारः, वर विनूति विराजए ॥१७॥

दुइसै योजन मान सुमिच्छ चहँ दिशी ।

गगन गगन अरु प्राणि,—वष नहिँ अहनिशी ॥

निरुपसर्ग निराहार. सदा जगदीसए ।

आनन चार चहँदिशि, शोभित दीसए ॥

दास अशेष विशेष विद्या, विभव वर ईसुरपनो ।

छायाविबलित शुद्ध फटिक, सनान तन प्रभुको बनो ॥

नहिँ नयन पलक पतन क्रदाचित् केश नख सम छानही ।

ये धानियाछयजनित अतिशय, दश विचित्र विराजहँ ॥१८॥

सकल अरयनय नागादि. भाषा जानिये ।

सकल नावगत मैत्री,—भाव वल्लानिये ॥

सकल जलुज फरफूज, वनस्पति नन हरै ।

दर्पणसन ननि अबनि, पवन गति अनुसरै ॥

अनुसरै परमानंद सवको, नारि नर जे सेवता

योजन प्रमाण घरा सुमार्जहिँ, जहां मारुत देवता

फुनि करहिं मेघकुमार-गंधो-दक सुवृष्टि सुहावनी ।
 पदकमलतर-सुर खिपहिं कमल सु-धराणि शशिशोभा बनी ॥
 अमलं गगन तल अरु दिशि तहँ अनुहारहीं ।
 चतुरनिकाय-देवगण, जय जयकारहीं ॥
 धर्मचक्र चले आगे, रवि जहँ लाजहीं ।
 फुनि श्रंगार-प्रमुख वसु, मंगल राजहीं ॥
 राजहीं चौदह चारु अतिशय-देवराचित सुहावने ।
 जिनराज केवलज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा बने ॥
 तब इंद्र आनि कियो महोच्छव सभा शोभित अति बनी ॥
 धर्मोपदेश कियो तहां, उच्छरिय बानी जिनतनी ॥ ० ॥
 क्षुधा तृषा अरु राग, द्वेष असुहावने ।
 जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने ॥
 रोग शोक मय विस्मय, अरु निद्रा घणी ।
 खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गणी ॥
 गणीये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरंजनो ।
 नव परमकेवललब्धिमंडित, शिवरमणी-मनरंजनो ॥
 श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।
 जन 'रूपचंद्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ २१ ॥

श्री निर्वाणकल्याणक ।

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो ।
 भविजनप्रति उपदेश्यो, जिनवर तारिसो ॥
 भवभयभीत महाजन शरणे आइया ।

रत्नत्रयलच्छन्न शिवपंथनि लाइयां ॥

लाइया पंथ जु भव्य फुनि, प्रभु तृतीय शुक्ल जु पूरियो ।

तजि तेरहौ गुणथान योग, अयोगपंथपग धारियो ॥

फुनि चौदहें चौथे सुक्लबळ, बहत्तर तेरह हती ।

इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो, समयमें पंचमगती ॥ १२ ॥

लोकशिखर तनुवात,—बलयमहं संठियो ।

धर्मदव्यविन गमन न, जिहि आगे कियो ॥

मयनरहित मूयोदर, अंबर जारिसों ।

किमपि हीन निजतनुतें, भयौ प्रभु तारिसों ॥

तारिसों पर्जय नित्य अविचल, अर्थपर्जय क्षणक्षयी ।

निश्चयनयेन अनंतगुण विवहार, नय वसु गुणमयी ।

वस्तु स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परणति परिणयो ।

चिद्रूप परमानंदमंदिर, सिद्ध परमात्म भयो ॥ १३ ॥

तनपरमाणु दामिनिवत् सब खिर गये ।

रहे शेष नखकेशरूप, जे परिणये ॥

तब हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरंगण शुभं संच्यो ।

मायामई नखकेशरहित, भिन्नतन रच्यो ॥

राच अगर चंदनप्रमुख परिमल द्रव्य जिन ज्यकारियो ।

पदधति अगनिकुमारमुकुटानल, सुविधि संस्कारियो ॥

निर्वाणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।

जन रूपचंद्र सुदेव जिनवर, जगत् मंगल गावहीं ॥ १४ ॥

मंगल गीत ।

मैं मतिहीन भक्तिवश, भावन भाइया ।

मंगलगीतप्रबंध सु, जिनगुण गाह्या ॥

जो नर सुनाहि बखानहि, सुर धरि गावहीं ।

मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं ॥

पावहीं अष्टौ सिद्धि नवनिधि, मनप्रतीति जु आनहीं ।

अमभाव छूटै सकल मनके, जिनस्वरूप सो जानहीं ॥

पुनि हराहि पातक टराहि विघ्न, सु होय मंगल नित नये ।

भणि रूपचन्द्र त्रिलोकपति जिन-देव चउसंधहि नये ॥१५॥



(५) निर्वर्णकाण्ड (गर्था)

अट्टावयम्भि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो । उज्जंते जेमि-
जिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥ वीसं तु जिणवरिंदा अमरा-
सुरवांदिदा धुदकिलेसा । सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं
॥२॥ वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्ठयकोडीओ
णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥३॥ जेमिसाभि पज्जण्णो संबुक्कुमारो
तहेव अणिरुद्धो । बाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥४॥
रामसुवा वेणिज जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ । पावागिरिवरसिहरे
णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥५॥ पंडुसुआ तिणिजजणा दविडगरिंदाण,
अट्टकोडीओ । सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥६॥ संते
जे वलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्टकोडीओ । गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वा-
णगया णमो तेसिं ॥७॥ रामहणू सुग्गीओ गंवयगवाक्खो य णील-
महणीलो । णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥८॥ णंगाणंगकु-
मारा कोडीपंचद्धसुणिवरा सहियां । सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया

जैनसिद्धांतसंग्रह ।

णमो तेसिं । १९॥ दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्वमुणिवरा सहिया ।
 रेवाउहयतङ्गे णिन्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥ रेवाणइए तीरे पश्चि-
 मभायम्मि सिद्धवरकूडे । दो चकी दह कप्पे आहुट्टयकोडिणिन्वुदे
 वंदे ॥ ११ ॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे ।
 इंदजीदकुभयणो णिन्वाणगया णमो तेसिं । १२ । पावागिरिवरासिहरे,
 सुवण्णमद्दाइमुणिवरा चउरो । चलणाणईतङ्गे णिन्वाणगया णमो
 तेसिं ॥ १२ ॥ फलहोडीवरगामे पश्चिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे ।
 गुरुदत्ताइमुणिंदा णिन्वाणगया णमो तेसिं ॥ १३ ॥ णायकुमारमुणिंदो
 वाल महागालि चैव अज्जेया । अट्टावयगिरिसिहरे णिन्वाणगया
 णमो तेसिं ॥ १४ ॥ अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे ।
 आहुट्टयकोडिओ णिन्वाणगया णमो तेसिं ॥ १५ ॥ वंसत्थलवरणियरे
 पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे । कुलदेसभूसणमुणी णिन्वाणगया
 णमो तेसिं । १६ ॥ जसरहरायस्स सुवा पंचसयाइं कल्लिंदेसम्मि ।
 कोडिसिलाकोडिमुणि णिन्वाणगया णमो तेसिं । १७ ॥ पासस्स सम-
 वसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच । रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिन्वा-
 णगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥

अथ अइसयखेत्तकडं—अतिशयक्षेत्रकाण्डम् ।

पासं तह अहिणंदणं णायद्दहि मगलाउरे वंदे ।
 अस्सारम्मे पट्टाणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥ १ ॥
 बाह्वालि तह वंदमि पोयणपुरहत्थिणापुरं वंदे ।
 संती कुंथव अरिहो वाणारसिए सुपासपासं च ॥ २ ॥
 महुराए अहिछित्ते बीरं पासं तहेव वंदामि ।

जंबुमुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तोवि जंबुवणगहणे ॥३॥
 पंचकल्लाणठाणं जाणवि संजादमच्चलोयम्मि ।
 मणवयणकायसुद्धी सव्वं सिरसा णमंस्सामि ॥४॥
 अमगलदेवं वंदमि वरणयरे णिव्वडकुंडली वंदे ।
 पासं सिवपुरि वंदमि होलागिरिसंखदेवम्मि ॥५॥
 गोमटदेवं वंदमि पंचसयं धणुहदेहउच्चतं ।
 देवा कुणंति वुट्ठी केसरिकुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥६॥
 णिव्वाणठांग जाणिवि अइसयठाणाणि अइसए सहिया ।
 संजादमिच्चलोए सव्वे सिरसा णमंस्सामि ॥७॥
 जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकडंपि भावसुद्धीए ।
 मुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ॥८॥
 इति अइसइखित्तकंडं ।

निर्वाणकांड (भाषा)

(कविवर भैया भगवतीदासजीरचित)

दोहा—वीतराग वंदौ सदा, भावसहित सिरनाय ।

कहूं कांड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय ॥ १ ॥

चौपाई—अष्टापदआदीसुरस्वामि । वासुपूज्य चंपापुरि नामि ।
 नेमिनाथस्वामी गिरनार । वंदौ भावभगति उरधार ॥ १ ॥ चरम
 तीर्थकर चरम शरीर । पावापुरि स्वाभी महावीर ॥ शिखरसमेद
 जिनेसुर वीस । भावसहित वदा जगदीस ॥२॥ वरदतरायरु इन्द्र
 मुनिंद, सायरदत्त आदि गुणवृंद । नगरतारवर मुनि उठंकोड़ि । वंदौ

भावसाहित करजोड़ि ॥४॥ श्रीगिरनारशिखर विख्यात । कोड़ि
 चहत्तर अरु सौ सात ॥ संवु प्रदुम्न कुमर द्वै भाय । अनिरुषआदि
 नमू तसु पाय ॥५॥ रामचंद्रके सुत द्वै वीर । लङ्घनरिंद आदि
 गुणधीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्तिमंझार । पावागिरि बंदौ निरधार
 ॥६॥ पांडव तीन द्रविड राजान आठकोड़ि मुनि मुक्तिपयान ॥
 श्रीशत्रुंजयगिरिके सीस । भावसाहित बंदौ निश दीस ॥७॥ जे
 बलिभद्र मुक्तिमें गये । आठकोड़ि मुनि औरहिं मये । श्रीगज-
 पंथशिखर सुविशाल । तिनके चरण नमूं तिहुं काल ॥८॥ राम
 हनू सुग्रीव मुडील । गवगवाख्य नील महानील । कोड़ि निन्याणवै
 मुक्तिपयान । तुंगीगिरी बंदौ धरि ध्यान ॥९॥ नंग अनंग कुमार
 सुजान । पंचकोड़ि अरु अर्धप्रमान ॥ मुक्ति गये सोनागिर शीस ।
 ते बंदौ त्रिभुवनपति ईश । ॥१०॥ रावणके सुत आदि कुमार ।
 मुक्त गये रेवातट सार ॥ कोड़ि पंच अरु लाख पचास । ते बंदौ
 धर परम हुलास ॥ ॥१॥ रेवानदी सिद्धवरकूट । पश्चिमदिशा देह
 जहँ छूट ॥ द्वै चक्री दश कामकुमार । ऊठकोड़ि बंदौ भवपार
 ॥१२॥ बड़वाणी बडनयर भुचंग । दक्षिण दिश गिरिचूल उतग ॥
 इंद्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण । ते बंदौ भवसायरतर्ण ॥१३॥
 सुवरणमद्रआदि मुनि चार । पावागिरिवर शिखरमंझार ॥ चलना
 नदी तीरके पास । मुक्ति गये बंदौ नित तास ॥१४॥ फलहोड़ी
 बड़गाम अन्नद्वारा पश्चिमदिशा द्रोणगिरिरूप ॥ गुरुदत्तादि
 मुनीसुर जहाँ । मुक्ति गये बंदौ नित तहाँ ॥१५॥ बाल
 महाबाल मुनि दांय । नागकुमार मिले त्रय होय ॥ श्रीअष्टापद
 मुक्तिमंझार । ते बंदौ नित सुरतसँमार ॥१६॥ अचलापुरकी दिश

ईशान । तहां मेढ़गिरि नाम प्रधान ॥ सांढे तीन कोडि मुनिराय ॥
 तिनके चरन जे मूं चित्त लाय ॥ १७ ॥ वंशस्थल बने के दिग होय ॥
 पश्चिमादिशा कुंथगिरि सोय ॥ कुलमूषेण देशमूषण नाम । तिनक
 चरणनि करूं प्रणाम ॥ १८ ॥ बसरथरानाके सुत कहै । देशकलिंग
 पांचसौ लेहे ॥ कोटिशिला मुनि कोटिप्रमान । वंदन करूं जोर
 जुगप्रान ॥ १९ ॥ समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद्र । रेसंदीगिरि नयतीनंद्र ॥
 वरदत्तादि पंच ऋषिराज । ते वंदौ नित धरमनिहोज ॥ २० ॥
 तीन लोकके तीरथ जहाँ । नितप्रति वंदन कीजे तहाँ ॥ मन प्रेच
 कायसहित सिरनाय । वंदन करहिं भविक गुणगाय ॥ २१ ॥
 संवत् सत्तरहसौ इकताल । अश्विनसुदि दशमी सुविशाल ॥ 'मैया'
 वंदन करहिं त्रिकाल । जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥ २२ ॥

इति निर्वाणकांड भाषा ।

श्रीनिर्वाणकांडका भावार्थ ।

श्री आदिनाथ भगवान्, कैलाश पर्वतपरसे मोक्षको पधारै
 हैं । श्री वासुपूज्य स्वामी चंपापुरसे मोक्ष गये हैं । श्री नेमिनाथ
 स्वामी गिरिनार पर्वत से मोक्ष गये हैं । श्री महावीर स्वामी
 पावापुर से मोक्ष गये हैं । इन चार तीर्थंकरों के सिवाय
 शेष वर्तमान बीस तीर्थंकर श्री सम्मेदाशिखरजी से मोक्ष को
 पधारै हैं ॥ १, २ ॥

श्रीतारंगाजी से वरदत्त, वरगंदत्त और सागरदत्त आदि
 सांढे तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ३ ॥ श्री गिरिनार पर्वत
 से (श्री नेमिनाथ स्वामी के सिवाय) शंबुकुमार, प्रदुम्न कुमार

ये दोनों भाई और अनिरुद्ध आदि बहत्तर करोड़ सातसौ मुनि मोक्ष गये हैं । ४ ॥ पावागढजीसे रामचन्द्रजीके दो पुत्र और लाड़ देशके राजा आदि पांच करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ५ ॥ श्री शत्रुंजय पर्वत से तीन पाण्डेव द्रविड देश के राजा आदि आठ करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ६ ॥ श्री गज-पंथाजीसे साठ बलिभद्र जादवनरेन्द्र आदि आठ करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ७ ॥ मांगीतंगीगिरिजीसे रामचन्द्र, हनुमान, सुग्रीव, सुडील, गवय, गवाक्ष, नील, महानील कुमार, आदि निन्यानवै करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ८ ॥ सोनागिरिजीसे नंगकुमार अंग कुमार आदि साढ़े पांच करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ९ ॥ नर्मदा नदीके किनारे से रावण के पुत्र आदि पांच करोड़ पचास लाख मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १० ॥ नर्मदा नदीसे पश्चिमकी तरफ सिद्धवर कूटसे दो चक्रवर्ती, दश कामदेव आदि साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ ११ ॥ बड़वानी जी से इन्द्रजीत और कुंभकर्ण मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १२ ॥ पावागिरिसे सुवर्णभद्र आदि चार मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १३ ॥ द्रोणगिरिजासे गुरुदत्त आदि मुनि गये हैं ॥ १४ ॥ कैलाश-गिरिसे बाल महाबाल और नागकुमार मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १५ ॥ मुक्तागिरिजी से साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १६ ॥ कुंथलगिरिजीसे कुलभूषण और देशभूषण मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १७ ॥ दक्षिण दिशामें कोटिशिलासे जसधर राजाके पांचसौ पुत्र आदि

एक करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १८ ॥ श्रीरेसंदीगिर (नयनागिर)
जीसे वरदत्त आदि पांच मुनि मोक्ष गये हैं ॥ १९ ॥ मथुराजी
से जम्बूस्वामी पांचवें कालके अंतिम केवली मोक्ष गये हैं ॥ २० ॥
इन सब मोक्ष गामी जीवों और निर्वाणक्षेत्रोंकी मैं त्रिकाळ
वन्दना करता हूं ॥



(६) श्री दर्शन फच्चीसी ।

तुम निरखत मुझको मिली, मेरी संपत्ति आज ।
कहा चक्रवर्ति संपदा, कहा स्वर्ग साम्राज ॥ १ ॥
तुम वंदत जिन देवजी, नित नव मंगल होय ।
विघ्न कोटि तत्क्षण टरें, लहहिं सुयश सब लोय ॥ २ ॥
तुम जाने बिन नाथजी, एक स्वांसके मांहि ।
जन्म मरण अठारा किये, साता पाई नांहि ॥ ३ ॥
आन देव पूजत लहे, दुःख नरकके बीच ।
भूख प्यास पशुगत सही, करो निरादर नीच ॥ ४ ॥
नाम उचारत सुख लहे, दर्शनसे अध जाय ।
पूजत पावे देव पद, ऐसे हैं जिनराय ॥ ५ ॥
बंदत हूं जिनराज मैं, घर उर समताभाव ।
तत्र धन जन जग-जालसे, घर धिरागता भाव ॥ ६ ॥
सुनो अरज हे नाथ जी, त्रिभुवनके आधार ।
दुष्ट कर्मका नाश कर, बेगि करो उद्धार ॥ ७ ॥
याचत हूं मैं आपसे, मेरे जियके मांहि ।
राग द्वेषकी कल्पना, क्यों हूं उपजे नांहि ॥ ८ ॥

अति अद्भुत प्रभुता लखी, वीतरागवा मांहि ।
 विमुख होहि ते दुख लहे, सन्मुख सुखी लखार्हि ॥९॥
 कलमल कोटिक न रहे, निरखत ही जिन देव ।
 ज्यों रवि ऊगत जगतमें, हरै तिमर स्वयमेव ॥ १० ॥
 परमाणू पुद्गल तणी, परमात्म संयोग ।
 भई पूज्य सब लोकमें, हरे नन्मका रोग ॥ ११ ॥
 कोटि जन्ममें कर्म जो, बधि हते अनन्त ।
 ते तुम छवि विलोकिते, छिनमें हो है अंत ॥ १२ ॥
 आन नृपति किरपा करे, तब कछु दे धन धान ।
 तुम प्रभु अपने भक्तको, करलो आप समान ॥ १३ ॥
 यंत्र मंत्रं मणि औषधी, विषहर राखत प्राण ।
 त्यों जिन छवि सब भ्रम हरे, करै सर्व प्राधान ॥ १४ ॥
 त्रिभुवनपति हो ताहि तैं छत्र विराजे तीन ।
 अमरा नाग नरेश पद, रहे चरण आधीन ॥ १५ ॥
 अब निरखत भव आपने, तुव भामंडल बीच ।
 भ्रम भेटे समता गहे, नाहिं लहे गति नीच ॥ १६ ॥
 दोई ओर दोरत अमर, चौसठ चमर सफेद ।
 निरखत भविजनका हरे, भव अनेक का खेद ॥ १७ ॥
 तरु अशोक तुव हरत है, भवि जीवनका शोक ।
 आकुलता कुल भेटिके, करै निराकुल लोक ॥ १८ ॥
 अन्तर बाहिर परिग्रह, त्यागो सकल समाज ।
 सिंहासन पर रहत हैं, अंतरीक्ष जिनराज ॥ १९ ॥
 जात भई रिपु मोह तैं, यश सूचत है तास ।

देव दुंदुभिके सदा, बाजे बजे अकाश ॥ १० ॥

विन अक्षर इच्छा रहित, रुचिर दिव्यध्वनि होय ।

सुन नर पशु समक्षें सवै, संशय रहे न कोय ॥ ११ ॥

वरसत सुर तरुके कुसुम, गुंजत अलि चहुंओर ।

फैलत सुयश सुवासना, हरषत भवि सब ठौर ॥ १२ ॥

समुंद वाघ अरु रोग अहि, अर्गल बंधु संग्राम ।

विघ्न विषम सब ही टेरै, सुमरत ही जिन नाम ॥ १३ ॥

श्रीपाल चंडाल पुनि, अंजन मील कुमार ।

हाथी हरि अहि सब तरे, आज हमारी वार ॥ १४ ॥

बुधजन यह विनती करै, हाथ जोड़ शिर नाय ।

जबलों शिव नहिं रहे तुव, भक्ति हृदय अधिकाय ॥ १५ ॥

बीतराग सर्वज्ञ अरु, हितोपदेशक नाथ ।

दोष नहीं छयालीस प्रभु, तुम्हें नमाऊं माथ ॥ १ ॥

दीन दयाल दयानिधि स्वामिन् भक्तिनिको दुखहारि तुही है । तू सब ज्ञायक लोक अलोक रु ज्ञान प्रकाशनहार तुही है ॥

तू भविकंज निकाशन भानु भवोदधि तारनहार तुही है ।

“मूल” तुही शिव मारग साधन आपति नाशनहार तुही है ॥ २ ॥

कवित्त-जीवन अनित्य अरु लक्ष्मी है चंचल रु यौवन
अथिर एक छिनमें विलायगो । याहि पाय रे अज्ञान कैर काहे
अभिमान धर्म हिय धार नहिं सर्व व्यर्थ जायगो ॥ कर कछु
उपकार जगतमें थेही सार मौका यह बार बार हाथ नहिं
आयगो । प्रेम हिय धार अरु सत्यका प्रचार कर दया “मूल”
धार नहिं पीछे पछतायगो ॥

(७) अकलंक स्तोत्रम् ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितम् ।
 साक्षाद्येन यथा स्वयं करत्तले रेखात्रयं सांगुलि ॥
 रागद्वेषभयामयान्तकनरालोलत्वलोभादयो ।
 नालं यत्पदलङ्घनाय स महादेवो मया बन्धते ॥१॥
 दग्धं येन पुर त्रयं शरमुवा तीव्राग्निषा बन्धिना ।
 यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्मात्मजो वा गुहः ॥
 सोऽयं किं मम शङ्करो भयतृषारोषांसि मोहक्षयं ।
 कृत्वा यः स तु सर्वं वित्तनुभृतां क्षेमंकरः शङ्करः ॥२॥
 यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्देत्येन्द्रवसः स्थलम् ।
 सारथ्येन धनक्षयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥
 नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमंव्याहृतम् ।
 विश्वं व्याप्य विनृम्भते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥
 उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः ।
 पात्रीदण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिम् ॥
 आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्मा भवेन्मादृशम् ।
 क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥ ४ ॥
 यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन् ।
 कर्त्ता कर्मफलं न मुक्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम् ॥
 यज्ज्ञानं क्षणवार्त्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा ।
 यो ज्ञानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्स बुद्धो मम ॥ ५ ॥
 किं छिन्नलिङ्गो यदि विगन्धमयः शूलपाणिः कथं स्यात् ।

नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मनश्च ॥

आर्द्राजः किन्त्रंजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं ।

संक्षेप्रात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥

ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेश विभ्रान्तचेताः ।

शम्भुः खट्वाङ्गधारी गिरिपतितनया पांगलीलानुविद्धः ॥

विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद्वोपनाथस्य मोहा-

दर्हन्निध्वंस्तरागो जितसकलभयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥ ७ ॥

एको नृत्यति विप्रसार्य कुकुभां चक्रे सहस्रं भुजा-

नेकः शेषभुजंगभोगशयने व्यादाय निद्रायते ॥

दृष्टुं चारु तिलोत्तमासुखमगादेकश्चतुर्वक्रता-

मेते मुक्तिपथं वदन्ति विदुषामित्येतदत्यद्भुतम् ॥ ८ ॥

यो विश्वं वेदवेद्यं जननजलनिधेर्भञ्जिनः पारदृश्वा-

पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् ।

तं वन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषाद्विषंतं-

बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ९ ॥

माया नास्ति जटाकपालमुकुटं चन्द्रो न मूर्द्धावली ।

खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रं मुखं ॥

कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः ।

सोऽस्मान्पातुनिरंजनो जिनपतिः सर्वत्रसूक्ष्मः शिवः ॥ १० ॥

नो ब्रह्मांकित भूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं ।

नो चन्द्रार्ककराङ्कितं सुरपतेर्वज्राङ्कितं नैव च ॥

षड्बक्राङ्कित बौद्धदेवं हतमुग्धक्षोरगैर्नाङ्कितं ।

नभनं पश्यत वादिनो जगादिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितं ॥ ११ ॥

(७) अकलंक स्तोत्रम् ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितम् ।
 साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुष्ठि ॥
 रागाद्वेषभयामयान्तकनरालोलत्वलोभादयो ।
 नालं यत्पदलङ्घनाय स महादेवो मया बन्धते ॥१॥
 दग्धं येन पुर त्रयं शरभुवा तीव्रार्चिषा बन्धिना ।
 यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्मात्मनो वा गुहः ॥
 सोऽयं किं मम शङ्करो भयतृषारोपात्तिमोहक्षयं ।
 कृत्वा यः स तु सर्वं विचिनुमृतां क्षेमंकरः शङ्करः ॥२॥
 यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्देत्येन्द्रवक्षःस्थलम् ।
 सारथ्येन घनक्षयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥
 नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमंव्याहृतम् ।
 विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥
 उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः ।
 पात्रीदण्डकमण्डलुप्रमृतयो यस्याकृतार्थस्थातिम् ॥
 आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्मा भवेन्मादृशाम् ।
 क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥ ४ ॥
 यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन् ।
 कर्ता कर्मफलं न मुक्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम् ॥
 यज्ज्ञानं क्षणवार्तिं वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा ।
 यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्स बुद्धो मम ॥ ५ ॥
 तः किं छिन्नलिङ्गो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात् ।

नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च ॥

आर्द्राजः किन्तंजन्मा संकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं ।

संक्षेप्रात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥

ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेश विभ्रान्तचेताः ।

शम्भुः खट्वाङ्गधारी गिरिपतितनया पांगलीलानुविद्धः ॥

विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद्गोपनायस्य मोहा-

दर्हन्विध्वंस्तरागो जितसकलभयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥ ७ ॥

एको नृत्यति विप्रसार्य कुकुंभां चक्रे सहस्रं मुजा-

नेकः शेषमुजंगभोगशयने व्यादाय निद्रायते ॥

दृष्टुं चारु तिलोत्तमामुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता-

मेते मुक्तिपथं वदन्ति विदुषामित्येतदत्यद्भुतम् ॥ ८ ॥

यो विश्वं वेदवेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा-

पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् ।

तं वन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषाद्विषतं-

बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ९ ॥

माया नास्ति जटाकपालमुकुटं चन्द्रो न मूर्द्धावली ।

खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रं मुखं ॥

कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः ।

सोऽस्मान्पातुनिरंजनो जिनपतिः सर्वत्रसूक्ष्मः शिवः ॥ १० ॥

नो ब्रह्मांकित मूलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं ।

नो चन्द्रार्ककराङ्कितं सुरपतेर्वज्राङ्कितं नैव च ॥

षड्बक्राङ्कित बौद्धदेव हतमुग्यक्षोरगैर्नाङ्कितं ।

नगं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितं ॥ ११ ॥

मौजीदण्डकमण्डलुप्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो ।
 रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कोपीन खट्वांगनाः ॥
 विष्णोश्चक्रगदादिशङ्खमकुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं ।
 नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितम् ॥ १२ ॥
 नाहङ्कारवशी कृतेन मनसा ना द्वेषिणा केवलं,
 नैरात्म्यं प्रातिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया ।
 राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो,
 बौद्धौघान्सकलान्विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः ॥ १३ ॥
 खट्वाङ्गं नैव हस्ते न च हृदि रचितालम्बते मुण्डमाला,
 भस्माङ्गं नैवशूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं ।
 चन्द्रार्द्धं नैव मूर्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः,
 तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं ॥ १४ ॥
 किं वाचो भगवानभेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ,
 काले यो जनतासुधर्म निहितो देवोऽकलङ्को जिनः ।
 यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरी जालेऽप्रमेयाकुला,
 निर्मग्ना तनुतेतरां भगवती ताराशिरः कम्पनम् ॥ १५ ॥
 सा तारा खलु देवता भगवती मन्यापि मन्यामहे,
 पण्मासावधि जाड्य सांख्य भगवद्भट्टाकलंकप्रभोः ।
 वा कल्लोल परम्पराभिरमते नूनं मनो मज्जन
 व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः सन्ताडितेतस्ततः ॥ १६ ॥

॥ इति श्री अकलङ्कस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

श्रीकाविवरभागचन्द्रजीकृत—

[८] महावीरराष्ट्रकस्तोत्र ।

(पं० बुद्धलालजीकृत भाषा छन्द सहित)

यदीये चैतन्ये, मुकुर इव भावाश्रिदचितः ।

समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसन्तोऽन्तरहिताः ॥

जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो ।

महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥

चेतन अचेतन तत्त्व जेते, हैं अनन्त जहानमें ।

उत्पाद व्यय ध्रुवमय मुकुरवत्, लसत जाके ज्ञानमें ॥

जो जगतदरशी जगतमें सन्-मार्ग दर्शक रवि मनो ।

ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥ १ ॥

अताम्रं यच्चक्षुः, कमलयुगलं स्पंदरहितं ।

जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ॥

स्फुटं मूर्त्तियस्य प्रशमितमयी वातिविमला ।

महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥२॥

टिमिकार विन जुग कमल लोचन, ललिमार्ते रहित हैं ।

बाह्य अंतरकी क्षमाको, भविजनोंसे कहत हैं ॥

अति परम पावन शांति मुद्रा, जासु तन उज्ज्वल घनो ।

ते वीरस्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ २ ॥

नमन्नाकेंद्रालीमुकुटमणिभाजालजटिलं ।

लसत्पादाभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां ॥

भवज्बालाशान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि ।

महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥३॥

जिहि स्वर्गवासी विपुल सुरपति, नम्रतन है नमत हैं ।

तिन मुकुटमाणिके प्रभामंडल, पद्मपदमें लसत हैं ॥

जिन मात्र सुमरनरूप जलसे, हनै भव आतप धनो ।

ते वीर स्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ ३ ॥

यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह ।

क्षणादासीत्स्वर्गी, गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥

लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा ?

महावीरस्वामी, नयनपथगामी भवतु मे (नः) ४

मन मुदित है मंडूकने, प्रभु-पूजवे मनशाकरी ।

तत् छन लही सुर संपदा, बहु रिद्धि गुण निधिसौ भरी ॥

जिहि भक्तिसौ सद्भक्त जन लहै, मुक्तिपुरकौ सुख धनो ।

ते वीर स्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ ४ ॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिबद्धो ।

विचित्रात्माप्येको, नृपतिवरसिद्ध्यर्थतनयः ॥

अजन्मापि श्रीमान्, विगतभवरागोद्भुतगतिर् ।

महावीरस्वामी, नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥५॥

कंचन तपतवत ज्ञाननिधि हैं, तदपि तनवर्जित रहैं ।

जो हैं अनेक तथापि इक, सिद्ध्यर्थसुत भवरहित हैं ॥

जो वीतरागी गति रहित हैं, तदपि अदभुत गतिपनो ।

ते वीरस्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ ५ ॥

यदीया वारंगंगा, विविधनयकल्लोलविमलं ।

वृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥

इदानीमप्येषा, बुधजनमरालैः परिचिता ।
महावीरस्वामी, नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥६॥

जिनकी वचन मय अमल सुर सारि, विविधनय लहरैं धरै ।

जो पूर्णज्ञान स्वरूप जलसे, नहन भविजनको करै ॥

तामें अनौं लगि घने पंडित, हंसही सोहत मनो ।

ते वीर स्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ ६ ॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः ।

कुमारावस्थाया-मपि निजबलाद्येन विजितः ॥

स्फुरन्नित्यानन्दप्रशमपदराज्याय स जिनः ।

महावीरस्वामी, नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥७॥

जाने जगतकी जंतु जानिता, करी खवश तमाम है ।

है वेग जाको अमिट ऐसो, विकट अतिमट काम है ॥

ताकों स्वबलसे प्रौढवयमें, शान्ति शासन हित हनो ।

ते वीरस्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ ७ ॥

महामोहातङ्क-प्रशमनपराकस्मिकभिषग् ।

निरापेक्षो बंधुर्विदितमहिमामङ्गलकरः ॥

शरण्यः साधूनाम्, भवभयभृतामुत्तमगुणो ।

महावीरस्वामी, नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥८॥

भयभीत भवतैं साधु जनकों, शरण उत्तम गुण भरे ।

निःस्वार्थके ही जगत बांधव, विदितयश मंगल करे ॥

जो मोहरूपी रोग हनिवे, वैद्यवर अद्भुत मनो ।

ते वीर स्वामीजी हमारे, नयनपथगामी बनो ॥ ८ ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतम् ।

यः पठेच्छृणुयाच्चापि, स याति परमां गतिं ॥

दोहा-महावीर अष्टक रच्यो, भागचन्द रुचि ठान ।

पढ़ै सुनै जे भावसों, ते पावै निरवान ॥

प्रार्थना-भागचन्द पंडित महा, कियो ग्रन्थ गंभीर ।

मैं मतिमिते भाषा करी, शोधो सुधी सुधीर ॥ १ ॥



श्रीयुत्त पंडित दौलतरामजी कृत-

(९) छुःछुःछुःछुः ।

सारेठा-तीन सुवनमें सार, वीतराग विज्ञानता ।

शिवस्वरूप शिवकार. नमहुँ त्रियोग संहारिके ॥

प्रथमढाल । चौपाई छन्द १५ मात्रा ।

जे त्रिसुवनमें जीव अनन्त । सुख चाहै दुखतें भयवन्त ।

तार्ते दुखहारी सुखकार । कहैं सीख गुरु करुणाधार ॥१॥

ताहि सुना भवि मन धिर आन । जो चाहो अपनो कल्याण ।

मोह महा मद पियो अनादि । मूल आपको भरमत वादि ॥२॥

तास अमणकी है बहु कथा । पै कलु कहूं कही मुनि यथा ॥

काल अनन्त निगोद मँझार । बीतो एकेन्द्री तन धार ॥३॥

एक श्वासमें अठदशवार । जन्मो मरो मरो दुख मार ॥

निकसं भूमि जल पावक भयो । पवन प्रत्येक वनस्पति थयो ॥४॥

दुर्लभ लहि ज्यों चिंतामणी । त्यों पर्याय लही त्रस तंणी ॥

लट पिपील अलि आदि शरीर । धरंधर मरो सही बहुपीर ॥५॥
 कबहूँ पंचेंद्रिय पशु भयो । मन बिन निपट अज्ञानी थयो ॥
 सिंहादिक सेनी है कूर । निबल पशू हत खाए भूर ॥६॥
 कबहूँ आप भयो बलहीन । सबलनकर खायो अति दीन ॥
 छेदन भेदन भूख प्यास । भार वहन हिम आतप त्रास ॥७॥
 वध बंधन आदिक दुख घनै । कोट जीमकर जात न मनै ॥
 अतिसंक्लेश भावतें मरो । घोर शुभ्र सागरमें परो ॥ ८ ॥
 तहाँ भूमि परसत दुख इसो । बीछू सहस डसे नहिं तिसो ॥
 तहाँ राघ श्रोणित बाहिनी । क्रमि कुल कलित देह दाहिनी ॥९॥
 सेमरतरु जुत दल असिपत्र । असि ज्यों देह विदारें तत्र ॥
 मेरुसमान लोह गलिजाय । ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ १० ॥
 तिल तिल करैं देहके खंड । असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचंड ॥
 सिंधु नीरतें प्यास न जाय । तो पण एक न बूंद लहाय ॥११॥
 तीन लोकको नाज जो खाय । मिटै न भूख कणा न लहाय ॥
 ये दुख बहु सागरलों सँढे । कर्मयोगतें नरगति लहै ॥ १२ ॥
 जननी उदर वसो नवमास, अंग सकुचतें पाई त्रास ॥
 निकसत अे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर ॥१३॥
 बालपनेमें ज्ञान न लह्यो । तरुण समय तरुणी रत रह्यो ॥
 अर्द्धमृतक सम बूढ़ापनो । कैसे रूपलखै आपनो ॥ १४ ॥
 कभी अकामनिर्जरा करै । भवनत्रिकमें सुर-तन घरै ॥
 विषय-चाह-दावानल दह्यो । मरत विलाप करत दुःख सह्यो ॥१५॥
 जो विमानवासी हू थाय । सम्यक्दशनविन दुख पाय ॥
 तहँते चय थावर तन घेर । यों परिवर्तन पूरे करै ॥ १६ ॥

द्वितीय ढाल-पद्धरीछिंद १५ मात्रा ।

ऐसे मिथ्या ह्य ज्ञान चर्ण । वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण ॥
 तातें इनको तजिये सुजान । सुन तिन संक्षेप कहूं बखान ॥१॥
 जीवादि प्रयोजनभूततत्त्व । सरधै तिन मांहि विपर्ययत्व ॥
 चेतनको है उपयोग रूप । बिन मूरति चिन्मूरति अनूप ॥
 पुद्गल नम धर्म अघर्म काल । इनतैं न्यारी है जीवचाल ॥
 ताकूं न जान विपरीति मान । करि करै देहमें निजपिछान ॥२॥
 मैं सुखी दुखी मैं रंक राव । मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥
 मेरे सुत तिय मैं सबल दीन । देखूप सुभग मूरख प्रवीन ॥३॥
 तन उपजत अपनी उपजजान । तन नशत आपको नाश मान ।
 रागादि प्रगट ये दुःख दैन । तिनहीको सेवत गिनत चैन ॥४॥
 शुभ अशुभ बंधके फल मंझार । रति अरति करे निजपद बिसार ।
 आत्म हित हेतु विराग ज्ञान । ते लखे आपकूं कष्ट दान ॥५॥
 रोके न चाह निज शक्ति खोय । शिवरूप निराकुलता न जोय ।
 याही प्रतीतियुत कलुक ज्ञान । सो दुखदायक अज्ञान जान ॥६॥
 इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त । ताकूं जानो मिथ्याचरित्त ॥
 यो मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह । अब जे गृहीत सुनिये सुतेह । ८॥
 जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव । पोखैं चिर दर्शन मोह एव ॥
 अन्तर रागादिक धरैं जेह । बाहर धन अवरतैं सनेह ॥९॥
 धरैं कुलिंग लहि महत भाव । ते कुगुरु जन्म जल उपलनाव ।
 जे रागद्वेष मलकर मलीन । वनिता गदादिजुत चिन्ह चीन्ह ॥१०॥
 तेहैं कुदेव तिनकी जु सेव । शठ करत न तिन भवभ्रमणछेव ।
 रागादिभाव हिंसा समेत । दर्भित त्रसथावर मरण खेत ॥११॥

जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म । सिन सरघै जीव लहे अशर्म ।
 याकूं गृहीत मिथ्यात् जान । अब सुन ग्रहीत जो है अजान ॥ १२
 एकांत बाद-दूषित समस्त । विषयादिक पोशक अप्रशस्त ॥ .
 कपिलादिरचित श्रुतका अभ्यास । सौहै कुबोध बहु देन त्रास ॥ १३
 जो ख्याति राम पूजादि चाह । घर करन विविध विधदेहदाह ।
 आतम अनात्मके ज्ञान हीन । जे जे करनी तन करन छीन ॥ १४
 ते सब मिथ्या चारित्र त्याग । अब आतमके हित-पंथ लाग ॥
 जगजाल भ्रमणको देय त्याग । अब दौलत निजआतमसु पाग ॥ १५

तृतीय ढाल । नरेन्द्रछन्द २८ मात्रा ।

आतमको हित है सुख सो सुख, आकुलता विन कहिये ।
 आकुलता शिवमांहि न तातैं, शिवमग लाग्यो चाहिये ।
 सम्यक्दर्शन ज्ञान चरन शिव-मग सो दुविधि विचारो ॥
 जो सत्यारथरूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥ १॥
 परद्रव्यनतैं भिन्न आप मैं, रुचि सम्यक्त भला है ।
 आप रूपको जानपनो सो, सम्यकज्ञान कला है ॥
 आपरूपमें लीन रहे थिर, सम्यकचारित सोई ।
 अब विवहार मोख-मग सुनिये, हेतु नियतको होई ॥ २॥
 जीव अजीव तत्व अरु आश्रव, बंधरु संवर जानो ।
 निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्योंको त्यों सरधानो ॥
 है सोई समाकित विवहारी, अब इनरूप बखानो ।
 तिनको सुन सामान्य विशेष, दिङ् प्रतीति उर आनो ॥ ३॥
 बहिरांतम अन्तर आतम पर-मातम जीव त्रिधा है ।
 देह जीवको एक गिने बहि, -रातम तत्व मुधा है ॥

उत्तम मध्यम जघन त्रिविधिके, अन्तरआत्म ज्ञानी ।
 द्विविधि संग विन शुभ उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥
 मध्यम अन्तर आत्म हैं जे, देशव्रती आगारी ।
 जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिवमगचारी ॥
 सकल निकल परमात्म द्वैविधि, तिनमें घाति निचारी ।
 श्री अरहंत सकल परमात्म, लोकालोक निहारी ॥ ५ ॥
 ज्ञानशरीरी त्रिविधकर्ममल, वर्जित सिद्ध महंता ।
 ते हैं निकल अमल परमात्म, भोगें शर्म अनन्ता ॥
 बहिरात्मता हेय जानि तजि, अन्तरआत्म हूजे ।
 परमात्मको ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजे ॥ ६ ॥
 चेतनता विन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं ।
 पुद्गल पंचवरण रस गंध दो, फरसवसू जाके हैं ॥
 जिय पुद्गलको चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी ।
 तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन विन मूर्ति निरूपी ॥ ७ ॥
 सकलद्रव्यको वास जासैं, सो आकाश पिछानो ।
 नियत वर्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमानो ॥
 यों अजीव अब आश्रय सुनिये, मन वच काय त्रियोगा ।
 मिथ्या अविरत अरु कषाय पर-भाद सहित उपयोगा ॥ ८ ॥
 ये ही आत्म-दुःखकारण, ताँ इन्हें तो तजिये ।
 जीव प्रदेश-विधिसों सो वंघन कबहुँ न सजिये ॥
 शमदमैं जो कर्म न आवैं, सो संवर आदरिये ।
 तप बलैं विधि शरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥ ९ ॥
 सकलकर्मैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी ।

इडिबिधि जो सरथा तत्त्वकी, सो समकित व्यवहारी ॥
 देव जिनेन्द्र गुरु परिग्रह विन, धर्मदयायुत सारो ।
 यह मान समकितको कारण, अष्ट अङ्ग जुत धारो ॥ १० ॥
 बसुमद टारि निवारि त्रिशठता, षट् अनायतन त्यागो ।
 शंकादिक बसु दोष विना सं-वेगादिक चित पागो ॥
 अष्टअङ्ग अरु दोष पचीसों, अब संक्षेप कहिये ।
 विन जाने तैं दोष गुणनको, कैसे तजिये गहिये ॥ ११ ॥
 जिन बचमें शंका न धार वृष, भवसुख वांछा भानै ।
 मुनितन देख मलिन न धिनावै, तत्त्वकुतत्त्व पिछानै ॥
 निजगुण अरु पर औगुण ढाँकै, वा निजधर्म बढ़ावै ।
 कामादिक कर वृषतैं चिगते, निज परको सु दिद्रावै ॥ १२ ॥
 धर्मीसों गौ वच्छ प्रीति सम, कर जिन धर्म दिपावै ।
 इन गुणतैं विपरीत दोष बसु तिनको सतत खिपावै ॥
 पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
 मद न रूपको मद न ज्ञानको, धनबलको मद भानै ॥ १३ ॥
 तपको मद न मद प्रभुताको, करे न सो निज जानै ।
 मद धारै तो यही दोष बसु, समकितकुं मल ठानै ॥
 कुगुरु कुदेव कुवृष सेवककी, नहिं प्रशंस उचरे है ।
 जिन मुनि जिन श्रुति विन कुगुरादिक, तिन्हें न नमन करे है ॥
 दोष रहित गुण सहित सुधी जे, सम्यक्दर्श सजे हैं ।
 चरित मोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ नजे हैं ॥
 गेही पै गृहमें न रचै ज्यों, जलमें भिन्न कमल है ।
 नगरनारिको प्रार यथा कां-देमें हेम अमल है ॥ १४ ॥

प्रथम नरक विन धन ज्योतिष, वान मवन सब नारी ।
 यावर विकलत्रय पशुमें नहिं, उपजत सन्यकवारी ॥
 तीनलोक तिहुँकाल मांहि नहिं, दर्शन सो मुक्तकारी ।
 सकल धरनको मूल यही इस, विनकरणी दुस्तकारी ॥ १६ ॥
 नोझनहलकी परयन सीढ़ी, या विन ज्ञान चरित्रा ।
 सन्यकता न लई, सो दर्शन, धारो मव्य पवित्रा ॥
 दौल समझ मुन चेत सयाने, काल वृथा मत्त सोर्व ।
 यह नरमव फिर मिलन कठिन है, जो सन्यक नहिं होवै ॥

चतुर्थ ढाल ।

दोहा—सन्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेबहु सन्यकज्ञान ।
 स्वपर अर्थ बहु धर्मयुत, जा प्रगटवन यान ॥

रोलाछन्दः २४ मात्रा ।

सन्यक साथे ज्ञान, होय पै भिन्न अरावो ।
 लक्षण श्रद्धा जान, दुहुमें भेद अबावो ॥
 सन्यक कारण जान, ज्ञान कारज है सोई ।
 युगपत होतेहु . प्रकाश दीपित होई ॥ १ ॥
 तास भेद दो हैं, परोक्ष परतत्त तिन माही ।
 नति श्रुत दाय परोक्ष, अज्ञ मनतै उपजाही ॥
 अवधिज्ञान मनस्वर्यय, दो हैं देवप्रत्यक्षा ।
 द्रव्यदेव परिमाण, लिये जानै जिय स्वच्छा ॥ २ ॥
 सकल द्रव्यके गुण, अनंत पर्याय अनन्ता ।
 जानै ऐकै काल, प्रगट केवलि मगवन्ता ॥
 ज्ञान समान न आन, जगतनें मुक्तको कारण ।

इहि परमामृत जन्म, जरामृत रोग-निवारण ॥ १ ॥
 कोटि जन्म तप तपे, ज्ञानविन कर्म झरे जे ।
 ज्ञानीके छिनमें त्रिगुणिते सहज टरे ते ॥
 मुनिव्रत धार अनंतवार श्रीचक्र उपजायो ।
 पै निज आत्म-ज्ञान-विना सुख लेश न पायो ॥ ४ ॥
 ताते जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै ।
 संशय विभ्रम मोह, त्याग आपो लख लीजै ॥
 यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनवो जिन बानी ।
 इह विधि गये न मिलै, सुमनि ज्यों उदधि समानी ॥ ९ ॥
 धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै ।
 ज्ञान आपकी रूप भये, फिर अचल रहवै ॥
 तास ज्ञानको कारण, स्वपर विवेक बखानो ।
 कोटि उपाय बनाय भव्य ताको उर आनो ॥ ६ ॥
 जे पूरव शिव गए, जाहिं अब आगे भैहैं ।
 सो सब महिमा ज्ञान-तणी मुनिनाथ कहे हैं ॥
 विषय चाह-दवदाह, जगत जन अरन दझावै ।
 तास उपाय न आन, ज्ञानधन-धान बुझावै ॥ ७ ॥
 पुण्य पाप फल माहि, हरष विलखो मत भाई ।
 यह पुद्गल पर्याय, उपाजे विनशै फिर थाई ॥
 लाख बातकी बान, यही निश्चय उर लावो ।
 तोरि सकल जगदद-फंद नित आत्म ध्यावो ॥ ८ ॥
 सम्यग्ज्ञानी होय, बहुरि दृढ़ चारित लीजै ।
 एकदेश अरु सकलदेश, तसु भेद कहीजै ॥

त्रसहिंसाको त्याग, व्रथा थावर न संघारे ।
 परवधकार कठोर निन्द्य, नहिं बयन उच्यै ॥ ९ ॥
 जलमृतका विन और, जाहिं कछु गहै अदचा ।
 निज बनिता विन और, नारिसौ रहै विरत्ता ॥
 अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै ।
 दस दिश गगन प्रमाण ठान, तसु सीम न जाखै ॥
 ताहूमें फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा ।
 गमनागमन प्रमाण ठान, अन सकल निवारा ॥
 काहूकी धन हानि, किंसी जय हार न चितै ।
 देय न सो उपदेश, होय अघ वनज कृपातै ॥ ११ ॥
 कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
 असि धनु हल हिंसोप-करण नहिं दे यश लाधै ॥
 राग द्वेष करतार, कथा कवहूँ न सुनीजे ।
 औरहु अनरथ दंड, हेतु अव तिन्है न कीजे ॥ १२ ॥
 धर उर समताभाव, सदा सामायिक करिये ।
 पर्व चतुष्टै मांहि, पाप तज प्रोषध धरिये ॥
 भोग और उपभोग, नियमकर ममत निवारै ।
 मुनिको भोजन देय, फेर निज करहि अहारै ॥ १३ ॥
 चारह व्रतके अतीचार, पन पन न लगावै ।
 मरण सैम संन्यास, धार तसु दोष नशावै ॥
 यो श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै ।
 तहँते चय नर जन्म, पाय मुनि हो शिव जावै ॥ १४ ॥

पंचमहाल । चाल छन्द १४ मात्रा ।

मुनि सकल व्रती बड़ भागी । भवभोगनते वैरागी ॥
 वैराग्य उपावन भाई । चित्त अनुप्रेक्षा भाई ॥ १ ॥
 तित्त चिन्तत समसुख जागे, निम ज्वलन पवनके लागे ॥
 जब ही निय आतम जानै । तबही निय शिवसुख ठानै ॥ २ ॥
 जोत्तन गृह गो धन नारी । हय गय जन आज्ञाकारी ॥
 इन्द्रिय भोग छिन थाई । सुरधनु चपला चपलाई ॥ ३ ॥
 सुर असुर खगाधिप जेते । मृग ज्यों हरि काल दले ते ।
 मणिमंत्र तंत्र बहु होई । मरते न बचावै कोई ॥ ४ ॥
 चहुंगति दुख जीव भरे हैं । परवर्तन पंच करे हैं ।
 सब विधि संसार अंसारा । तामे सुख नाहिं लगारा ॥ ५ ॥
 शुभ अशुभ करम फल जेते । भोगे निय एकहि तेते ॥
 सुत दारा होय न सीरी । सब स्वारथके हैं भीरी ॥ ६ ॥
 जलपय ज्यों जियतन मेला । पै भिन्न २ नहिं मेला ॥
 जो प्रगट जुदे धन धामा । क्यों हों इक मिल सुत रामा ॥ ७ ॥
 फल रुधिर राध मल थैली । कीसस बसादितैं मैली ॥
 नव द्वार बहैं घिनकारी । अस देह करे किम यारी ॥ ८ ॥
 जो योगनकी चपलाई । तातैं है आश्रव भाई ॥
 आश्रव दुखकार घनेरे । बुद्धिबंत तिन्हें निरबेरे ॥ ९ ॥
 निज पुण्य पाप नहिं क्रीना । आतम अनुभव चित दीना ॥
 तिनही विधि आवत रोके । संवर लहि सुख अवलोके ॥ १० ॥
 निज काल पाय विधि झरना । तासों निजकाज न सरना ॥
 तप करि जो कर्म खपावै । सोई शिवसुख दरसावै ॥ ११ ॥

किन्हु न करो न धरै को । पद द्रव्यमयी न हँरै को ॥
 सो लेंकमाहि विन समता । दुख सहै जीव नित भ्रमता ॥
 अंतिम ग्रीवकलौकी हृद । पायो अनंत विरियां पद ॥
 पर सम्यक्ज्ञान न लाधौ । दुर्लभ निजमें मुनि साधौ ॥ १३ ॥
 जो भाव मोहते न्यारे । दृग्ज्ञान व्रतादिक सारे ॥
 सो धर्म जबै जिय धरै । तबही मुख अंचल निहारै ॥ १४ ॥
 सो धर्म मुनिनकरि धरिये । तिनकी करतूति उचरिये ॥
 ताकूं सुनिये भवि प्राणी । अपनी अनुमति पिछानी ॥ १५ ॥

अथ षष्ठम ढाल । हरिगीता छंद २८ मात्रा ।
 पद कायि जीव न हननै सव, विष दरवहिसा । दरी ॥
 रागादि भाव निवारतैं, हिंसा न भावित । अवतरी ॥
 जिनके न लेश मृषा न जल मृण, ह्य विना दीयो गहैं ।
 अठदशसहस विधि शीलधर, चिद्वत्समें नित रमि रहैं ॥ १ ॥
 अंतर चतुर्दश भेद वाहर, संग दृशघातिं टलैं ।
 परमाद तजि चौकर मही लाखि, समिति ईर्यातिं चलैं ॥ २ ॥
 जग सुहितकर सव अहितहर, श्रुति सुखद सब सँशय हरै ।
 अम रोग हर जिनके वचन सुख, चंद्रतैं अमृत झरै ॥ ३ ॥
 छयालीस दोष विना मुकुल, श्रावक तणे घर अशनको ।
 लैं तप ब्रह्मवन हेत नहिं तन, पोषते तन रसनको ॥
 शुचि ज्ञान समय उपकरण लखि—के गहैं लखिके धरैं ।
 निर्जंतु थान विलोक तन मल, मूत्र श्लेष्मं परिहरैं ॥ ४ ॥
 सम्यक्प्रकार निरोध मन वच, काय आतम ध्यावते ।

तिन सुधिर मुद्रा देखि मृगगण, उपरु खान खुजावते ॥
 रस, रूप, गंध तथा परस अरु, शब्द शुभ असुहावने ।
 तिनमें न राग विरोध पंचेंद्रियजयन पद पावने ॥ ४ ॥
 समता सम्हारै थुति उचारै वन्दना जिन देवको ।
 नित करै श्रुति रति करै प्रतिक्रम, तमें तन अहमेवको ॥
 जिनके न न्हौन न दंतधावन, लेश अंवर आवरण ।
 भूमाहि पिछली रयनिमें कछु, शयन एकासन करण ॥ ५ ॥
 इकवार लेत आहार, दिनमें, खड़े अल्प निज पानमें ।
 कज्जलेंच करत न डरत परिपह, सों लगे निज ध्यानमें ॥
 अरि मित्र महल मसान कंचन, काच निन्दन थुतिकरण ।
 अर्धावतारण असि प्रहारण—में सदा समताधरण ॥ ६ ॥
 तप तपे द्वादश धरें, वृष दश, रत्नत्रय सेवें सदा ।
 मुनि साथमें वा एक विचरै, चहै नहिं भवसुख कदा ॥
 यौ है सकल संयम चरित मुनि—ये स्वरूपाचरण अब ।
 जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै परकी प्रवृत्ति सब ॥ ७ ॥
 जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डार अंतर भेदिया ।
 वरणादि अरु रागादि तैं, निज भावको न्यारा किया ॥
 निजमाहि निजके हेत निजकर, आपको आपैं गह्यो ।
 गुणगुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मझार कुछ भेद न रह्यो ॥ ८ ॥
 जहँ ध्यान ध्याता ध्येयको न विकल्प वच भेद न जहाँ ।
 चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहाँ ॥
 तीनों अभिन्न अखिन्न शुद्ध, उपयोगकी निश्चल दशा ।
 प्रगटै जहाँ दृग्ज्ञानब्रह्म ये, तीनषां एकै लशा ॥ ९ ॥

परमाणं नय निक्षेपको न उद्योतं, अनुमं वमं दिवै ।
 दृग-ज्ञान-सुख-बल मय सदा नहिं, आनं भावं जो मो दिखै ॥
 मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनिर्तै ।
 चितपिंड चंड अखंड सुगुण करंड, च्युत पुनि कलनिर्तै ॥१०॥
 यों चिन्त्य निजमें थिर भए तिन, अकथ जो आनन्द लखो ।
 सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिन्द्रके नाहीं कंखो ॥
 तबही शुक्लध्यानाग्नि करि चउ, घातं विधि कानन दखो ।
 सब लख्यो केवलज्ञान करि भवि, लोककों शिवमग कंखो ॥
 पुनि घाति शेष अघात विधि, छिनमार्हि अष्टम भू वसै ।
 वसु कर्म विनसै सुगुण वसु, सम्यक्त आदिक सब लसै ॥
 संसार खार अपार पारा-वार तरि तीरहि गये ।
 आविकार अकल अरूप शुध, चिद्रूप अविनाशी भये ॥११॥
 निजमार्हि लोक अलोक गुण, पर्याय प्रतिबिम्बित थये ।
 रहि हैं अनन्तानन्त काल य, -था तथा शिव परणये ॥
 घनि घन्य हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया ।
 तिनहीं अनादि भ्रमण पंच, प्रकार ताजि वर सुख लिया ॥१२॥
 मुख्योपचार दुमेद यों बढ, मागि रत्नत्रय धरै ।
 अरु धरेंगे ते शिव लहै तिन, सुयशजल-जगमल हरै ॥
 श्मि जानि आलस हानि साहस, ठानि यह सिख आदरो ।
 जबलों न रोग करा गहै तब, लों झटिति निजहित करो ॥१३॥
 यह राग आग दहै सदा ता-तैं समासृत पीजिये ॥
 चिर भजे विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद लीजिये ॥
 कहा स्वयों पर पदमें न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहै ।
 अब दौल होऊ सुखी स्वपद राचि, दावे मत चूको यहै ॥१४॥

दोहा ।

इक नव वसु इक वर्षकी, तीज शुक्ल वैशाख ।
 करथो तत्वउपदेश यह, लखि बुधजनकी भाख ॥१॥
 लघुघी तथा प्रमादते, शब्द अर्थकी भूल ।
 सुधी सुधार पढ़ो सदा, जो पावो भवकूल ॥



[१०] सामायिक पाठ भाष्य ।

(पं० महाचंद्रजीकृत)

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म ।

काल अनंत अम्यो जगमें सहिये दुख भारी । जन्ममरण
 नित किये पापको है अधिकारी ॥ कोटि भवांतरमाहिं मिलन
 दुर्लभ सामायिक । धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक ॥१॥
 हे सर्वज्ञ जिनेश किये जं पाप जु म अब । ते सब मनवचकाय
 योगकी गुप्ति बिना लभ ॥ आप समीप हजूरमाहिं मैं खड़ो खड़ो
 अब । दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुःख देहि जब ॥२॥ क्रोध
 मान मद लोभ मोह मायावश प्राणी । दुःखसहित जे किये दया
 तिनकी नहिं आनी ॥ बिना प्रयोजन एकेंद्रिय बिं ति चउ पंचें-
 द्रिय । आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ॥ ३ ॥
 आपसमें इक ठौर थापि करि जे दुख दीने । पेलि दिये पगतलें
 दाबंकरि प्राण हरीने ॥ आप जगतके जीव जिते तिन सबके
 नायकें । अरजं करौ मैं सुनो दोष मेरो दुखदायक ॥४॥ अंजन
 आदिकं चोर महां घनघोर पापमय । तिनके जे अपराध भये ते

क्षिमा क्षिमा किय ॥ मेरे जे अब दोष भये ते क्षमो दयानिधि ।
यह पड़िकोणो कियो आदि पट्कर्ममाहि विधि ॥ ९ ॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यानकर्म ।

जो प्रमादवश होय विराधे जीव घनेरे । तिनको जो अप-
राध भयो मेरे अघ देरे ॥ सो सब झूठो होहु जगतपतिके परसादै ।
जा प्रसादतैं मिले सर्व सुख दुःख न लाधै ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लेख
दयाकरि हीन महाशठ । किये पाप अति घोर पापमति होय
बिच दुठ ॥ निंदूँ हूँ मैं बारबार निज जियको गरहू । सबविष धर्म
उपाय पाय फिर पापहिं करहूँ ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नरजन्म तथा
श्रावककुल भारी । सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धाधारी ॥
जिनवचनामृतधार समावैतैं जिनवानी । तौहू जीव सहारे धिक्
धिक् धिक् हम जानी ॥ ८ ॥ इंद्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान-
जमा सब । अज्ञानी जिम करै तिसी विधि हिंसक है अब ॥
गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले । ते सब दोष किये निंदूँ
अब मनवच तोले ॥ ९ ॥ आलोचनविषयकी दोष लागे जु घनेरे ।
ते सब दोष विनाश होउ तुमैं जिन मेरे ॥ बारं बार इस मांति
मोह मद दोष कुटिलता । ईर्ष्यादिकतैं भये निंदिये जे भयमीता ॥ १० ॥

अथ तृतीय सामायिक कर्म ।

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है । सब जिय मो सम
समता राखो भाव लग्यो है आर्त रौद्र द्वय ध्यान छाँड़ि
करिहूँ सामायिक । संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बघायक-

॥ ११ ॥ पृथ्वी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति । पंचहि
थावरमाहि तथा त्रस जीव बैसे जित ॥ वे इन्द्रिय तिय चउ पंच-
द्रियमाहि जीव सब । तिनतैं क्षमा कराऊं सुझपर क्षमा करो
अब ॥ ११ ॥ इस अवसरमैं मेरे सब सम कंचन अरु त्रण ।
महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहि सम गण ॥ जामन मरण
समान जानि हम समता कीनी । सामायिकका काल जितै यह
भाव नवीनी ॥ १२ ॥ मेरो है इक तामैं ममता जु कीनौ ॥ और
सबै मम भिन्न जानि समतारस भीनौ ॥ मात पिता सुत बंधु मित्र
तिय आदि सबै यह । मोतैं न्यारे जानि जथारथरूप कछो गह
॥ १३ ॥ मैं अनादि जगजालमाहि फंस रूप न जाण्यो एकेंद्रिय
दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो ॥ ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह
अरजी । भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो कर मरजी । १५ ॥

अथ चतुर्थ स्तवनकर्म ।

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्मकों । संभव
भवदुखहरण करण अभिनन्द शर्मकों ॥ सुमति सुमतिदातार तार
भवसिंधु पारकर । पद्मप्रसु पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥ १६ ॥
श्रीसुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्ध कर । श्रीचंद्रप्रभ
चंद्रकांतिसम देहकांति धर ॥ पुष्पदत्त दमि दोषकोश भविष्य
रोषहर । शीतल शीतल करन हरन भवताप दोषहर ॥ १७ ॥
श्रेयरूप जिन श्रेय घेय नित सेय भव्यजन । वासुपूज्य शतपूज्य
वासवादिक भवभय हन ॥ विमल विमलमतिदैव अंतगत हैं अनंत
जिन । धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांतिविधायिन ॥ १८ ॥

कुंथ कुंथमुखनीवपाळ अरनाथ जाळ हर । मळि मळसम मोहमळ
 मारण प्रचार धर ॥ मुनिमुव्रत व्रतकरण नमत सुरसंधहि नमि
 जिन । नेमिनाथ नेमि धर्मरथ माहि ज्ञान धन ॥ १९ ॥
 पार्श्वनीथ जिन पार्श्वउपलंसम मोक्षरमापति । बद्धमान जिन नमू
 बमू भवदुःख कर्मकृत ॥ याविष में जिनसंघरूप चंडवीस संख्येधर ।
 खळं नमू हूं चार चार बंदौ शिवमुखकर ॥ २० ॥

अथ पंचम वंदनाकर्म ।

बंदूं में जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति । बद्धमान
 अतिवीर बंदिहो मनवचतनकृत ॥ त्रिशलातनुज महेश धीश
 विद्यापति बंदू । बंदूं नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकटूं ॥ २१ ॥
 सिद्धारथ नृपनन्द ह्रद दुःखदोष मिटावन । दुरित दवानल
 ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन ॥ कुंडलपुर करि जन्म जगतनिय
 आनन्दकारन । वर्ष बहत्तरि आयु पाय सब ही दुःख टारन २२
 सप्तहस्ततनुतुंग मंग कृत जन्म मरण भय । बालंब्रह्ममय ज्ञेय
 हेय आदेय ज्ञानमय ॥ दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीव-
 धन । आप बसे शिवमाहि ताहि बंदौ मनवचतन ॥ २३ ॥
 जाके वंदनथकी दोष दुःख दूरहि जावै । जाके वंदनथकी मुक्ति
 तिय सम्मुख आवै ॥ जाके वंदनथकी वंध होवै सुरगनके । ऐसे
 वीर जिनेश बंदिहूं क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिकं षट्कर्म-
 माहि वंदन यह पंचम । बंदे वीरजिनन्द्र इंद्रशतबंध बंध भंम ॥
 जन्म मरण भय हरो करो अघ शांति शांतिमय । मैं अघकोश
 सुपोष दोषको दोष विनाशिय ॥ २५ ॥

पांचा इंद्रा शिथल भई तब, स्वास शुद्ध नहिं आवै ।
 तापर भी ममता नहिं छोड़े, समता उर नहिं लावै ॥ १७ ॥
 मृत्युराज उपकारी जियको, तनसे तोहि छुड़ावे ।
 नातर या तन बंदीग्रहमें, पड़ापड़ा बिललावे ॥
 पुदगलके परमाणू मिलके, पिंडरूप तन भासी ।
 यही मूर्ती मैं अमूर्ती, ज्ञानजाति गुणखासी ॥ १८ ॥
 रोग शोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्गल लारे ।
 मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे ॥
 या तनसे इस क्षेत्र संबंधी कारण आन बनो है ।
 खान पान दे याको पोषो, अब समभाव ठनो है ॥ १९ ॥
 मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान विन, यह तन अपनो जानो ।
 इंद्रा भोग गिने सुख मैंने, आपो नाहिं पिछानो ॥
 तन विनशनेतें नाश जानि निज, यह अयान दुखदाई ।
 कुटुम आदिको अपनो जानो, मूल अनादी छाई ॥ २० ॥
 अब निज भेद यथारथ समझो, मैं हूं ज्योतिस्वरूपी ।
 उपेज विनश सो यह पुद्गल, जानो याको रूपी ॥
 इष्टनिष्ठ नेते सुखदुख हैं, सो सब पुद्गल संगे ।
 मैं जब अपनो रूप विचारो, तब वे सब दुख भागे ॥ २१ ॥
 विन समता तन नन्त घरे मैं, तिनमें ये दुख पायो ।
 शस्त्रघाततें नन्त बार-बार, नाना योनि भ्रमायो ॥
 चार नन्त ही अग्निमाहिं जर, मूवो सुमति न लायो ।
 सिंह व्याघ्र अहि नन्तवार-मुझ, नाना दुःख दिखायो ॥ २२ ॥
 विन समाधि ये दुःख लहे मैं, अब उर समता आई ।

मृत्युराजको भय नहीं मानो, देव तन सुखदाई ॥
 यातैं जबलग मृत्यु न आवे, तबलग जप तप कीजै ।
 जप तप विन इस जगके माहीं, कोई भी ना सीजै ॥ २३ ॥
 स्वर्ग संपदा तपसे पावे, तपसे कर्म नशावे ।
 तपहीसे शिवकामिनिपति है, यासे तप चित लवे ॥
 अब मैं जानी समता विन मुझ, कोऊ नाहिं सहाई ।
 मात पिता सुत बान्धव तिरिया, ये सब हैं दुखदाई ॥ २४ ॥
 मृत्यु समयमें मोह करें ये, तातैं आरत हो है ।
 आरत तैं गति नीची पावे, यों लख मोह तजो है ॥
 और परिग्रहं जेते जगमें, तिनसे प्रीति न कीजै ।
 परमवमें ये संग न चालें, नाहक आरत कीजै ॥ २५ ॥
 जे जे वस्तु लसत हैं तुझ पर, तिनसे नेह निवारो ।
 परगतिमें ये साथ न चालें, ऐसो भाव विचारो ॥
 जो परभवमें संग चलें तुझ, तिनसे प्रीति सु कीजै ।
 पंच पाप तज समता धारो, दान चार विध दीने ॥ २६ ॥
 दशैक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा चित लवो ।
 षोडशकारण नित्य चिन्तवो, द्वादश भावन भावो ॥
 चारों परबी प्रोषध कीजै, अशन रातको त्यागो ।
 समताधर दुर्भाव निवारो, संयमसुं अनुरागो ॥ २७ ॥
 अन्तसमयमें ये शुभ भावहि, होवें आनि सहाई ।
 स्वर्ग मोक्षफल तोहि दिखावें, ऋद्धि देंय अधिकाई ॥
 खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमें समता लाके ।
 जासेती गति चार दूर कर, वसो मोक्षपुर जाके ॥ २८ ॥

मन थिरता करके तुम चित्तो, चौ आराधन भाई ।
 येही तोकों सुखकी दाता, और हितू कोऊ नाई ॥
 आगे बहु मुनिराज भये हैं तिन गहि थिरता भारी ।
 बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उर धारी ॥ १९ ॥
 तिनमें कछु इक नाम कहूं मैं सो सुन जिय ? चित लोके ।
 भावसाहित अनुमोदै तासैं, दुर्गति होय न जाके ॥
 अरु समता निज उरमें आवै, भाव अधीरज जावे ।
 यों निश दिन नो उन मुनिवरको, ध्यान हिये बिच लावे ॥ २० ॥
 धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसी घोरज धारी ।
 एक झ्यालनी युगवच्चायुत, पांव भखो दुखकारी ॥
 यह उपसर्ग सजो समभावन आराधन उर धारी ।
 तौ तुमर जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥ २१ ॥
 धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो ।
 तौ भी श्रीमुनि नेक डिगे नहिं, आत्मसों हित लायो ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥ २२ ॥
 देखो गजमुनिके सिर ऊपर विप्र अग्निनि बहु वारी ।
 शीस जले जिम लकड़ी तिनको, तौ भी नाहिं चिगारी ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥ २३ ॥
 सनतकुमार मुनीके तनमें, कुष्ठवेदना व्यापी ।
 छिन्न छिन्न तन तासों हूबो, तब चिन्तो गुण आपी ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।

तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥१४॥

श्रेणिकसुत गंगामें डूबो, तब जिननाम चितारे ।

घर सलेखना परिग्रह छाड़ो, शुद्ध भाव उर धारे ॥

यह उपसर्ग सहो घर थिरता आराधन चित धारी ।

तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥१५॥

समंतभद्रमुनिवरके तनमें, क्षुधा वेदना आई ।

ता दुखमें मुनि नेक न डिगियो, चिन्तो निजगुण भाई ॥ ५४

यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।

तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥१६॥

ललितघटादिक तीस दोय मुनि कौशांबीतट जानो ।

नदीमें मुनि वडकर मूवे, सो दुख उन नहि मानो ॥

यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।

तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥१७॥

धर्मघोष मुनि चम्पानगरी बाछ ध्यान घर ठाढ़ो ।

एक मासकी कर मर्यादा तृता दुःख सह गाढ़ो ॥

यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।

तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥१८॥

श्रीदत्तमुनिको पूर्व जन्मको, बैरी देव सु आके ।

विक्रीयकर दुख शीतंतनो सो, सहो साधु मन लाके ॥

यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित धारी ।

तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥१९॥

वृषभसेन मुनि उष्ण शिलापर, ध्यान धरो मनलाई ।

सूर्यधाम अरु उष्ण पवनकी, वेदन सहि अधिकारी ॥

यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित्त धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव वारी ॥४०॥
 अमयघोष मुनि काकंदीपुर, महां वेदना पाई ।
 बैरी चंढेन सब तन छेदो, दुख दीनो अधिकाई ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित्त धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥४१॥
 विद्युत्चरने बहु दुख पायो, तौभी धीर न त्यागी ।
 शुभभावनस प्राण तजे निज, धन्य आर वड्ढमागी ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित्त धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४२ ॥
 पुत्र चिलाती नामा मुनिको, बैरीने तन घातो ।
 मोटे मोटे कीट पड़े तन, तापर निज गुण रातो ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित्त धारी ।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥४३॥
 दण्डक नामा मुनिकी देही, बाणन कर अरि भेदी ।
 तापर नेक ढिगे नहिं वे मुनि, कर्ममहारिपु छेदी ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरता, आराधन चित्त धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥४४॥
 अभिनंदन मुनि आदि पांचसै, घानी पेलि जु मारे ।
 तौ भी श्रीमुनि समताधारी, पूरव कर्म बिचारे ॥
 यह उपसर्ग सहो घर थिरतो, आराधन चित्त धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४५ ॥
 चाणक मुनि गोधरके मांही, मूँद अग्नि परिजालो ।

श्रीगुरु उरु समभां व धारके, अपनो रूप संहारो ॥
 यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४६ ॥
 सात शतक मुनिवरने पायो, हथनापुरमें जानो ।
 बलिब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहीं मानो ॥
 यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४७ ॥
 लोहमयी आमूषण गड़के, तातेकर पहराये ।
 पांचों पाण्डव मुनिके तनमें, तौ भी नाहिं चिगाये ॥
 यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
 तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४८ ॥
 और अनेक भये इस जगमें, समता रसके स्वादी ।
 वे ही हमको हो सुखदाता, हरहैं टेव प्रमादी ॥
 सम्यकदर्शन ज्ञान चरण तप ये, आराधन चारों ।
 ये ही मोकों सुखकी दाता, इन्हैं सदा उर धारों ॥ ४९ ॥
 यों समाधि उरमांही लावो, अपनो हित जो चाहो ।
 तज ममता अरु आठों मदको, ज्योतिस्वरूपी ध्यावो ॥
 जो कोई निज करत पयानो, ग्रामांतरके काजे ।
 सो भी शकुन विचारे नीके, शुभ शुभ कारण साजे ॥ ५० ॥
 मात पितादिक सर्व कुटुमसो, नीके शकुन बनार्वे ।
 हलदी धनिया पुंगी अक्षत, दूध दही फल लोवें ॥
 एक ग्रामके कारण एते, करै शुभाशुभ सारे ।
 जब परगतिको करत पयानो, तब नाहिं सोचे प्यारे ॥ ५१ ॥

सर्व कुटुम जब रोवन लगै, तोहि रुलावै सारे ।
 ये अपशकुन करें सुन तोऊं, तू यों क्यों न विचार ॥
 अब परगतिके चालत बिरियां, धर्मध्यान उर आनो ।
 चारों आराधन आराधो मोह तनो दुखहानो ॥ ११ ॥
 है निःशस्त्र तजो सब दुविधा, आतमराम सुध्यावो ।
 जब परगतिको करहु पयानो, परमतत्व उर लावो ॥
 मोह जालको काट पियारे ! अपनो रूप विचारो ।
 मृत्यु मित्र उपकारी तेरो यों उर निश्चय धारो ॥ १२ ॥
 दोहा-मृत्युमहोत्सव पाठको, पढ़ो सुनो बुधिवान ।
 सगधा धर नित सुख लहो, सूरचन्द शिवथान ॥ १४ ॥
 पंच उभय नव एक नम, सम्बत सो सुखदाय ।
 आश्विन श्यामा सप्तमी, कहो पाठ मनलाय ॥ १५ ॥



(१३) समाधि मरण

(कवि द्यानतरायकृत ।)

गौतमस्वामी वन्दों नामी मरण समाधि भला है ।
 मैं कब पाऊं निशदिन ध्याऊं गाऊं वचन कला है ॥
 देव धरम गुरु प्रीति महा दृढ़ सात व्यसन नहीं जाने ।
 त्याग बाईस अभक्ष संयमी बारहव्रत नित ठाने ॥ १ ॥
 चक्की उखरी चुलि बुहारी पानी त्रस न विराधे ।
 बनिज करे परद्रव्य हरे नहिं छहो कर्म हम सांधे ॥
 पूजा शास्त्र गुरुनकी सवा संयम तप चहुं दानी ।

पर उपकारी अल्प अहारी सामायिक विधि ज्ञानी ॥ १ ॥
 जाप जपे तिहुं योग धरे थिर तनकी समता टारै ।
 अन्त समय वैराग्य सम्हार ध्यान समाधि विचारै ॥
 आग लगे अरु नाव जु डूबे धर्म बिघन जब आवे ।
 चार प्रकार अहार त्यागिके मंत्र सु मनमें ध्यावे ॥ १ ॥
 रोग असाध्य जहां बहु देखे कारण और निहारे ।
 बात बढ़ी है जो बनि आवे भार भवनको ढारे ॥
 जो न बने तो घरमें रहकर सबसों होय निगारे ।
 मात पिता सुत त्रियको सोंपै निज परिग्रह अति काला ॥ ४ ॥
 कछु चैत्यालय कछु श्रावक जन कछु दुखिया धन देई ।
 क्षमा क्षमा सब ही सों कहिये मनकी शल्य हरेई ॥
 शत्रुन सों मिलि निकर जोरे में बहु करी है बुगई ।
 तुमसे प्रीतमको दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥ ५ ॥
 धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे संतोषे ।
 छहों कायके प्राणी ऊपर करुणाभाव विशेषे ॥
 ऊंच नीच घर बैठ जगह इक कछु भोजन कछु पयले ।
 दूषाहारी क्रम क्रम तजिके छाछ अहार गहेले ॥ ६ ॥
 छाछ त्यागिके पानी राखे पानी तजि संथारा ।
 भूममांहि थिर आसन मांडे साधमीं ढिंग प्यारा ॥
 जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवानी पढ़िये ।
 यों कहि मौन लियो संन्यासी पंच परमपद गहिये ॥ ७ ॥
 चौ आराधन मनमें ध्यावे बारह भावें भावे ।
 दशलक्षण मन धर्म विचारै रत्नत्रय मन ल्यावे ॥

पैतिस सोलह षट पन चारों दुइ इक वर्ण विचारै ।
 काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञानमई तूं सारे ॥ ८ ॥
 अजर अमर निज गुण सों पूरे परमानन्द सुभावे ।
 आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावे ॥
 क्षुधा तृषादिक होइ परीषह सहै भाव सम राखै ।
 अतीचार पांचो सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखै ॥ ९ ॥
 हाड मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागे ।
 अदमुत्त पुण्य उपाय सुरगमें सेज उठे ज्यों जागे ॥
 तहँ तैं आवे शिवपद पावे बिलसे सुख अनन्तो ।
 'धानत' यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥ १० ॥

(१४) वैराग्य मावकन ।

(वज्रनाभि चक्रवर्ती कृत)

दोहा-बीज राख फल भोगवे, ज्यों कृषान जगमाहिं ।

त्यों चक्री सुखमें मगन, धर्म विसारै नाहिं ॥

योगीरासा चा नरेन्द्र छन्द ।

इस विधि राज्य करै नर नायक, भोगे पुण्य विशाल ।
 सुख सागरम मग्न निरन्तर, जात न जानो काल ॥ एक दिवस
 शुभ कर्म योगसे, क्षेमंकर मुनि बंदे । देखे श्री गुरुके पद पंकज
 लोचन अलि आनंदे ॥ १ ॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिर नायो, कर
 पूजा स्तुति कीनी । साधु समीप विनयकर बैठो, चरणोंमें दृष्टि
 दीनी ॥ गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागो । राज्य
 रमा वनतादिक जो रस, सो सब नीरस लागो ॥ २ ॥ मुनि सुरज

कथनी किरणाबलि, लगत भर्म बुधि भागी । भव तन भोग
स्वरूप विचारो परम धर्म अनुरागी ॥ या संसार महा वन भीतर,
भर्मत छोर न आवे । जन्मन मरन जरा दव दाहे, जीव महा दुख
पावे ॥ ३ ॥ कवहूँ जाय नरक पद भुंने, छेदन भेदन भारी ।
कवहूँ पशु पर्याय धरे तहां, वध बंधन भयकारी । सुरगतिमें
पर सम्पत्ति देखे, राग उदय दुख होई । मानुष योनि अनेक विपत्ति
मय, सर्व सुखी नहीं कोई ॥ ४ ॥ कोई इष्ट वियोगी विलखे, कोई
अनिष्ट संयोगी । कोई दीन दरिद्री देखे, कोई तनका रोगी ॥
किस ही घर कलिहारी नारी, कै बैरी सम, भाई । किस हीके
दुख बाहर देखे, किसही उर दुचित्ताई ॥ ५ ॥ कोई पुत्र विना
नित झूरे, होई मरे तव रोवै । खोटी संततिसे दुख उपजे, क्यों
प्राणी सुख सोवै ॥ पुण्य उदय जिनके तिनको भी, नाहिं सदा
सुख साता । यह जगवास यथारथ देखे, सबही ह दुखदाता ॥ ६ ॥
॥ ६ ॥ जो संसार विषै सुख हो तो, तीथकर क्यों त्यागे । काहेको
शिव साधन करते, संयमसे अनुरागे ॥ देह अपवान अथि विला-
वनि इसमें सार न कोई । सागरके जलसे शुचि कीजे, तो भी
शुद्ध न होई ॥ ७ ॥ सप्त कुधातु भरी मल मूतर, चर्म लपेटे
सोहै । अन्तर देखत या सम जगमें, और अपावन को है ॥ नव
मलद्वार श्रवै निशि वासर, नाम लिये विन आवे । व्याधि
उपाधि अनेक जहां तहां, कोन सुधी सुख पावे ॥ ८ ॥ पोषत
तो दुख दोष करे अति, सोषत सुख उपजावे । दुर्जन देह स्व-
भाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावे ॥ राचन योग्य स्वरूप न याको
विरचित योग्य सही है । यह तन पाय महान्त प कीजे, इसमें

सार यही है ॥९॥ भोग बुरे भव रोग बढ़ावें, बैरी हैं जग नीके ।
 वे रस होय विपाक समय अति, सेवत लागें नीके ॥ वज्र अग्नि
 विषसे विष धरले, ये अधिके दुखदाई । धर्मरत्नके चोर प्रबल
 अति, दुर्गति पन्थ सहाई ॥ १० ॥ मोह उदय यह जीव अज्ञानी,
 भोग भले कर जाने । ज्यों कोई जन लाय बतूग, सो सब
 कंचन माने ॥ ज्यों २ भोग संयोग मनोहर, मन बांछित जन
 पावे । तृष्णा नागिन त्यों ३ डंके लहर लोभ विष लावे ॥ ११ ॥
 मैं चक्री पद पाय निरन्तर, भोग भोग घनेरे । तोमी ननक भये
 ना पूरण, भोग मनोरथ मेरे ॥ राज समझ नहां अब कारण,
 वैर बढ़ावन द्वारा । वेश्यासम लक्ष्मी अति चंचल इसका
 कौन पत्थरा । १ । मोह महाविषु वर विचारो जग-
 लिय संकट डारे । घर कारागृह बनिजा बेड़ी, परमन ई रत्नबारे ॥
 सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप, ये जियके हितकारी । ये ही सार
 असार और सब यह चक्री चित्त घारी ॥ १२ ॥ छोड़े चौदह
 रत्न नवोनिधि और छोड़े सज्जसाथी । क्रोड़ि अठारह घोड़े
 छोड़े, चौरासी लल हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बडुनेरी, जीरण
 तृणवत त्यागी । नीति विचार नियोगी सुतक्रो, राज्य दियो बड़-
 भागी ॥ १३ ॥ होय निश्चल्य अनेक नृपति संग, नृपग बसन
 उत्तारे । श्रीगुरु चरण धरी जिनमुद्रा, पंच महाव्रत धारे ॥ धनि
 यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज धारी । ऐसी
 सम्पति छोड़ वसे वन तिनपद बोक हमारी ॥ १४ ॥

दोहा-परिग्रह पोठ उतार सब, लीनो चारित पंथ ।

निज स्वभावमें थिर भये, वज्रनाभि निरर्थ ॥

(१५) फूलमाल पच्चीसी ।

दोहा-जैन धरम त्रेपन किया, दया धरम संयुक्त ।

यादों वंश विषै जये, तीन ज्ञान संयुक्त ॥ १ ॥

भयो महोछो नेमिको, जूनागड़ गिरनार ।

जाति चुरासिय जैनमत जुरे क्षोहनी चार ॥ १ ॥

माल भई जिनराजकी, गूंथी इन्द्रज आय ।

देशदेशके भव्य जन, जुरे लेनको धाय ॥ २ ॥

छप्पय ।

देश गौड़ गुजरात चौड़ सोरठि बीजापुर ।

करनाटक काशमीर मालवो अरु अमेरधुर ॥

पानीपथ हीं सार और बैराट महां लघु ।

काशी अरु भरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन सिंधु ॥

तहँ वंग चंग बंदर सहित, उदधि पार लौ जुरिय सब ।

आए जु चीन महं चीन लग, माल भई गिरनारी जब ॥ ४ ॥

नाराच छन्द ।

सुगंध पुष्प वेलि कुंद केतकी मगायके । चमेलि चंप सेवती
जुही गुही जु लायके ॥ गुलाब कंज लायची सबै सुगंध जातिके ।

सुमालती महा प्रमोद लै अनेक मांतिके ॥ १ ॥ सुवर्ण तारयोय बीच
मोति लाल लाइया । सु हीर पद्म नील पीत पद्म जोति छाइया ॥

शची रची बिचित्र मांति चित्त दे वनाई है । सुइंद्रने उछाहसों
जिनेंद्रको चढाई है ॥ ६ ॥ सुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि बानिये ।

जुरी तहां चुरासि जाति रावराज जानिये ॥ अनेक और भूपलोग सेठ-

साहुको गर्ने । कहाँलें नाम वर्णियें मुदेखते समा वने ॥७॥ खंडेलवाल
 जैसवाल अग्रवाल आइया । वधेरवाल पोरवाल देशवाल छाइया ॥
 सहेलवाल दिखिवाल सेतवाल जातिके । बढेलवाल पुष्पभाल श्री-
 श्रिमाल पांतिके ॥८॥ सुओसवाल पल्लिवाल चूरुवाल जानिये । पर-
 बार पोरवाल पद्मावती बखानिये । गंगेरवाल बंधुराल तोर्णवाल
 सोहिला । करिंदवाल पच्चिवाल मेढ़वाल खोहिला ॥९॥ लवेंचु
 आर माहुरे महेसुरी उदार हैं । सुगोललार गोलपूर्व गोलहं सिंधार
 हैं ॥ बंध नौर मागधी बिहारवाल गूजरा । सुखंडरा गहोय और
 जानंराज वूसरा ॥१०॥ मुराल और मुराल और सोरठी चितौ-
 रिया । कपोल सोमराठ वर्ग हूमड़ा नागौरिया ॥ सिरी गहोड़
 मंडिया कनोजिया अजोधिया । मिवाड मालवान और जाधड़ा
 समोधिया ॥११॥ सुमट्टेनेर रायवाल नागरा रूपाफरा । सुकंथ
 रारु जालुरारु वालमीक भाकरा ॥ पमार लाड़ चोड़ कोड़ गोड़
 मोड़ संमरा । सु खंडिआत श्री खन्डा चतुर्थ पंचम भरा ॥१२॥
 सु रत्नकार भोजकार नारसिंह हैं पुरी । सु जबूवाल और क्षेत्र
 ब्रह्म वैश्य लौं जुरी ॥ सु आइ है चुरासि जाति जैनधर्मकी घनी ।
 सवै विराजि गोटियों जु इंद्रकी समां बनी ॥१३॥ सुमाल लेनको
 अनेक भूपलोग आवहीं । सु एक एकैंत सुमांग मालको बड़ा-
 वहीं ॥ कहैं जु हाथ जोरि जोरि नाथ माल दीनिये । मंगाय
 देउँ हेमरत्न-सुन्दर कीनिये ॥१४॥ वधेलवाल बांकडा हजार
 बीस देत हैं । हजार दे पचास पोरवार फेरि लेत हैं । सु जैसवाल
 लाख देत माल लेत चौपसों । जु दिखिवाल, दोय लाख देत हैं
 अगोपसों ॥ १५ ॥ सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोह दीनिये ।

दिनार देहुं एक लक्ष सो गिनाय लीजिये । खँडेखाल बोलिया जु
 दोय लाख देउंगो । सुवाँटि केत मोलमें जिनेन्द्रमाल लेउंगो ॥ १६ ॥
 जु संभरी कहैं सु मेरि खानि लेहु जायकें । सुवर्ण खानि देत हैं
 चितौड़िया बुलायके ॥ अनेक भूप गांव देत रायसो चँदेरिका ।
 खजान खोलि कोठरीं सु देत अपरि मेरिका ॥ १७ ॥ सुगोड़वाल
 यों कहै गयन्द बीस लीजिये । मढ़ाय देउ हेमदन्त माल मोहि
 दीजिये । पमारके तुरङ्ग साजि देत हैं विना गने । लगाम जीन
 पाहुड़े जड़ाउ हेमके बने ॥ १८ ॥ कनौजिया कपूर देत गाड़ियां
 भरायके । सुहीर मोति लाल देत ओशवाल आयके ॥ सु हंमड़ा
 हँकारहीं हमैं न माल देउगे । भराइये जिहाजमें कितेक दाम
 लेउगे । १९ ॥ कितेक लोग आयके खड़ेते हाथ जोरिकें । कितेक
 भूप देखिके चले जु बाग मोरिकें ॥ कितेक सूस यों कहे जु
 कैसँ लक्षि देत हौ । लुटाय माल आपनों सु फूलमाल लेत
 हौ ॥ २० ॥ कई प्रवीन श्राविका जिनेन्द्रको बघावहीं । कई
 सुकंठ रागसों खड़ी जु माल गावहीं । कईसु नृत्यकों करें नहैं
 अनेक भावहीं । कई मृदङ्ग तालपे सु अङ्गको फिरावहीं ॥ २१ ॥
 कहैं गुरु उदार धी सु यों न माल पाइये । कराइये जिनेन्द्र यज्ञ
 बिबर्ह भराइये ॥ चलाइये जु संघ जात संघही कहाइये । तबै
 अनेक पुण्यसों अमोल माल पाइये ॥ २२ ॥ सबोधि सर्व गोठिसो
 गुरु उतारकें लई । बुलाय के जिनेन्द्रमाल संघरायको दई । अनेक
 हर्षसो करें जिनेन्द्र तिलक पाइये । सुमाल श्री जिनेन्द्रकी धिनो-
 दीलाल गाइये । २३ ॥

दोहा—माल भई मंगवन्तकी, पाई संग नरिन्द ।

लालविनोदी उच्चरै, सबको जयति जिनंद ॥२४॥

माला श्री जिनराजकी, पावे पुण्य संयोग ।

यश प्रघटै कीरति बड़े, धन्य कहै सबलोग ॥२५॥

(१६) आत्मकालकी स्तुति ।

धीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजनकी अव. पूरो आस ।

ज्ञानभानुका उदय करो मम मिथ्यात्मका होय विनाश ॥१॥

जीवोंकी हम करुणा पालें छूठ वचन नहीं कहें कदा ।

परधन कबहूँ न हरहुँ स्वामी ब्रह्मचर्यव्रत रहे सदा ॥ २ ॥

तृष्णा लोभ बड़ न हमारा तोष सुधा नित पिया करें ।

श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥ ३ ॥

दूर भगावें बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार ।

भेल भिलाप बढ़ावें हमसब धर्मोन्नतिका करें प्रचार ॥ ४ ॥

सुखदुःखमें हम समता धरें रहें अचल निमि सदा अटल ।

न्यायमार्गको लेश न त्यागें वृद्धि करे निज आत्मबल । ५ ॥

अष्टकर्म जो दुःख देत हैं तिनके क्षयका करें उपाय ।

नाम आपका जैपै निरंतर विघ्नरोग सब ही टर जाय ॥ ६ ॥

आत्म शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नाहि चढ़े कदा ।

विद्याकी हो उन्नति हममें धर्मज्ञान हू बड़े सदा ॥ ७ ॥

हाथ जाड़कर शीस नवावें तुमको भविजन खड़े खड़े ।

यह सब पूरो आस हमारी चरण शरणमें आन पड़े ॥ ८ ॥

(१७) सायंकालकी स्तुति ।

हे सर्वज्ञ ज्योतिर्मय गुणमणि बालक जेनपरि करहु दया ।
 कुमति निशा अंधारीकारी । सत्य ज्ञानरवि छिपा नदिया ॥ १ ॥
 काध मान अरु माया तृष्णा यह बटु सार फिरि नहु और ।
 लट रहे जग जीवनको यह देख सबिधा तमका जोर ॥ २ ॥
 मारग हमको पूछे नाहीं ज्ञान बिना सब अंध भये ।
 घटमें आस विराजो स्वामी बालक जना सबो खड़े नये ॥ ३ ॥
 सतप्रथदर्शक जनमनुद्वेषक बट १ अंतरंगामि हो ।
 श्री जिनधम हमारा प्यारा नितिके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥
 घोर विपतमें आन प्रड़ा हूं मेरा बेड़ा पार करो ।
 शिक्षाका हो घर २ आदर शिल्पकला संचार करो ॥ ५ ॥
 मेलमिलाप बढ़ावे हमें चंदेपभाव हो घटाघटी ।
 नाहि सतावे किसी जीवको प्रीति क्षीरकी गाटागटी ॥ ६ ॥
 मातपिता अरु गुरुजनकी हम सेवा जिशदिन किया करें ।
 स्वारथ तनकर सुख दें पगको आशिश सबकी लिया करें ॥ ७ ॥
 आत्म शुद्ध हमारा होये पापभैल नहि चंदे कदा ।
 विद्याकी हो उन्नति हममें धर्मज्ञान हू बढ़े सदा ॥ ८ ॥
 दोऊ कर जोड़े बालक ठाढ़े करें प्रार्थना सुनिये तात ।
 सुखसे बीते रैन हमारी जिनमतका हो शीघ्र प्रमात ॥ ९ ॥
 मातपिताकी आज्ञा पालें गुरुकी भक्ति धरें उरमें ।
 रहें सदा हम कृतव्य तत्पर उन्नति कर दें पुरपुरमें ॥ १० ॥

(१८) मक्तामरस्तोत्र संस्कृत ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपापतमोविता-
 नम् । सम्यक् प्रणम्य निनपादशुभं युगादावालम्बनं भवजले पततां
 जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः सकलवाक्यतत्त्वबोधदुद्भूतबुद्धि-
 पटुभिः सुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगन्नितयचित्तरुदरैः स्तोष्ये किञ्चि-
 द्दमपि तं प्रथमं मिनेन्द्रम् ॥ २ ॥ बुद्ध्या विनापि विबुधाभितपाद-
 पीठ स्तोत्रं समुद्यतमतिविगतत्रपोऽहम् । बालं विहाय नलसंस्थित-
 मिन्दुबिम्बमन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥ ३ ॥ वक्तुं
 गुणान् गुणसमुद्र शशाङ्ककन्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुभित्तमोऽपि
 बुद्ध्या । कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतुमलमम्बुनिधि
 मुजाभ्याम् ॥ ४ ॥ सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश कर्तुं
 स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रम्
 नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां
 परिहासघाम त्वद्वक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्नाम् । यत्कोकिलः
 किल मधौ मधुरं विरोति तच्चारुचूतकलिकानिकरैकहेतु ॥ ६ ॥
 त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरमानाम् ।
 आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु सूर्याशुभिन्नमिव शार्वरमन्व-
 कारम् ॥ ७ ॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमारभ्यते तनुधि-
 यपि तव प्रभावात् । चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफ-
 लद्युतिमुपैति ननूदविन्दुः ॥ ८ ॥ आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त-
 दोषं त्वत्संक्रयापि जगतां दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः
 कुरुते प्रमैव पद्माकरेषु नलजानि विकासमाक्षि ॥ ९ ॥ नात्यद्भुतं

सुवनभूषणभूत नाथ भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभीष्टुवन्तः । तुल्या
 भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति
 ॥ १० ॥ दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य
 चक्षुः । पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं जलनिधे-
 रसितुं क इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुमिस्त्वं
 निर्माणितस्त्रिभुवनैकललामभूत । तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः प्रापि-
 ज्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमास्ति ॥ १२ ॥ वक्त्रं क ते सुर-
 नरोरगोन्नहारी निःशेषनिर्जितजगन्नितयोपमानम् । बिम्बं कलङ्कम-
 लिनं क निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥ १३ ॥
 सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलापशुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
 ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम्
 ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशज्ञानाभिर्नीतं मनागपि मनो
 न विकारमार्गम् । कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन किं मन्दरा-
 द्विशिखरं चलितं कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूरः
 कृत्स्नं जगन्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि । गम्यो न जातु मरुतां चलिता
 चलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥ १६ ॥ नास्तं कदा-
 चिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
 नान्मोघरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायिमाहिमासि मुनीन्द्र
 लोके ॥ १७ ॥ नित्योदयं दलितमोहमहान्वकारं गम्यं न राहुवदनस्य
 न वारिदानाम् । विभ्राजते तव मुखाढमनरूपकान्ति विद्योतय-
 ज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥ १८ ॥ किं शर्वरीषु शशिनाहि विवस्वता
 वा युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु नाथ । निष्पन्नशालिवनशालिनि
 जीवलोके कार्यं कियज्जलघरैर्जलमारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा

त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
 तेनः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं नैवं तु काचशकले
 किरणाकुलेऽपि ॥२०॥ मन्ये चरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु
 हृदयं त्वयि तोषमेति । के वीक्षितेन भवता सुवि येन नान्यः
 कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥ स्त्रीणां शतानि शतशो
 जनयति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता । सर्वा दिशो
 दधति माभि सहस्ररश्मि प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदशुजालम् ॥२२॥
 त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसं—मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
 त्वामेवं सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र
 पन्थाः ॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमाचित्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणगीश्वरमनन्त
 मननकेतुम् । योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रव-
 दन्ति संतः ॥२४॥ बुद्धस्त्वमेव विबुध्नांचितबुद्धिबोधात्वं शङ्करोऽसि
 भुवनत्रयशंकरत्वात् । धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात् व्यक्त
 त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ
 तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय । तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय तुभ्यं
 नमा जिनभवोदधिशोषणाय ॥ २६ ॥ को विस्मयोऽत्र यदि नाम
 गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश । दोषैरुपात्तविबुध्नाश्रय-
 जातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥ उच्चैरशोक-
 तरुसंश्रितमुन्मयूखमामाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ॥ स्पष्टोल्लस-
 क्तिरणमस्तमोवितानं विवं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥ सिंहासने
 मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् । विवं
 वियद्विलसदंशुलतावितानं तुंगोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥
 कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।

नाहिं जिन कोय, नृपके बंदीखाने ॥ तुम सुमरत स्वयमेव ही,
 बंधन सब खुल जाहिं । छिनमें ते सम्पति लई, चिन्ता भय
 विनसाहि ॥ महामत्त गजराज, और सृगराज दवानल । फणपति
 रण परचंड नीरनिधि रोग नहोवल ॥ बन्धन ये भय ओठ,
 डरपंकर मानो नाश । तुम सुमरत छिनमाहिं, अमय शून्यक
 परकाश ॥ इस अपार संसारमें, शरन नाहिं प्रसु कोय । यति
 तुम पदभक्तको, भक्ति सहाई होय ॥ यह गुनमाल विशाल,
 नाथ तुम गुनन सवारी । विविध वर्णनय पुहुप गूंथ मैं भक्ति
 विधारी ॥ जे नर पहिरै कंठ भावना मनमें भावै । मानतुंग ते
 निजाधीन, शिबलछमी पावै । भाषा भक्त्यामर क्रियौ, हेमराज
 हिनहेत । जे नर पढ़ै सुभावसाँ, ते पावै शिवसेत ॥४८॥

(२०) कंहरह मावर्न ।-

(सूवरदास कृत)

दोहा—राजा राणा छत्रपति, हार्थिनके असवार । मरना
 सबको एक दिन. अपनी अपनी वार ॥१॥ दल बल देई देवता,
 मात पिता परिवार । मरती बिरियां जीवको कोई न राखनहार ॥२॥
 दाम विना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान् । कहूँ न सुख
 संसारमें, सब जग देख्यो छान ॥३॥ आप अकेला अवतरे, मरे
 अकेला होय । यो कहूँ इस जीवको, साथी संगो न कोय ॥४॥
 जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय । घर संपत्ति पर
 प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥५॥ दिए चाम चांदर मंदी, हाइ
 पीजता देह । भीतर यासन जगतमें, और नहीं बिनगेह ॥६॥

सोरठ मोहलीदके लोर, जगवासी धूमै सदा कर्मचोर
चहुँचोर, सरवस लट्टे सुप्त नहीं ॥ ७ ॥ सतगुरु देय जगीय, मोहनीहि
जब उपशमै । तब कुछ बने उपाय, कर्मचोर आवत रुके ॥ ८ ॥

दोहा-ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधै भ्रमचोर प
याविधि विन निकसें नहीं, पैठे पुरव चोर ॥ ९ ॥ पंचमहोव्रत
संचरण, समिति पंचपरकार प्रबल पंचइन्द्रि विजय धार निर्रा
सार ॥ १० ॥ ज्यौदह राजु उतंग जम, लोक पुरुष संठान । तामें
जीव जनादिते, भरमत है विन ज्ञान ॥ ११ ॥ जाचे सुरतरु देय सुख,
चितत चितारेन । विन जाचे विन चितथे, धर्म सकलसुख दैन
॥ १२ ॥ धनकन कंचन राजसुख, सबहि सुलभकर ज्ञान, दुर्लभ है
संसार ॥ एक यथार्थ ज्ञान ॥ १३ ॥

[२१] बारहमासकथा ।

(बुधजनदास कृत)

जेती जगतमें वस्तु तेती अथि पर्ययते सदा । परणमनराखन
कान समरथ इन्द्र चक्री मुनि कदा ॥ धन यौवन सुत नारी पर
कर ज्ञान दामिन दमकसा । ममता न कीजे धारि समता मानि
जलमें नमकसा ॥ १ ॥ जेतन अचेतन सब परिग्रह हुआ अपनी
शिति लहें । सो रहें आप करार माफिक अधिक राखे न रहें ॥
अब शरण काफ़ी लेयगा जब इन्द्र नहीं रहत हैं । शरण तो इक
धर्म आत्म जाहि मुनिजन गहत हैं ॥ २ ॥ सुरनर नरक पशु
सकल हेरे कर्म चरे बन रहे । सुख शाश्वता नहीं भासता सब

विपत्तिमें अतिसन रहे । दुःख मानसी तो देवगतिमें नारकी दुःख
 ही भरे । तिर्यच मनुज वियोग रोगी शोक संकटमें जरे ॥ १ ॥
 क्यों मूलता शठ फूलता है देख पर कर थोकको । लाया कहीं
 लेनायगा क्या फाज भूषण रोकको ॥ जामन मरण तुझ एकल
 को काल केता होगया । संग और नहीं लगे तेरे सीख मेरी
 सुन भया ॥ ४ ॥ इन्द्रानसे जाना न जावे चिदानन्द अलक्ष है ॥
 स्व सम्बेदन करत अनुभव होत तब प्रत्यक्ष है । तन अन्य जड़
 जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है । कर भेद ज्ञान सो ध्यान घर
 निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख राचा फिरे नाचारूपः
 सुन्दर तन लिया । मल मूत्र भाड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया ॥
 क्यों स्रग नहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे । तोहि काल
 गटके नाहिं अटके छोड़ तुझको गिरपरे ॥ ६ ॥ कोई खरा कोई
 बुरा नहीं वस्तु विविध स्वभाव है । तू वृथा विकल्प ठान डरमें
 करत राग उपाव है ॥ यों भाव आश्रव बनत तू ही द्रव्य आश्रव
 सुन कथा । तुझ हेतुसे पुद्गल करम बन निमित्त हो देत व्यथा
 ॥ ७ ॥ तन भोग जगत् सरूप बख डर भविक गुर शरणा लिया ।
 सुन धर्म धारो भर्म गारा हर्षि रुचि सन्मुख भया ॥ इन्द्रा अनिन्द्री
 दावि लीनी तस रु थावर वध तजा । तब कर्म आश्रव द्वार रोके
 ध्यान निजमें जो सजा ॥ ८ ॥ तन शक्य तीनों वरत लीनो बाह्या-
 म्भन्तर तप तपा । उपसर्ग सुर नर जड़ पशु कृत सहा निज
 आत्म जया । तब कर्म-रस विन होन लागे द्रव्य भावन निर्बरा ।
 सब कर्म हरके मोक्ष वरके रहत चेतन ऊजरा ॥ ९ ॥ विच लोक
 नंतालोक माहीमें द्रव सब है भरा । सब भिन्न २ अनादि रचना

निमित्त कारणकी करा ॥ जिनदेव भासा तिन प्रकाशा भर्मनाशासुन
गिरा । सुर मनुष तिर्यच नारकी हुवे ऊर्ध्व मध्य अधोधरा ॥ अनंत
काल निगोद अटका निकस थावर तनधरा । भूवारि तेज वंयारि
वै के वेइन्द्रिय त्रस अवतरा ॥ फिर हो तेइन्द्री वा चौइंद्री पंचेद्री
मनबिन बना । मन युतमनुषगातिहोना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ
घना ॥ ११ ॥ न्हाना घोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं जप जपा । नम
रहना धर्म नाहीं धर्म नाहीं तप तपा ॥ वर धर्म निज आत्म
स्वभाव ताहि विन सब निष्फला । बुधजन धरमं निज धार लीना
तिनहि कीना सब भला ॥ १२ ॥

अथिराशरणसंसार है, एकत्वअनित्यहि जान । अशुचि
आश्रव संवरा, निर्जर लोक बखान ॥ १३ ॥ बोध औ दुर्लभ धर्म
ये, बारह भावन जान । इनको भावे जो सदा क्यों न लहै
निर्वाण ॥ १४ ॥

(२२) सुवाकतीसी ।

दोहा—नमस्कार जिन देवको, करों दुहुं करजोर । सुवा
कतीसी सुरस मैं, कहुं अरिनदल मोर ॥ १ ॥ आतम सुआ सुगुरु
वचन, पढ़त रहै दिन रैन । करत काज अधरीतिके, यह अचरज
लखि नैन ॥ २ ॥ सुगुरु पढ़ावे प्रेमसों, यह पढ़त मनलाय । घटके
पट जो ना खुलै, सब ही अकारथ जाय ॥ ३ ॥

चौपाई—सुवा पढ़ाया सुगुरु बनाय । क्रम बनहि जिन
जह्यो भाय । भूले चूके कबहु न जाहु । लोम नलिनि पैं चुगा
न खाहु ॥ ४ ॥ दुर्जन मोह दगाके काज । बांधी नछनी तछ घर

नाजः॥ सुमं निज बैठाहु सुताः सुजानः । नाम विषयसुखलहिं
 तिहं आना ॥ १॥ जो बैठाहु तो पंकरि न रहियो । जो पकरो तो
 दहं निज ताहियो ॥ जो दह गहो तो उलटि न जह्यो ॥ जो
 उलटो तो ताजि सजि गह्यो ॥ ६ ॥ इह विप्रसुजा पदार्थो
 नित सुवटा पदिके भयो विचित ॥ पदत सुहे निशदिन ये जैन
 सुनत लहै सब प्राप्ती चैन ॥ ७ ॥ इह दिन सुवटै आई मनै
 गुरु संगत तज भज गये वनै ॥ वनमें लोभ नलिनी अति चली
 दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ तो तिरु विषमभोगिन प्रे
 सुवटै जान्यो ये सुख खरे । उत्तरे विषयसुखनको क्षांजि बैठ
 नलिनी विलसै राज ॥ ९ ॥ बैठो लोभ नलिनी पै जवै ॥ विषय स्वाद
 रस लटको तवै ॥ लटकत तैं उलटि गये भाव । तर मुंची लपर
 भये पांव ॥ १० ॥ नलिनी दह पकरै पुनि रहै । सुखतैं वचन
 दीनता कहे ॥ कोउ न तहां छुड़ावनहार । नलिनी पकरहि करहि
 पुकार ॥ ११ ॥ पदत रहै गुरुके सब वैन । जे जे हितकर रखिये
 ऐन ॥ सुवटा वनमें उड़ निज जाहु । जाहु तो मूल चुगा निज
 खाहु ॥ १२ ॥ नलिनीके जिन जह्यो तीर । जाहु तो तहां न
 बैठाहु वीर ॥ जो बैठो तो दह जिन गहो । जो दह गहो तो
 पकरि न रहो ॥ १३ ॥ जो पकरो तो चुगा न खह्यो । जो तुम
 खावो तो उलट न जह्यो ॥ जो उलटो तो तज भज गह्यो ।
 इतनी सीख हृदयमें लहियो ॥ १४ ॥ ऐसे वचन पदत पुन रहै ।
 लोभ नलिनि तज भज्यो न चहै ॥ आयो दुर्जन दुर्गतिरूप ।
 पकड़े सुवटा सुन्दर भूप ॥ १५ ॥ डारे दुखके जाल मंझार । सो
 दुख कहत न आवै पार ॥ भूख प्यास बहु संकट सहै । परवस

परे महां दुख लहे ॥ १६ ॥ सुवटाकी सुधि बुधि सब गई ।
 यह तो बात और कलु भई ॥ आय परे दुखसागर माहि ।
 अंक इतैं कितको भज जाहि ॥ १७ ॥ केतो काल गयो इह
 ठौर । सुवटे जियमें ठानी और ॥ यह दुख जाल कटे किहँ
 भांति । ऐसी मनमें उपजी खांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु सुमरन
 करै । पाप जाल काटन चित धरे ॥ क्रम क्रम कर काट्यो अघ
 जाल । सुमरन फल भयो दीनदयाल ॥ १९ ॥ अब इतैं जो
 भजकें जाकं । तौ नलनीपर बैठ न खाकं ॥ पायो दाव भज्यो
 ततकाल । तज दुर्जन दुर्गति जंजाल ॥ २० ॥ आये उड़त बहुर
 वनमाहि । बैठ नरभव हुमकी छाहि ॥ तित इक साधु महां
 मुनिराय । धर्मदेशना देत सुभाय ॥ २१ ॥ यह संसार कर्मवन
 रूप । तामहिं चेत सुआ अनूप ॥ पढ़त रहै गुरु वचन विशाल ।
 तौ हू न अपनी कर सम्भाल ॥ २२ ॥ लोभ नलिनपैं बैठे जाय ।
 विषय स्वाद रस लटके आय । पकरहि दुर्जन दुर्गति परै । तामें
 दुःख बहुत जिय भैरै ॥ २३ ॥ सो दुख कहत न आवे पार ।
 जानत जिनवर ज्ञानमंझार ॥ सुनतैं सुवटा चौक्यो आप । यह
 तो मोहि परयो सब थाप ॥ २४ ॥ ये दुख तौ सब में ही सहे ।
 जो मुनिवरने सुखतैं कहे ॥ सुवटा सोचै हिये मंझार । ये गुरु
 सांचे तारनहार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिरयो करम वनमाहि । ऐसे
 गुरु कहुं पाये नाहि ॥ अब मोहि पुण्य उदै कलु भयो । सांचे
 गुरुको दर्शन लयो ॥ २६ ॥ गुरु स्तुति कर बारंवार । सुभिरै
 सुवटा हिये मंझार ॥ सुमरत आप पाप भज गयो । घटके पट
 खुल सम्यक् थयो ॥ २७ ॥ समाकित होत लखी सब बात । यह

मैं यह परद्रव्य विख्यात ॥ चेतनके गुण निजमहिं धरे । पुद्गल
 रागादिक परिहरे ॥ १८ ॥ आप मगन अपने गुणमहिं । जन्म
 मरण भय भिनको नाहिं ॥ सिद्ध समान निहारत हिये । कर्म
 कलङ्क सबहि तुज दिये ॥ १९ ॥ न्यावत आप माहिं जगदीश ।
 दुहुंपद एक विराजत ईश ॥ इहविधि सुवटा ध्यावत ध्यान ।
 दिन दिन प्रति प्रगटत कल्याण ॥ २० ॥ अनुक्रम शिवपद जियका
 भया । सुख अनंत विलसत नित नया ॥ सतसंगति सबको सुख
 देय । जो कछु हियमें ज्ञान धरेय ॥ २१ ॥ केवलपद आतम
 अनुभूत । घट घट राजत ज्ञान संजूत ॥ सुख अनन्त विलसै
 जिय सोय । जाके निजपद परगट होय ॥ २२ ॥ सुवावचीसी सुनहु
 सुजान निजपद प्रगटत परम निधान । सुख अनन्त विलसहु
 भुव नित । ' भैयाकी ' विनती घर चित्त ॥ २३ ॥ संवत सत्रह
 त्रैपन माहिं । अश्विन पहले पक्ष कहाहिं ॥ दशमी दशों दिशां
 परकाश । गुरु संगति तैं शिव सुखभास ।

(२३) एकीभावकमपाफ ।

दोहा—चादिरान मुनिराजके, चरणकमल चित लाय ।

भाषा एकीभावकी, करुं स्वपरसुखदाय ॥

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी । सो मुझ कर्म
 भवन्ध करत भव-भव दुःखमारी ॥ ताहि तिहारी मक्ति जगत
 रविजो निवारै । सो अव और कलेश कौनसो नाहिं विदारै ॥ १ ॥
 तुम जिन जोतिस्वरूप-दुरित अंधयार निवारी । सो गणेश गुरु

कहैं तत्त्वविद्याधन धारी ॥ मेरे चित्तघर माहिं बसो तेजोमय थावत ।
पापतिमर अवकाश तहां सो क्यों कर पावत ॥ १ ॥ आनंद आस
वदन धोय तुम सो चित सानै । गदगद सुर सों सुयश मंत्र पढ़
पूजा ठानै ॥ ताके बहुविधि व्याधव्याल चिरकाल निवासी ।
भाजैं थानक छोड़ देहबावईके बासी ॥ २ ॥ दिवसे आवनहार भये
भावि भाग उदयबल । पहले ही सुर आय कनकमय कीन
महीतल ॥ मन गृह ध्यान दुवार आय निवसे जगनामी । जो
सुवर्ण तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ३ ॥ प्रभु सब जगके
विना हेतु बंधव उपकारी । निरावर्ण सर्वज्ञ शक्ति भिनराज
तिहारी ॥ भक्ति रचित मम चित्त सेज नित बास करोगे । मेरे
दुःख सन्ताप देख किम घोर धरोगे ॥ ४ ॥ भववनमें चिरकाल
अमो कलुं कही न जाई । तुम श्रुति कथा पियूष वापिका भागन
पाई ॥ शशितुषार घनसार हार शीतल नहिं जा सम । करत
न्हौन तिस माहिं क्यों न भव ताप बुझै मम ॥ ५ ॥ श्रीविहार
परिवार होत शुचिरूप सकल जग । कमल कनक आभास
सुरभि श्रीवास धरत पग ॥ मेरो मन सँग परस प्रभुको सुख पावै ।
अब सों कौन कल्याण जो न दिन दिन दिग आवै ॥ ६ ॥ भव
तन सुखपद बसे काम मद सुमट संधारे । जो तुमको निखैत
सदा प्रियदास तिहारे । तुम वचनामृत पान भक्ति अंजुलिसों पीवै ।
तिसे भयानक क्रूर रोग रिपु कैसे छीवै ॥ ७ ॥ मानथंभ पाषाण
आन पाषाण पटेंतर । ऐसे और अनेक रत्न दीखैं जग अन्तर ।
देखत दृष्टि प्रमाण मानमद तुरत मिटानै । जो तुम निकट न
होय शक्ति यह क्यों कर पावै ॥ ८ ॥ प्रभुतन पर्वत परस पवन

उरमें निबहे है । तासों तत्क्षण सकल रोगरज बाहिर है है ।
 जाके ध्यानाहृत वसो उर अंबुन माहीं । कौन जगत उपकार
 करण समर्थ सो नाहीं ॥ १० ॥ जन्म जन्मके दुःख सहे सब ते
 तुम जानो । याद किये मुझ हिये लै आयुधमे मानो । तुम
 दयालु जगपाल स्वामि मैं शरण गही है । जो कुछ करना होय
 करो परमाण वही है ॥ ११ ॥ मरण समय तुम नाम मंत्र जीवक
 तैं पायो । पापचारी स्वान प्राण तज अमर कहायो । जो मणि
 माला लेय जै तुम नाम निरन्तर । इन्द्र संपदा लहे कौन संशय
 इस अंतर ॥ १२ ॥ जो नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधै ।
 अनवधि सुखकी सार भक्ति ताली नाहिं लायै । सो शिव वंछिक
 पुरुष मोक्षपट केम उघारे । मोह मुहर दिङ्करी मोक्षमन्दरके
 द्वारे ॥ १३ ॥ शिवपुर केरो पंथ पापतम सो अति छायो । दुःख
 स्वरूप बहु कपट खाड़ सो विकट बतायो ॥ स्वामी सुख सो तहां
 कौन जनमारग लायै । प्रभु प्रवचन मणिदीप जानहै आगै आगै
 ॥ १४ ॥ कर्म पटल भूमाहिं दक्षी आत्म निधि भारी । देखत अति
 सुख होय दिशुखजन नाहिं उघारी ॥ तुम सेवक तत्काल ताहिं
 निदचय कर धरै । श्रुति कुदाल सों खोद बंद भू कठिन बिदारै
 ॥ १५ ॥ स्यादवाद गिर उपज मोक्ष सागर लें घाई । तुम चरणांबुज
 परम भक्तिगंगा सुखदाई । मोचित निर्मल थयो न्हौन रुचि पूरव
 तर्पै । अब बह हों न मलीन कौन जिन संशय यामैं ॥ १६ ॥ तुम
 शिवसुखमय प्रकट करत प्रभु चिन्तवन तेरो । मैं भगवान् समान
 भाव यों बरतै मेरो ॥ यदपि मूठ है तदपि तृप्ति निश्चल उप-
 जावै । तुम प्रसाद सकलक जीव वांछित फल पावै ॥ १७ ॥ वचन

जलधि तुम देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै । भंग तरंगिनि विकथ
 बाद मल मलिन उथापै ॥ मन सुमेरु सों मयै ताहि जे सम्यक-
 ज्ञानी । परमावृत सों तृप्त होहि ते चिरलों प्राणी ॥ १८ ॥ जो
 कुदेव छविं हीन बसन भूषण अभिलाषै । बैरी सों मयभीत होय
 सो आयुष राखै ॥ तुम सुन्दर सर्वग शत्रु समरथ नहि कोई ॥
 भूषण बसन गंदादि ग्रहण काहेको होई ॥ १९ ॥ सुरपति सेवा
 करै कहा प्रभु प्रभुता तेरी । सोशलाघना लहै मिटै जग सों
 जग फेरी । तुम भव जलधि जहाज तोहि शिव कंत उचरिये । तुही
 जगत् जनपाल नाथ थुतिकी थुति करिये ॥ २० ॥ वचन जाल जड़
 रूप आप चिन्मूरति झाँई । ताँतै थुति आलाप नाहिं पहुँचै तुम
 ताँई । तो भी निष्फल नाहिं भक्तिरस भीने वायक । सन्तनको
 सुरतरु समान वाञ्छित वर दायक ॥ २१ ॥ कोप कभी नहिं करो
 शीत कबहुं नहिं धारो । अति उदास बेचाह चित्त जिनराज
 तिहारो ॥ तदपि आन जग वहै बैर तुम निकट न लहिये । यह
 प्रभुता जग तिलक कहां तुम बिन सरधैये ॥ २२ ॥ सुर तिय गावै
 सुयश सर्व गति ज्ञान स्वरूपी ॥ जो तुमको थिर होहि नमै भवि
 आनन्द रूपी ॥ ताहि क्षेमपुर चलन बाट वाकी नहि हो है ।
 श्रुतिके सुमरण माहिं सो न कब ही नर मोहै ॥ २३ ॥ अतुल
 चतुष्टयरूप तुमैं जो चितमें धारै ॥ आदर सो तिहुंकाळ माहिं
 जग थुति विस्तारै ॥ सो सुकृत शिवपन्थ भक्ति रचना कर पूरै ।
 पंचकल्याणक ऋद्धि पाय निश्चय दुख चूरै ॥ २४ ॥ अहो जगत-
 पति पूज्य अवधिज्ञानी मुनि तारे । तुमगुण कीर्तन माहिं कौन
 हम मन्द विचारै ॥ स्तुतिछल सों तुम विषै देव आदर विस्तारै ।

शिवसुख पूरणहार कल्पतरु यही हमारे ॥ १९ ॥ वादिराज
मुनिराज शब्दविद्याके स्वामी । वादिराज मुनिराज तर्कविद्यापति
नामी ॥ वादिराज मुनिराज काव्य करता अधिकारी । वादिराज
मुनिराज बड़े भविजन उपकारी ॥ २० ॥

दोहा—मूल अर्थ बहुविधि कुसुम, भाषा सूत्र मंशार ॥
भक्तिमाल भूषण करी, करो कण्ठ सुखकार ॥ १ ॥

(२४) कामाक्षी स्तोत्र ।

जय जिनंद सुखकंद नमस्ते । जय जिनंद जित फंद
नमस्ते ॥ जय जिनंद वरवोध नमस्ते । जय जिनंद वित क्रोध
नमस्ते ॥ १ ॥ पाप ताप हर इन्दु नमस्ते । अहं वरन जुत विन्दु
नमस्ते ॥ शिष्टाचार विशिष्ट नमस्ते । इष्ट मिष्ट उतकृष्ट नमस्ते
॥ २ ॥ परम धर्म वर धर्म नमस्ते । मर्म धर्म धन धर्म नमस्ते ॥
दृगविशाल वर भाल नमस्ते । हृद दयाल गुणमाल नमस्ते ॥ ३ ॥
शुद्धबुद्ध अखिरुद्ध नमस्ते । सिद्धिसिद्धि वर वृद्ध नमस्ते ॥ वीतराग
विज्ञान नमस्ते । चिद्रिलास घृत ध्यान नमस्ते ॥ ४ ॥ स्वच्छ
गुणांबुधि रत्न नमस्ते । सत्त्व हितंकर यत्न नमस्ते ॥ कुनयकरी
मृगराज नमस्ते । मिथ्या स्वगवर बाज नमस्ते ॥ ५ ॥ मन्य
भवोदधि पार नमस्ते । शर्मामृत सित सार नमस्ते ॥ दरश ज्ञान
सुखवीर्य नमस्ते । चतुरानन धर धीर्य नमस्ते ॥ ६ ॥ हरिहर ब्रह्मा
विष्णु नमस्ते । मोह मर्द मनु जिष्णु नमस्ते ॥ महा दान महभोग
नमस्ते । महा ज्ञान महभोग नमस्ते ॥ ७ ॥ महा तप तप मह

नमस्ते । नहां मौन गुण भूरि नमस्ते ॥ धरम चक्रि वृष केतु
नमस्ते । भवसमुद्र शत सेतु नमस्ते ॥८॥ विद्याईश मुनीश नमस्ते ।
इन्द्रादिक नुत शीस नमस्ते ॥ जय रत्नत्रय राय नमस्ते । सकल
जीव सुखदाय नमस्ते ॥९॥ अशरण शरण सहाय नमस्ते । भव्य
सुपन्थ लगाय नमस्ते ॥ निराकार साकार नमस्ते । एकानेक अधार
नमस्ते ॥१०॥ लोकालोक विलोक नमस्ते । त्रिधा सर्व गुण थोक
नमस्ते । सल्ल दल्ल दल मल्ल नमस्ते । कल्ल मल्ल जित लल्ल नमस्ते
॥११॥ मुक्ति मुक्ति दातार नमस्ते । उक्ति सुक्ति शृंगार नमस्ते ॥
गुण अनन्त भगवन्त नमस्ते । जै जै जै जयवन्त नमस्ते ॥११॥

इति पठित्वा जिनचरणाग्रे परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

(२५) छहढाला ।

(पं० बुधजनकृत)

सर्व द्रव्यमें सार, आत्मको हितकार है ।

नमों ताहि चितधारं, नित्य निरंजन जानके ॥ १ ॥

अथ प्रथम ढाल १६ मात्रा (चौपाई छन्द)

(इसमें जीवोंके संसारभ्रमणदुःखका कथन है)

आयु घटे तेरी दिनरात । हो निश्चिन्त रहो क्यों त्रात ॥

यौवनतनधनकिंकरनारि । हैं सब जलबुद बुद उनहारि ॥ १ ॥

पूरे आयु बढ़े क्षणनारि । दिये क्रोड़ धन तरिय मारि । इन्द्र
चक्रपत भी क्या करें । आयु अन्तपर ते मी मरें ॥२॥ यो संसार

१ जलबुद २-गानीके बुलबुले समान है ।

असार महान । सार आपमें आपा जान । सुखके दुख दुखसे सुख होय । समता चारों गति नहिं कोय ॥१॥ अनन्तकाल गति गतिं दुख सखो । बाकी काल अनन्ता कह्यो । सदा अकेला चेतन एक । तो माहीं गुण बसत अनेक ॥४॥ तू न किसीका तार न कोय । तेरा दुख सुख तोको होय । यासे तुझको तू उरधार । परद्रव्योंसे मोह निवार ॥५॥ हाड़ मांस तन लिपटा चाम । रुधिर मूत्रमल पूरित घाम । सो भी थिर न रहै क्षय होय । याकों तजे मिले शिवलोय ॥ ६ ॥ हित अनहित तनकुलजनमाहिं । खोटीबानि हरो क्यों नाहिं । यासे पुद्गल कर्म नियोग ॥ प्रणवे दायक सुख दुःख रोग ॥ ७ ॥ पांचों इंद्रियके तज फेल । चित्त निरोध लागि शिवगैल । तुझमें तेरी तू कर सैल । रहो कहाहो कोल्हु बैल ॥८॥ तज कपाय मनकी चलचाल । ध्यावो अपना रूप रसाल । झड़े कर्म बन्धन दुःखदान । बहुरि प्रकाशे केवलज्ञान ॥९॥ तेरा जन्म हुआ नहीं जहां । ऐसो क्षेत्र जो नाहीं कहां ॥ याहीं जन्म भूमिका रचो । चलो निकलतो विधिसे बचो ॥१०॥ सत्र व्यवहार क्रियाको ज्ञान । भयो अनेतेवार प्रधान । निपटकठिन अपनी पहि-

८ चित्त निरोध-मनको पांचों इंद्रियोंके विषयोंसे रोककर मोक्षके रस्ते पर लगा शुद्ध सम्यक्त पालो ।

१० सब व्यवहार क्रियाका ज्ञान—इस जीवने जितने संसारमें इलम हुआ है । संसारी कर्तव्यका ज्ञान अनन्ती ही बार पाया है । इनके पानेसे जीव आत्माको कुछ भी सुख नहीं हुआ, चारों गतिके दुःख भोगता रहता ही फिरा । यदि एक बार भी सम्यक्त पालेता तो अनन्त जन्ममरणके दुखोंसे छूटकर शाश्वत सुख भोगता ।

चॉन । तांको पावत होयं कल्याण ॥ ११ ॥ धर्म स्वभांव आप
श्रद्धान । धर्म न शील न न्हीन न दान । बुधजन गुरुकी सीख
विचार । गहो धर्म आपन निर्धार ॥ १२ ॥

अथ द्वितीय ढाल २८ मात्रा (नरेन्द्र छन्द) इसमें
प्रथम ढालमें कहे हुवे प्रयोजनका कारण, ग्रहीत अग्रहीत मिथ्या
दर्शन, ज्ञान तथा चारित्रका कथन है ।

सुन रे जीव कहतहो तुझसे तेरे हितके काजे । हो निश्चल
मन जो तू धारे तो कुछ इक तोहिलाजे ॥ जिस दुःखसे थावर
तनपायो वरण सकों सो नहीं । अठारह बार मरा और जन्मा
एक स्वासके माहीं ॥ १ ॥ काल अनन्तानन्त रहो यों फिर विकर-
त्रय हूवो । बहुरि असैनी निपट अज्ञानी क्षण क्षण जन्मो मूवो ।
पुण्य उदय सैनी पशु हूवो बहुत ज्ञान नहीं भालो । ऐसे जन्म
गए कर्मोवश तेरा जोर न चालो ॥ २ ॥ जबर मिलो तब तोहि
सतायो निबल मिलो तैं खायो । मात त्रिया सम भोगी पापी
तातैं नर्क सिधायो ॥ कोटिक विच्छू काटैं जैसे ऐसी भूमि जहां
है । रुधिर रावि जलछार बहे जहां दुर्गधि निपट तहां है ॥ ३ ॥
घाव करें असिपत्र अंगमें शीत उष्ण तन गालें । कोई काटें
करवत गहिकर केई पावक जालें यथायोग्य सागरस्थिति सुगतें
दुःखका अन्त न आवे । कर्म विपाक ऐसा ही होवे मानुषगति
तब पावे ॥ ४ ॥ मात उंदरमें रहै गैद हो निकसत ही बिललावे ।

४ सागर—की गिणती बहुत ही बड़ी है जो किरोड़ान किरोड़
वर्ष बीत जाय तो भी एक सागरकी स्थिति पूरी न हो । इसे त्रिलोक-
सारादि ग्रन्थोंमें देखना चाहिये ।

ढावा दांक कलां विस्फोटक ढांकनसे बच जावे ॥ तो यौवनमें
 मामिनके संग निशिदिन भोग रचावे । अन्धा हो घन्धा दिन खोवे
 बूढ़ा नाहि हलावे ॥१॥ यम पकड़े तब गोर न चाले सैन ही सन
 बतावे । मन्द कषाय होय तो माई भवनत्रक पद पावे ॥ परकी
 सम्पत्ति लखि अति झोरेके रति काल गमावे । आयु अन्त माल
 मुरझावे तब लख लख पछतावे ॥६॥ तहाँसे चलके थावर होवे
 रुलता काल अनन्ता । या विधि पंच परावर्तन दे दुखका नाहीं
 अन्ता । काललब्धि भिन गुरु कृपासे आप आपको जाने । तब
 ही बुधजन भवोदधि तरके पहुँच जाय निर्वाणे ॥ ७ ॥

अथ तृतीय ढाल ।

जिसमें सम्यक्त होनेका वर्णन है ।

इसविधि भववनके माहि जीव । वशमोह गहल सोता
 सदाँव । उपदेश तथा सहजहि प्रबोध । तब जागो ज्यों रण उठत
 योष ॥१॥ तब चिन्तत अपनेमाहि आप । मैं चिदानन्द नहि
 पुण्यपाप ॥ मेरे नाहीं हैं रागभाव । ये तो विधिवस उपमे
 विभाव ॥२॥ मैं नित्य निरंजन शिव समान । ज्ञानावरणी आ-
 च्छादा ज्ञान ॥ निश्चय शुद्ध हक व्यवहारमेव । गुणगुणी अंग
 अंगी अतेव ॥३॥ मानुष सुर नारक पशु पर्याय । शिशु ज्वान बृद्ध

५ विस्फोटक-बच्चोंकी माता याने बचकका निकलना । ६ लख
 देखना-भवनत्रक पद । व्यंतर, ज्योतिषी, भवनवासी, इन तीन प्रकारके
 देवोंको कहते हैं ।

२। आच्छादा=दाँक लिया । अर्थात् ज्ञानावरणी कर्म ज्ञानको ढँके है-।

३। मेव=मेव (फरक) अतेव=इसी वास्ते, अर्थात् जीव और पर-

बहुरूप काय ॥ धनवान दरिद्री दास राव । यह तो बिडम्ब मुखे
ना सुहाय ॥ ४ ॥ स्पर्श गंध रसवर्ण नाम । मेरो नार्हीं मैं ज्ञान
धाम ॥ मैं एकरूप नहीं होत और । मुझमें प्रतिबिम्बित सकल ठौर
॥ ५ ॥ तन पुलकत वर हर्षित सदीव । ज्यों भई रंक गृह निधि
अतीव । जब प्रबल अप्रत्याख्यान थाय । तब चितपरणति ऐसी
उपाय ॥ ६ ॥ सो सुनो भव्य चित धारकान । वर्णत मैं ताकी
विधि विधान ॥ सब करें काज घर माहिं बास । ज्यों भिन्न कमल
जलमें निवास ॥ ७ ॥ ज्यों सती अंगमाहीं शृंगार । अति करे
प्यार ज्यों नगरनारि ॥ ज्यों धाय चुखवति अन्य बाल ॥ त्यों
भोग करत नार्हीं खुशाल ॥ ८ ॥ जो उदय मोह चारित्रभाव ।
नहीं होत रंच हू त्यागभाव ॥ तहां करें मन्द खोटे कषाय ।
घरमें उदास हो अथिर धाय ॥ ९ ॥ सबकी रक्षायुत न्याय नीति ।
जिन शासन गुरुकी दृढ़ प्रतीति ॥ बहु रुले अर्द्धपुद्गल प्रमाण ।
शीघ्र ही मद्धरत ले परम थान ॥ १० ॥ वे धन्य जीव धनभाग्य
सोइ । जिनके ऐसी सुप्रतीति होइ ॥ तिनकी महिमा है स्वर्ग
लोइ । बुधजन भाषे मोसे न होइ ॥ ११ ॥

अथ चतुर्थ ढाल ।

इसमें व्यवहार सम्यग्दर्शन कथन है ।

सोरठा छन्द—ऊगो आतम सूर दूर गयो मिथ्यात्त्व तम् ।
अब प्रगटो गुणपूर ताको कुछइक कहत हों ॥ शंका मनमें
नार्हि तत्त्वारथ श्रद्धानमें । निर्वाळिक चित माहिं परमारथमें रत

मात्माने असली भेद नहीं व्यवहार भेद है । इसी हेतु एक अंग (गौण)
और एक अंगी (प्रधान) है । ४ भिक्षु-बालक अवस्था ।

रहे ॥ २ ॥ नेक न करते ग्लान बाह्य मलिन मुनिजन लसे ।
 नाहीं होत अनान तत्त्व कुतत्त्व विचारमें ॥ १ ॥ उरमें दया विशेष
 गुण प्रगटे औगुण ठके । शिथिल धर्ममें देख जैसे तैसे थिरकरे
 ॥ ४ ॥ साधर्मी पहिचान करे प्रीति गोबच्छसम । महिमा होय
 महान् धर्म कार्य ऐसे करे ॥ ५ ॥ मद नहीं जो नृप तात मद नहीं
 मूपतिवानको । मद नहीं विभव लहात मद नहीं सुन्दर रूपको
 ॥ ६ ॥ मद नहीं होय प्रधान मद नहीं तनमें जोरका । मद नहीं
 जो विद्वान् मद नहीं सम्पति कोषका ॥ ७ ॥ ह्रबो आत्मज्ञान तम
 रागादि विभाव पर । ताको हो क्यों मान आत्यादिक बसु अथि-
 रका ॥ ८ ॥ वंदत हैं अरिहंत जिन मुनि जिन सिद्धांतको ।
 नवे न देख महन्त कुगुरु कुदेव कुधर्मको ॥ ९ ॥ कुत्सित आगम
 देव कुत्सित पुन सुरसेवकी प्रशंसा बट भेव करे न सम्यक्वात
 हैं ॥ १० ॥ प्रगटो ऐसा भाव किया अभाव मिथ्यात्वका ।
 वन्दत ताके पांव बुधनन मनवचकायसे ॥ ११ ॥

अथ पंचम ढाल ।

जिसमें बारह व्रतका वर्णन है ।

मलहर छन्द—तिर्यच मनुष दोय गतिमें । व्रत धारक
 श्रद्धा वित्तमें । सो अगलित नीर न पीवें । निश्चि भोजन तजे

मिश्रकमल=कमलका फूल चाहे जितना पानी हो न पानीसे ऊपर
 ही रहता है ऐसा समदृष्टि धरने प्रहकर भी अपने परिणाम शुद्धीसे
 अलग और धर्मसे तल्लीन रहता है । ८१ नगरनार=नेत्रिया ॥

१० कुत्सित आगम देव=कुदेव कुशाखकी सेवा प्रशंसा समदृष्टी
 नहीं करता है ।

सदीर्वे ॥ १ ॥ मुख नस्तु अभक्ष न खावें । जिन भाक्ति त्रिकाल
रचावें । मन बच तन कपट निवारें । कृतकारित मोद सम्हारे ।
जैसे उपशमित कषाया । तैसा तिन त्याग कराया । कोई सात
व्यसनको त्यागें । कोई अणुव्रत तप लागे । त्रस जीव कभी नहीं
मोरें । वृथा थावर न संढारें । परहित विन झूठ न बोलें । मुख
संत्य विना नहीं खोलें । जल मृतिका विन धन सब ही । विन
दिये न लेवें कब ही । व्याही वनिता विन नारी । लघु बहिन बड़ी
मंहतारी । तृष्णाका जोर संकोचें । जादे परिग्रहको मोचें ॥
दिशिकी मर्यादा लावें । बाहर नहीं पांव हलावें । तामें भी पुरसर
सरिता । नित राखत अधसे डरता । सब अनर्थदंड ना करते ।
क्षण २ भिनधर्म सुमरते । द्रव्य क्षेत्र काल शुभ भावे । समता
सामायिक ध्यावे । प्रोषध एकाकी हो है । निष्किंचन मुनि ज्यों
सो हैं । परिग्रह परिणाम विचारें । नित नेम भोगका धोरें । मुनि
आवन बेला जावे । तब योग्य अशन मुख लावे । यों उत्तम
कारज करता । नित रहत पापसे डरता । जब निकट मृत्यु निज
जाने । तब ही सब ममता माने । ऐसे पुरुषोत्तम केरा । बुध-
जन चरणोंका चेरा ॥ वे निश्चय सुर पद पावें । थोड़े दिनमें
शिव जावें ॥

१ 'अगलित नीर-भासमानसे पड़े हुवे ओले या गड़े, बर्फ वा
अनछाणा पानी इनको नहीं खाना पीना चाहिये ।

२ अभक्ष्य जो २२ अभक्ष्य हैं सो धर्मात्माओंको खाने नहीं चाहिये ।

४ त्रसजीव=चलता हलता जीव । थावर=मिट्टी पानी आग हवा
वनस्पति । मृतका=मट्टी ।

अथ षष्ठम ढाल ।

जिसमें मुनिधर्मका कथन है ।

रोला छन्द—अथिर ध्याय पर्याय भोगसे होय उदासी ।
 नित्य निरंजन ज्योति आतमा घटमें भासी ॥ सुतदारादि बुलाव
 सर्वसे मोह निवारा । त्यागनगर वनघाम वास वन बीच विचारा
 ॥१॥ भूषण वसन उतार नग्न हो आतम चीन्हा । गुरुतटदीक्षा
 धार शीश कच लुंच जु कीन्हा ॥ त्रसथावरका घात त्याग मन
 चंच तन लीना । झूठ वचन परिहार गहें नहीं जल विन दीना
 ॥२॥ चेतन जड़ त्रिय भाग तजो भवभव दुःखकारा । अहि कंचुकि
 जो तजत चित्तसे परिग्रह डारा ॥ गुप्त पालने काज कपट मन
 चंच तन नाहीं । पांचों समिति सम्हाल परीषद सहि हैं आहीं
 ॥३॥ छोड़ सकल जगजाल आपकर आप आपमें । अपने हितको
 आप किया है शुद्ध नापमें ॥ ऐसी निश्चल काय ध्यानमें मुनिजन
 केरी । मानो पत्थर रची किषों चित्राम चितेरी ॥ ४ ॥ चारि
 घातिया घात ज्ञानमें लोक निहारा ॥ दे जिन मति उपदेश
 भव्योंको दुःखसे टारा । बहुरि अघातिया तोड़ समयमें शिवपद
 पाया । अलख अलङ्घित ज्योति शुद्ध चेतानि ठहराया ॥ ५ ॥
 काल अनन्तानन्त जैसे के तैसे रहिहैं । अविनाशी अविकार
 अचल अनुपम सुख लहिहैं । ऐसी भावना भाय ऐसे जो कार्य
 करे हैं । सांझी होय दुष्ट कर्मोंको हरे हैं ॥६॥ जिनके उर

१ अर्द्ध-सर्प । कंचुकी-सर्पकी काचली । जैसे सर्प काचलीको
 पुरानी निकम्मी समझकर त्याग करता है इसी तरह धर्मात्मा पुरुष
 परिग्रहको अति पापका मूल जानकर त्याग देते है ।

विश्वास वचन जिन शासन नाहीं ॥ ते भोगातुर होय सहेँ दुख
नकोँ माहीं ॥ सुख दुख पूर्व विपाक अरे मत कल्पे जीया ।
कठिन ९ कर मित्र जन्म मानुषका लीया ॥७॥ ताहि वृथा मत
खोय जोय आपा पर भाई ॥ गये न मिलती फेर समुद्रमें डूबी
राई । मला नर्कका बास सहित जो सम्यक पाता ॥
बूरे बने जो देव नृपति मिथ्या मद माता ॥ ८ ॥ ना खर्चे मन
होय नहीं काह्मसे लरना । नहीं दीनता होय नहीं घरका परि-
हरना ॥ सम्यक सहज स्वभाव आपका अनुभव करना । या विन
जप तप व्यर्थ कष्टके माहीं परना ॥ ९ ॥ क्रोड बातकी बात
अरे बुधजन उर घरना । मन वच तन शुचि होय गहो जिन
वृषका शरणा । ठैरिहँसौ पंचास अधिक नव सम्बत् जानो ॥ तीन
शुक्ल वैशाख ढाल षह शुभ उपजानो ॥ १० ॥

इति छह ढाला पण्डित बुधजनकृत सम्पूर्णम् ।

(२६) निशिमोजन कथा ।

(कविवर भूधरदासजीकृत)

दोहा—नमो शारदा सार बुध, करै हरै अघ लेप ।

निशमोजन मुंजन कथा, लिखूं सुगम संक्षेप ॥१॥

जम्बूद्वीप जगत् विख्यात् । भरतखंड छवि कहियन जात ॥
तहां देशकुरु जांगल नाम । हस्तनागपुर उत्तम ठाम ॥१॥ यशो-
भद्र भूपति गुण बास । रुद्रदत्त द्विज प्रोहित तास ॥ आश्वनि
मास तिथि दिन आराध । पंढरी पढ़वा कियो सराध ॥२॥ ब्रह्म

विनयसोः नगरी तवे । न्योतः निमायेः ब्राह्मण घने ॥ दानः सानः
 सबहीको दियो । आप विप्र भोजन नहिः कियो ॥४॥ इतने शंक
 पठायो दास । प्रोहित गयो रायके पास ॥ राम काज कछु ऐसो
 अयो । करत करावत सब दिन यो ॥५॥ निशिमैं नारि रसोई
 करी । चूल्हे ऊपर हांड घरी ॥ हींग लैन उठ बाहर गईः ।
 यहां विधाता औरहि ठई ॥६॥ मँडक उछल परो तामाहि । विभिः
 तहां कछु जानो नाहि ॥ बैंगन छोक दिये तत्काल । मँडक सरोः
 होय बेहाल ॥ ७ ॥ तबहु विप्र नहि आयो घाम । घरी उठायः
 रसोई ताम ॥ पराधीनकी ऐसी बात । औसर पायो आधा रातः
 ॥८॥ सोय रहे सब घरके लोग । आग न दीवा कर्म संयोग ॥
 भूखो प्रोहित निकस प्राण । तत्क्षण बैठो रोटी खान ॥९॥ बैंगन
 भेजे लीनो पास । मँडक मुँहमें आयो तास ॥ दांतन तले चबोः
 नाहि जब । काढ़ घरो आलीमें तवै ॥ १० ॥ प्रात हुए मँडक
 पहिचान । तौमी विप्र न करी गिलान ॥ थिति पूरी कर छोड़ी
 काय ॥ पशुकी योनि उपजो आय ॥११॥

सोरठा-घूघू कागै बिलावै साबर गिरैव पखेरुवा ।

सुर्कर अजगर भाव, बार्ध गोई जलमें मँगरा ॥१२॥

दश भव इहि विध आय, दसों जन्म नरकहि ग्यां । दुर्गति
 कारण पाय, फलो पाप बट वीजवत् ॥ १३ ॥

चौपाई-देशनाम करहाट सुखेत । कौशल्या नगरी छवि
 देत ॥ तहां संग्राम शूर भूपाल । बिना युद्ध क्षिति रिपुनाल ॥१४॥
 राजा प्रोहित लोमस नाम । तौकै तिय लोमा अभिराम ॥ तिनकै

रुद्रदत्तवर वही । महीदत्त सुत उपजो सही ॥ १५ ॥ खोटी संगतिके बश होय । सबै कुलक्षण सीखो सोय ॥ सबै कुव्यसन्न करै न कान । बहुत द्रव्य खोयो विन ज्ञान ॥ १६ ॥ मात पिता तब दियो निकास । मामाके घर गयो निरास ॥ तिन भी तहां न आदर कियो । शीश फेर पग आगे दियो ॥ १७ ॥ मारगके बश पहुंचो सोय । जहां बनरसको बन होय ॥ भेटे साधु अशुभ अवसान । नमस्कार कौनो तन मान ॥ १८ ॥ पूछ महीदत्त सिर नाय । मैं क्यों दुखी भयो मुनिराय ॥ पर उपकारी मुनिजन सही । पूरब जन्म कथा सब कही ॥ १९ ॥ निशमोजन तैं विरघो पाप । तांत भयो जन्म संताप ॥ फिर तिन दियो धर्म उपदेश । जातैं बहुर न होय कलेश ॥ २० ॥ गुरुकी शिक्षा ग्रह व्रत लये । मनके दुक्ख दूर सब गये ॥ कर प्रमाण आयो निज गेह । मात पिता अति कियो मनेह ॥ २१ ॥ स्वजन लोक मन अवरज भयो । देख सुलक्षण सब दुख गयो ॥ राजा बहुत कियो सनमान । भयो विप्र सुत सब सुख मान ॥ २२ ॥ बढ़ी संपदा पुन्यसंयोग । छहों कर्म साधे पुनं योग ॥ कियो देव मंदिर बहु भाय । सुव-रणमय प्रतिमा पधराय ॥ २३ ॥ धर्म शस्त्र लिखवाए जान । बहुविध दियो सुपात्रहि दान ॥ ऐसे धर्महेत धन बोय । उपजो

१३ बड़का बीज जरासा होता है और उसके बनेसे पेड़का विस्तार बहुत ही बढ़ा होजाता है । यही हाल पाप का है, जो करते वक्त तो अपनेको दबे चलाक समझकर खुश होते हैं और जब भोगना पड़ता है, नरकों निगोदोंका दुख तब रोते हैं ! याद करते हैं ! हाय ! मैंने ऐसे पाप क्यों करे, पंतु 'फिर पछताये होत क्या चिड़ियां चुन गईं खेत' ॥

अंत अच्युत सुर होय ॥२४॥ बद्धि आव जहां भोग विशाल ।
 सुखमें जात न जाने काल । थित अवसान तहां तै चयो । भरत-
 खंड सुमालुष भयो ॥२५॥ देश अवन्ती नगर उजैन । पिरथमिल
 राजा बहुसेन ॥ प्रेमकारिणी राणी सती । तिनके पुत्र भयो शुभ-
 मती ॥ २६ ॥ नाम सुधारस परम सुमान । रूपवंत गुणवंत
 महान । यौवन बेस विकार न कोय । भोग विमुख वरतै नित
 सोय ॥२७॥ धर्मकथारसरागी सदा । गीत निरत भावै नहि
 कदा । एक दिना बाढ़ीमें गयो । बनविहार देखन चित दियो
 ॥ २८ ॥ तहां एक जो वृक्ष महान । देखो सघन छांहि छवि-
 चान ॥ शाखा प्रतिशाखा बहु जास । बहु विधि पंछी पथिक
 निवास ॥२९॥ वन विहार कर फिरियो जवै । वज्र दह्यो तरु
 देख्यो तवै ॥ उर वैराग थयो तिहुकाल । जानो अथिर जग-
 तको ख्याल ॥३०॥ जो जगमें उपजे कछु लाय । सो सब ही
 थिर रह न कोय । विषटत बार लगै नहीं तास । तन धनकी
 सब झूठी आस ॥३१॥ काल अगनि जगमें लहलहै । सुके तृण
 सम सबको दहै ॥ यह अनादिकी ऐसी रीत । मोहि उदय
 समझै विपरीत ॥३२॥ यह विधि बुद्ध यथारथ भई । परमारथ
 पथ सन्मुख ठई । राजभोगसों भयो उदास । निस्पृह चित गयो
 गुरु पास ॥३३॥ सतगुरु साख योगपथ लियो । इच्छा छोड़
 घोर तप कियो ॥ ध्यान हुताशन हिरद जगी । समता-पवन पाय
 जगमगी ॥३४॥ कर्म काठ दाहे बहुभेव । भयो मुक्ति अजरामर देव ॥
 आत्मते परमात्म भयो । आवागमनरहित थिर थयो ॥ ३५ ॥

रजनी मुंजनकथा बरणई । यथा पुराण समापत्ति भई ॥ पापघर्मको
फल यह भाय । भली लै सो कर मन लाय ॥ ३६ ॥

सोरठा—प्रगट दोष अविलोय, निशमोजन करिये नहीं ।

इस भव रोग न होय, परभव सब सुख संपने ॥ ३७ ॥

छप्पय—कीड़ी बुध बलहरै कंपगद करै कसारी । मकड़ी
कारण पायकोढ़ उपमै दुख भारी ॥ जुआं जलोदर जनै फांस गल
विथा बढ़ावै । बाळ करे सुरमंग वमन माखी उपजावै ॥ तालुवे
छिद्र वीच्छु मखत और व्याधि बहु करहि थल । यह प्रगट दोष
निशमजनके । परभव दोष परोक्षफल ॥ ३८ ॥

दोहा—जो अब इहि दुखकरै, परभव क्यों न करेय ॥
इसत सांप पीड़ै तुरत, लहर न क्यों दुख देय ॥ ३९ ॥ सुवचन
सुनके क्रोध हो । मूरख मुदित न होय । मणिघर फग फेरे सही,
नदी सांप नहिं सोय ॥ ४० ॥ सुवचन सत्गुरुके वचन, आर
न सुवचन कोय । सत्गुर वही पिछानिये, जा उर लोभ न होय
॥ ४१ ॥ भूषर सुवचन सांभलो, स्वपर पक्ष करवौन । साबुत
महांमणी मिलै, तोड़ेसे गुण कौन ॥ ४२ ॥

॥ इति श्रीभूषरदासकृत निशमोजनकथा सम्पूर्णम् ॥

(२७) चौबीस दंडक ।

दोहा—बन्दो वीर सुधीरको, महावीर गंभीर ।

वर्द्धमान सन्मति महां, देवदेव अतिवीर ॥ १ ॥

गत्यागत्य प्रकाश जो, गत्यागत्य वितीत ।

अद्भुत अतिगतसुगति जो, जैनेश्वर जगजीत ॥ २ ॥

जाकी भक्ति बिना विफळ, गए अनंत काल ।

अग्नित गत्यागति धरीं, घटो न जगजंजाल ॥ ३ ॥

चौबीसौ दंडक विपै, धरीं अनंती देह ।

लक्ष्यो न निजपद ज्ञानविन, शुद्ध स्वरूप विदेह ॥ ४ ॥

जिनवाणी परसादतै, लहिये आंतमज्ञान ।

दहिये गत्यागत्य सब, गहिये पद निर्वाण ॥ ५ ॥

चौबीसौ दंडक तनी, गत्यागति सुनि लेहु ।

सुनकर बिरकत भाव घर, चहुंगति पानी देहु ॥ ६ ॥

चौपाई—पहिलो दंडक नारिकै तनो । भवनपती दैसँ दंडक
भनौ ॥ ज्योतिसे व्यंतरै स्वर्ग निवास । आवर पंच महांदुख रास
॥ ७ ॥ विकैलत्रय अरु नरै तिर्यञ्च । पंचेंद्री धारक परपंच ॥
यह चौबीस दंडक कहे । अब सुन इनमें भेद जु लहे ॥ ८ ॥
नारककी गति आगति देय । नर तिर्यञ्च पंचेंद्री जोय ॥ जाय
असेनी पहला लगे । मन विन हिंसा कर्म न पौ ॥ ९ ॥ सरी-
सर्प दूजे लौ जाय । अरु पक्षी तीजे लौ थाय ॥ सर्प जाय
चौथे लौ सही । नाहर पंचम आगे नहीं ॥ १० ॥ नारी छठे लगही
जाय । नर अरु मच्छ सातवें थाय ॥ एतौ नारक आगत कही ।

अब सुन नारककी गति सही ॥ ११ ॥ नरक सातवेंको जो जीव ।
 पशुगति ही पावे दुखदीव ॥ और सब नारक मर नर पशु ।
 दोड गति आवैं पर वसू ॥ १२ ॥ छट्ठेको निकसैं जु कदाप ।
 सम्यक् सहित श्रावगनिःपाप ॥ पंचम निकसौ मुनिहं होय ।
 चौथेको केवलिहू कोय ॥ १३ ॥ तीजे नर्कको निकसो जीव
 तीर्थकर भी हो जगपीव ॥ यह नारककी गत्यागती । भाषी
 जिनवाणीमें सती ॥ १४ ॥ तेरह दंडक देवनिकाय । तिनको भेद
 सुनों मनलाय । नर तिर्यच पंचेद्वी बिना । औरनको नहिं सुरपद
 गिना ॥ १५ ॥ देव मरैं गति पांच लहांहि । भूजल तरुवर नर
 तिर मांहि ॥ दूजे सुरग उपरले देव । थावर है न कहो जिनदेव
 ॥ १६ ॥ सहस्रारतैं ऊंचे सुरा । मरकर होवैं निश्चय नरा । भोग-
 भूमिके तिर्यच नरा । दूजे देवलोकतैं परा ॥ १७ ॥ जाय नहीं यह
 निश्चय कही । देवन भोग भूमि नहिं गही ॥ कर्मभूमियां नर
 अरु ढोर । इन बिन भोगभूमिकी ठौर ॥ १८ ॥ जाइन तातैं
 आगति दोई । गति इनको देवनकी होई ॥ कर्मभूमि या तिर्यग
 बुद्ध । श्रावकव्रत धर वारम शुद्ध ॥ १९ ॥ सहस्रार ऊपर तिर्यच ॥
 जाय नहीं तज है परपंच । अव्रत सम्यक्दृष्टी नरा ॥ वारम तैं
 ऊपर नहिं घरा ॥ २० ॥ अन्यमती पंचाग्नि साध । भवनंयक
 तैं जाइ न वाद ॥ परिव्राजक त्रिदंडी देह । पचम परैं न उपज
 जेह ॥ २१ ॥ परमहंस नामें परमती ॥ सहस्रार ऊपर नहिं गती ।
 मोख न पावें परमत मांहि । जैन बिना नहिं कर्म नसांहि ॥ २२ ॥
 श्रावक आर्य्य अणुव्रत धार । बहुरि श्राविका गण अविचार ॥
 सौलह स्वर्ग परैं नहिं जाय । ऐसो भेद कहै जिनराय ॥ २३ ॥

द्रव्य लिंग धारी जे जती । नव ग्रीवक ऊपर नहिं गती ॥ नवहिं
 अनोत्तर पंचोत्तरा ॥ महामुनि बिन और नहिं घरा ॥ २४ ॥
 कई बार जीव सुर भयो । पणके इक पद नहीं गह्यो ॥ इंद्र भयो
 न शचीहू भयो । लोकपाल कबहुं नहीं थयो ॥ २५ ॥ लोकांतिक
 हूवो न कदापि । नहीं अनोत्तर पहुंचो आप । ए पद घर बहु
 भवनहिं धरै । अल्प काल मैं मुक्ति हि वरै ॥ २६ ॥ है विमान
 सरवारथ सिद्धि । सबतैं ऊंचो अतुलसु रिद्धि ॥ ताके सिरपर है
 शिवलोक । परैं अनंतानंत अलोक ॥ २७ ॥ गत्यागत्य देव गति
 भनी । अब सुन भाई मनुष गति तनी । चौबीसौ दंडकके मांहि ।
 मनुष जांहि यामैं शक नाहि ॥ २८ ॥ मोक्षहू पावै मनुष मुनीश ।
 सकल घराको जो अवनीश ॥ मुनि बिन मोक्ष नहीं कोरु वरे ।
 मनुष बिना नहिं मुनिको तरै ॥ २९ ॥ सम्यक्दृष्टि जे मुनिराय ।
 भवनल उतरै शिवपुर जाय । जहां जाय अविनाशी होय ॥ फिर
 पाछैं आवैं नहिं कोय ॥ ३० ॥ रहैं शाश्वते शिवपुर मांहि । आत्म
 राम भयो सत नाहि ॥ गति पचीस कहीं नर तनी । आगति फुनि बाई-
 सहि मनी ॥ ३१ ॥ तेजकाय अरु बाई जुकाय । इन बिन और
 सबै नर थाय । गति पचीस आगत बाईस ॥ मनुषतनी जो
 भाषी ईस ॥ ३२ ॥ ताहि सुरासुर आत्मरूप ॥ ध्यावैं चिदानन्द
 चिद्रूप ॥ तौ उतरो भवसागर भया । और न शिवपुर मारग लया
 ॥ ३३ ॥ यह सामान्य मनुष्यकी कही । अब सुनि पदवीघरकी सही ॥
 तथिंकरकी दोय आगती । स्वर्ग नरकतैं आवैं सती ॥ ३४ ॥ फेरि न
 गति धरैं जगदीस । जाय विरामैं जगके सीस ॥ चक्री अर्धचक्री
 अरु हली । सुर्ग लोकतैं आवैं बली ॥ ३५ ॥ इनकी आगति

एक हिं जान । गतिकी रीति कहूं जो वखांनि । चक्रीकी गति
तीन जो होय । सुरग नरक अरु शिवपुर जोय ॥ १६ ॥ तप धारैं
तौ शिवपुर जांय । मरैं राजमें नरकहि ठांय ॥ आखरि मैं होय
पद निर्वाण । पंदवी धारक बड़े प्रधान ॥ १७ ॥ बलभद्रनको दोय-
हि गती । सुरग जांहि कै है शिवपती ॥ तप धारैं ए निश्चय
भया । मुक्ति पात्र ये श्रुत मैं लखा ॥ १८ ॥ अर्द्धचक्री कौ एकै
भेद । नारक जांय लहैं अति खेदः ॥ राज मांहि जो निश्चय मर ।
तद्ग मुक्तिपन्थ नहि धरैं ॥ १९ ॥ आखिर पावैं जिनवर
लोक । पुरुष शलाका शिवके थोक ॥ ये पद पाए कबहुं नहि
जीव ॥ ये पद पाय होय शिव पीव ॥ २० ॥ और हु पद कह्यक
नहि गहे । कुलकर नारदपद हु न लहे ॥ रुद्र भए न मदन
नहीं भए । जिनवर मातपिता नहि थए ॥ ४१ ॥ ये पद पाय
जीव नहीं रुलै । थोड़ेहि दिन मैं जिन सम तुलै ॥ इनकी
आगति श्रुतमें जानि । गतिको भेद कहूं जो वखांनि ॥ ४२ ॥
कुलकर देव लोक ही गहैं । मदन सुरग शिवपुरको लहैं । नारद
रुद्र अघोगति जाय । लहैं कलेश महा दुःख पांय ॥ ४३ ॥ जन्मां-
तर पावैं निरवान । बड़े पुरुष जे सुत्र प्रमान ॥ तीथकरके पिता
प्रसिद्ध । स्वर्ग जांयकै होहैं सिद्ध । ४४ ॥ माता स्वर्ग लोक ही
जांय । आखिर शिवपुर लोक लहांय । ये सब रीति मनुषकी
कही । अब सुन तिरयंचन गति सही ॥ ४५ ॥ पंचेंद्री पशु मरण
कराय । चौवासौ दंडकमें जाय ॥ चौवीसौ दंडकतैं मरै । पशू

४० पीव-स्वामी । ४३ मदन-कामदेव । ४४ जन्मांतर-थोड़े भव
पीछे मोक्ष पावे है । ४७ पय-रास्ता । ४९ काय-देह ।

होय तौ नाह न करे ॥ ४६ ॥ गती आगती कही चौबीस ।
 पंचेंद्री पशुकी जिन ईस । ता परमेश्वरको पथ गहौ ॥ चौबीसों
 दंडक नहिं लहौ ॥ ४७ ॥ विकलत्रयकी दश ही गती ।
 दश आगति कही जगपती ॥ पांचों थावर विकलजु तीन ।
 नर तिर्यंच पंचेंद्री लीन ॥ ४८ ॥ इनहीं दशम उपजै जाय ।
 पृथिवी पानी तरवर काय ॥ इनहीं तैं विकलत्रय आय । इस
 ही दसमें जन्म कराय ॥ ४९ ॥ नारक विन सब दंडक
 जोय । पृथ्वी पानी तरु वर सोय ॥ तेज वायु मरि नव में जाय ।
 मनुष होय नहीं सूत्र कहाय ॥ ५० ॥ थावर पंच विकल-त्रय ठौर ।
 ये नवगति भाषे मद मोर ॥ दसतैं आवै तेज अरु वाय । होय
 सहीगामें जिनराय ॥ ५१ ॥ ये चौईस दंडके कहे । इनकुं त्याग
 परमपद लहे ॥ इनमें ललै सु जगको जीव । इनतैं रहित सुनि
 भुवन पीव ॥ ५२ ॥ जीव ईशमें और न भेद । एकरमी वे कर्म उछेद ॥
 कर्मबंध जोलों जगभीव । नाशे कर्म होय शिव पीव ॥ ५३ ॥
 दोहा—मिथ्या अव्रत योग अर, मद परमाद कषाय ।

इंद्रिय विषय जु त्याग ये, अमन दूरि है जाय ॥

जिन विनगति भवतैं घरों, भयो नहीं सुर झार ।

जिन मारग उर धारिये, पह्ये भवदधि पार ॥ ५५ ॥

जिन भज सब परपंच तन, बढ़ी बात है येह ।

पंच महाव्रत धारिकै, भव जलको जलदेह ॥ ५६ ॥

अंतर करणजु सुष है, जिनधर्मी अभिराम ।

भाषा कारण कर सकूं, माषी दौलतगाम ॥ ५७ ॥

इति चौबीसदंडक सम्पूर्णम् ॥

(२८) कुगुरु, कुदेव, कुशास्त्रकी भक्तिका फल ।

अन्तर बाह्य ग्रन्थ नहिं, ज्ञान ध्यान तप लीन ।
 सुगुरु विन कुगुरु नमें, पड़े नक हो दीन ॥ १ ॥
 दोषरहित सर्वज्ञ प्रभु हित उपदेशी नाथ ।
 श्री अरिहंत सुदेव , तिनको नमिये माथ ॥ २ ॥
 रागद्वेष मलकर दुखी, हैं कुदेव जगरूप ।
 तिनकी वन्दन जो करें, पड़ें नर्क भवकूप ॥ ३ ॥
 आत्मज्ञान वैराग्य सुख, दया क्षमा सत शील ।
 भाव नित्य उज्जल करै, हे सुशास्त्र भवकील ॥ ४ ॥
 रागद्वेष इन्द्री विषय, प्रेरक सर्व कुशास्त्र ।
 तिनको जो वंदन करे, लहै नर्क विटगात्र ॥ ५ ॥

(२९) खोटे कर्मका फल ।

मद्य, मांस, मधु भक्षण करनेका फल—
 जो मतवारे होत ह, पीय मद्य दुख दाय ।
 उन्है पिलावत नरकमें, तांको लाल तपाय ॥ १ ॥
 और चद्रावत शूल पै, नरक निवासी कूर ।
 इस भव परभव मद्य है, दुखदाई भरपूर ॥ २ ॥
 जिन अंगन सों यह करै, औरनके तन खण्ड ।
 तिन अंगन कों नरकमें, करहिं असुर शतखण्ड ॥ ३ ॥
 मांस प्राणि भंडार हैं, निर्दय खात सदीव ।
 तन रोगी कर मरण है, होवे नाराकि जीव ॥ ४ ॥

मधु भक्षणके पापत, परै नरकमें आप ।
 मुंजै दुख चिरकाल लों, लहै अधिक सन्ताप ॥ ५ ॥
 मधु भक्षण तें जीवकी, दया दूर भनि जात ।
 पाप पंक संयोगतें, सम्यग् दृश्य नशात ॥ ६ ॥

हुक्का, गांजा, भांग पीनका फल—
 अगनीको अंगार ले, गांज तमाखू चस ।
 घरी भरी पीयी चिलम, हुक्कापै घर हर्य ॥
 ते नरकनिकी भूमिम, उपजै घृणत अघोर ।
 तांघो खूब तपायक प्यावें असुर कठार ॥

आत्मघातका फल—

आत्मघातीको लखो, कैसो होत हवाल ।
 हनवेको हुंकरत हैं नारकि अति विकराल ॥

मनुष्यघातका फल—

बिष दे अयवा और बिधि, करके क्रोध प्रचण्ड ।
 जिन मानुष मारे यहां, तिनके है शतखण्ड ॥

गर्भपातका फल—

कामी हो भिसने करो, परनर ते न्यमिचार ।
 गर्भ भयो तब लाज बश, कियो पात अघकार ॥
 तिनकी देखो नरकमें, होत दशा है कौन ।
 लै त्रिशूल तन छेदियों, हाय २ दुख भौन ॥

मेंढा बधका फल—

मेंढापै भिसने यहां, छुरी चलाई क्रूर ।
 लै करोत काटें लखो, तिनको दुख भरपूर ॥

जलचर मारनेका फल—

अग्नि कुंडमें रोपके, गलमें संकल डार ।
दंड खड़गले हाथमें, मारे तहं भयकार ॥
निर्दयी जाल बिछायके, पकड़ मच्छ अतिदीन ।
चरित ताको हो मगन, पड़ते नर्क कमीन ॥

पक्षी मारनेका फल—

पंखी मार पडथो नरक, कुम्भी पाकन मांढि ।
ऊपर कौए नोचते, भीतर पीड़ा पाहिं ॥

शिकार करनेका फल—

हरिण शशादिक भिबल जे, जंतु दीन अति भूर ।
तिनसे दिल वइलावको, करत शिकार जो क्रूर ॥
तिन पुरुषनकी नरकमें, लखो दुर्दशा हाय ।
व्याघ्रादिक हिंसक पशु, नोच २ के खाय ॥

कसाई कर्मका फल—

करें कसाई कूरजे, हिंसा कर्म अघोर ।
कुम्भीमें ते ऊपजें, करें भयंकर शोर ॥

घुना धान्य व्यवहारका फल—

वीधा अन्न अशोधकें, जो कूटें दिनरात ।
अर खावें होकर मगन, नर्क महा दुख पात ॥

रात्रिको भट्टी जलानेका फल—

भट्टी रात्रि जलायकें, करें विविध पकवान ।
जीव अनंता गिर मरें, बाधे पाप अजान ॥

नर्क पड़त दुःख बहु सहत, जलत कढ़ाई बीच ।
अर्द्ध दग्ध होकर करें, हाय हाय ते नीच ॥

परको बंधन करनेका फल—
निज कुटुम्बके हेतु निज, परको बंधन धीन ।
माया कीन्हीं अति घनी, बाधे पाप अधीन ॥
अशुभ कर्मके उदयते, कुगति लहें ते जीव ।
छेदन बंदन ताड़ना, बेधन सहें सदीव ॥

परको ताड़नेका फल—
लाठी मूसल विकट अति, चाबुक आदि प्रहार ।
निर्दय हो तन पीड़ते, बांधत पाप अपार ॥
पड़त नर्क संकट सहें, लहें मार विकराल ।
रोवत हैं रक्षक नहीं, बीतत बहुतहि काल ॥

इन्द्रिय छेदनका फल—
हाय पाप मैं क्या किया, छेदा मानुष चिन्ह ।
नर्क पड़ा असहाय हो, सहत दुःख हो सिन्न ॥

अधिक धोखा लादनेका फल—
चढ़ गाड़ी रथपै यहां, लादो बोझ अपार ।
तिनकी नरकानिमें दशा देखो हृदय विचार ॥
अति कठोर पाथारिनकी, भूमिमाहिं रथ जोर ।
बैल बनाके जोतके, मारें मार कठोर ॥

अन्न पान निरोधका फल—
चालक वृद्ध पशु वधू, जो अपने आधीन ।
खानपान कम देत हैं, समय टाल अति दीन ॥

इस हिंसाके पापते: पड़ै नर्क दुःख पात ।

नारकि बहु बिध मारते, देवें छाती लात ॥

अनछाने जलपानका फल—

अनछानो पानी पियो, तिनकी गतिं छख यार ।

उलटघो कर शिलमें धर्यो तापै मुद्गर मार ॥

रात्रिभोजनका फल—

हंसत हंसत निशिमें भखो, कन्दमूल मद मांस ।

नरकनिमें देवें तिनहिं, बुरी वस्तुको ग्रास ॥

झूठ बोलनेका फल—

झूठ वचन बोले घने, कूर कपटकी खान ।

तिनकी जिन्हा असुरगन, काटें छेदें जान ॥

विश्वासघातका फल—

देय भरोसा जिन यहां, कीना कपट अपार ।

नर्क पड़ै नारकि तिन्हें, पटकें मारें मार ॥

झूठी सौगंध खाय जे, चुगली करै बिगाड़ ।

नरकनमें जोरावरी, भूषे देत पछाड़ ॥

व्यापारमें झूठ बोलनेका फल—

वस्तु खरीदा अल्पमें, कहे अधिक हमदीन ।

घोर झूठ कहि पापले, पहुंचे नर्क कमीन ॥

झूठी गवाहीका फल—

देत गवाही झूठ जो, अपने स्वारथ काज ।

पाप बांध नरकहिं पड़ै, करते आत्म अकाज ॥

लोह मई कंटकनिष्ठी, शय्यापै पौदाय ।
मारै लङ्ग स्वहस्तलै हाय ! हाय ! बिछदाय ॥
आधिकारके गर्वका फल—

दगा द्रोहकरि जिन यहां, राज सत्त्वको पाय ।
दण्डित कौने दीनने, नर्कन पहुँचे जाय ॥
अगनि माहिं तिनको तहां, बैठावै दुखदाय ।
और करौती लेयके, चीरै मस्तक हाय ॥
जोटी निंदाका फल ।

सज्जनकी चुगली करी, अर निन्दा अति घोर ।
नरक माहिं तिस पापतें, परसत भूमि कठोर ॥
मार पड़त तहां बहुत विधि देख थरहरें आप ।
हाहा करि तहां कहत हैं, अब न करेंगे पाप ॥
चुगली आदि पापोंका फल—

जिन चुगली कीन्दी यहां, किये घनेरें पाप ।
नरक गयेतें देखलो काटें निच्छू सांप ॥
गिन देखी अरु बिन सुनी, करै पराई बात ।
पापपिंड जे मरत हैं, ते चण्डाल कहात ॥
पापोंपदेशका फल—

दे ज्जनेश सुपापके आप करावें पाप ।
लिखत त्वान हैं, देवें बहु संताप ॥
स्वादि दस्तावेज बनानेका फल—
परके ठगने कारण, झूठी लेख लिखाहिं ।
जीव लोभसे नक बा, अधिकहिं दुःख लहाहिं ॥

घरोहर कमती देनेका फल—

कर विश्वास सुद्रव्य बहु, राखा कोई पास ।

शूठ बोल कमती दिया, सहे नर्क बहु त्रास ॥

गुप्तमंत्र प्रगट करनेका फल—

दो जन बातें करत हैं, देख सैनसे कोय ।

कर प्रकाश हानी करत, पड़त नर्क दुःख होय ॥

चोरीका फल—

रस्ते चलते जिन्होंने, छूटे लोग अपार ।

नरक जाय कोल्हू पिले, और सही बहु मार ॥

चोरीकी प्रेरणाका फल—

चोरी जिन दूसरनते, करवाई घर प्यार ।

देखो मुद्गर मारतें, नरक माहिं बहु बार ॥

चोरीका माल लेनेका फल—

जो चोरीके मालको, जानबूझके लेंहि ।

उल्टे लटकावत तिन्हें, और त्रास बहु देहि ॥

खोटा न्याय करनेका फल—

बैठ भूप दरबारमें, न्याय धर्म कर हीन ।

बिन अपराधी दण्डिया, पड़ा नर्क हो दीन ॥

उलट्यो मस्तक रोपके, रस्सीतें कस काय ।

ताऊपर मुद्गरनकी, मर पड़े अधिकाय ॥

चोखी वस्तुमें खोटी वस्तु मिलाके बेचनेका फल—

चोखीमें खोटी मिला, कह चोखीका दाम ।

बेचत पाप कमाइया, पड़े नर्क दुःखधाम ॥

छेदत शिरं भाला लिये, दिसा काय विकराले ।

पाप कियो भव पीछले, अब उदयागत काल ॥

हीनाधिक तोलनेका फल—

कम देना लेना अधिक, कपट रचा घर लोभ ।

तीव्र पाप ते नरक जा, सहन कर चित्त क्षोभ ॥

धकधकात आगी पड्यो, हाथ हाथ चिछाय ।

तापे छे मुद्गर कठिन, मारें दया बिहाय ॥

तीर्थ भण्डार और देव द्रव्य खानेका फल—

श्री जिन सेवा कारण तीर्थ धर्मके काज ।

पैसा रुपया द्रव्य जो, रक्षक जैन समाज ॥

रक्षक यदि भक्षक भये, तीव्र लोभ लहि पाप ॥

नक जाय बहुकाल लों, भुगतै बहु संताप ॥

परस्त्री संगका फल—

निज नारी अर्द्धाङ्गिनी, दुख सुखमें सहकार ।

तासों प्रेम निवारकें, डोलत परतिय द्वार ॥

भोग परस्त्री रक्त हो, घोर नरकमें जाय ।

तस लोहकी पूतली, तिनते दई सटाय ॥

वेश्या कर्मका फल—

वेश्या विषय बिकारसे कर व्यभिचार विहार ।

नरक भूमिमें उपश्रकें, पावत कष्ट अपार ॥

मायाचारी हो यहां, बन छटै भरपूर ।

सो वेश्या पड़ नरकमें, सदै दुःख अति क्रूर ॥

कामचेष्टा करनेका फल—

कीन्ह बहुत घिनावनै कामरूप अविचार ।
तिनकी देखो वेदना, नरकनिकी भयकार ॥

कामानितुषणाका फल—

निशदिन काम कथा करै, धरै चित्त अतिकाम ।
न्याय अन्याय गिने नहीं, पड़े नरकके धाम ॥
रंजुपाशते बांधिके, अग्नि चितामें डारि ।
सहते पीर घिनावनी, जलत अंग दुखकारि ॥

व्यभिचारिणी स्त्रीका फल—

मोहित हूँ पर पुरुष संग, कीनो जो व्यभिचार ।
ता नरीकी दशाको, देखो सुजन विचार ॥
अग्नि शिखा त्रिच डारिके, छेदत अंग उपज्ज ।
देत दुःख नहीं कइ सकत, ऐसे करत कुदज्ज ॥

अनंगकाड़ा कानेका फल—

पुत्र जननके कारणे प्रगट कामके अंग ।
तिन्हैं छांड़ कामाधजन, राचैं और कुअंग ॥
महां पापसे नर्क जा होते नित्य अधीर ।
अंग छेद पीड़ा अधिक, सहते विक्रिय शरीर ॥

अलि आरम्भका फल—

होय लोलुपी जगतमें, बहु आरम्भ बढ़ाय ।
हिंसा कीनी उपजे, ते नरकनिमें जाय ॥

दान अं तरायका फल—

देत देखके दानको, दुखी होय जो मूक ।
नरकनिमें ताकी दशा, देखो मुखमें सूक ॥

सप्तत्रयमनका फल—

जुआ चोरी मांस मद, वेइया रमण शिकार ।
 पररमणीरत व्यसन ये, सात सेय दुखकार ॥
 पड़ै नरकम नारकी, तांवी प्यावे ताय ।
 मार मारके खह्गसे, करै दुर्दशा आय ॥

पतिको कष्ट देनेका फल—

भे नारी अति वुष्ट चित, स्वामीको दुख देय ।
 तीव्रभावते नरक लहि, बहुतहि कष्ट सहेय ॥

पतिकी आज्ञा न माननेका फल—

हितकारी पतिके वचन, करै निरादर जोय ।
 नर्कवास भयभीत लहि, मार धाड़ तहं होय ॥

अपनी मौतके वधेको दुःख देनेका फल—

दया रहित जे नारे हैं, बालक मौत निहार ।
 द्वेष बुद्धिसे जे दे पावे नर्क मंझार ॥
 छेदन भेदन दुख, तहं पावत दिन रैन ।
 जो परको दुख देत है, कैसे पावे चैन ॥

माता पिताकी आज्ञा अंग करनेका फल—

जगमें हितकारी बड़े, मात पिताके भैन ।
 करै निरादर दुष्ट सुत, पावे नर्क अचैन ॥

माता पिताके द्रोहका फल—

मात पिताने गोहवश, पाले पोषे पूत ।
 ते नारिके वश परे, दुखदाई भये ऊत ॥
 तिनकी छाती लात दे, भाला मारे शूर ।
 मात पिताके द्रोहते, पावे दुःख भरपूर ॥

(३०) मोहरस स्वरूप ।

भववन भटकत पाथिक जन, हाथी काल कराल ।
 पीछे लागो हो दुखित, पड़ो क्रूप विकराल ॥ १ ॥
 पकड़ शाख बट वृक्षकी, लटको मुंह फैलाय ।
 ऊपर मधु छत्ता लगा, पड़ो बूंद मुंह आय ॥ २ ॥
 निशि दिन दो चूहे लगे, काटत आयु डाल ।
 नीचे अजगर फाड़ मुख है निगोद भव जाल ॥ ३ ॥
 चारं सर्प चारों गति, चारों ओर निहार ।
 है कुटुंब माखी अधिक, चुंटत तन हरबार ॥ ४ ॥
 श्री गुरु विद्याधर मिले, देख दुखी भव जीव ।
 हो दयाल टेरत उसे, मत सह दुःख अतीव ॥ ५ ॥
 बून्द मधु है विषय सुख, ताके लालच काज ।
 मानंत, नहीं उपदेशको, कर रखो आत्म अकाज ॥ ६ ॥
 आयु डाल कुछ कालमें, कट जावेगी हाथ ।
 नीचे पड़ बहुकाल लों, मुगते फल दुःखदाय ॥ ७ ॥

(३१) लेश्या स्वरूप ।

माया क्रोध रु लोभ मद, है कषाय दुःखदाय ।
 तिनसे रंजित भाव जो, लेश्या नाम कहाय ॥ १ ॥
 षट् लेश्या जिनवर कही, कृष्ण नील कापोत ।
 तेज पद्म छट्टी शुक्ल, परिणामहिं तें होत ॥ २ ॥
 कठियारे षट् भावधर, लेन काष्ठको भार ।

वन चाले मूखे हुए, जामन वृक्ष निहार ॥ ३ ॥
 कृष्ण वृक्ष काटन चहे नील जुकाटन डाल ।
 लघु ढाली कापोत उर, पीत सर्व फल माल ॥ ४ ॥
 पद्म चहै फल पक्कको, तोड़ूं स्वाकं सार ।
 शुक्र चहै घरती गिरे, छं पक्के निरधार ॥ ५ ॥
 जैसी जिसकी लेइया, तैसा बांधे कर्म ।
 श्री सद्गुरु संगति मिले, मनका जावे भर्म ॥ ६ ॥

(३२) द्वादशानुभेक्षा ।

(पं० मुजालालजी विशारद महरोनी कृत)

उद्बोधन ।

भवदाहसे संतप्तजनको शान्तिकारी भावना ।
 इन्द्रिय विषय तन, भोगसे वैराग्यकारी भावना ॥
 मुनि चित्त प्यारी, कुणति हारी, श्रेयकारी भावना ।
 “मणि” हो निराकुल चित्तभावहु. नित्य बारह भावना ॥

उत्तंजन ।

हे आत्मन् ! तन, धन विनश्वर, क्या तुझे दिखता नहीं ? १
 यमसे ग्रसित क्या जीवको, कोई शरण दिखता कहीं ? २
 क्या है सुखी निश्चिन्त कोई इस दुखद संसारमें ? ३
 सुख स्वार्थके साधो स्वजन, क्या दीखते दुख धारमें ? ४
 परद्रव्य तुझसे भिन्न हैं तू एक इनको जानता ! ५
 मलमूत्रमय दुर्गंध तनको, रूप पना मानता ! ६

करता निरन्तर योगसे, आश्रव शुभाशुभ कर्मका । ७
 नहिं ध्यान है कुछ भी तुझै, संवर करन व्रत, धर्मका । ८
 जे पूर्व संचित कर्म ते विन निर्जरा नाहीं कर्म । ९
 समता विना तू नित्य भ्रमता हो दुखी तिहुंलोकमें । १०
 सब हैं सुलभ जगमें सु दुर्लभ ज्ञान-सम्यक् पावना । ११
 सुखकर सुवासन धर्म लख "मणि" नित्य भावहु भावना । १२

वारम्बार चिन्तवन—

धन, विभव, जीवन, राज्य, परिजन, सकल अथिर असार हैं ।
 इन्द्रिय जनित—सुख स्वप्नवत् क्षण सुखद पुन दुखकार हैं ॥
 यौवन जरासे ग्रसित है अरु भोग रोगोंसे भरे ।
 जग इन्द्रजालसमान है "मणि" । भूल क्यों इसमें परे । (अनित्य)
 छंह खण्डपति अरु इन्द्रका भी पतन जब अनिवार है ।
 तब रोक सक्ता कौन तुझको मृत्युसे, परिवार है ॥
 जगगहनवनमें कर्म हत जनको नहीं कोई शरण ।
 निजभाव निजको हैं शरण "मणि" धर्म वा श्री गुरु शरण ॥ २
 तिय, पुत्र विन कोई दुखी, तन रोगसे कोई दुखी ।
 निर्धन बिना धनके दुखी, धनवान तृष्णासे दुखी ॥
 चहुँगति विपतिमय जगतमें "मणि" चाहसे सब हैं दुखी ।
 तज चाह निज कल्याणमें लागे सदा वे ही सुखी ॥ (संसार) ३
 उत्पत्तिमें अरु मरणमें सुख, दुःख, योग, वियोगमें ।
 यह है अकेला जीव "मणि" दारिद्र, रोग सुभोगमें ॥
 जाता अकेला नरकमें सुरसुख अकेला छूटता ।
 करता अकेला कर्म अरु बँधता अकेला छूटता ॥ (एकत्वं) ४

सुरलोक ऊपर मागमें अरु अंतमें शिवलोक है ॥ लोक) १०
 दुर्लभ्य नित्य निगोदसे पर्याय थावर पावना ।
 दुर्लभ्य त्रस पर्याय पंचेंद्रिय मनुज श्रावकपना ॥
 दुर्लभ सु आयु, निरोगता, सत्संग संयम भावना ।
 दुर्लभ मिलो यह योग 'मणि' लहि 'बोधि' कर्म सिपावना ॥ १-१
 जो है अहिंसारूप वह हो धर्म जगत शरण्य है ।
 निज शुद्ध भाव अभिन्न नित्य पवित्र मित्र-अनन्य है ॥
 स्वर्धेनु, चिन्तामाणि कल्पतरु धर्मके किंकर सभी ।
 सब इष्ट दायक धर्म है 'मणि' धर्म मत भूलो कभी ॥ (धर्म) १२

उपसंहार—यह अनित्य असहोय जगत बहु दुःखमय
 जानो । मत अकेलों जीव बन्धु सब अन्य प्रमानो ॥ वह अशुचि
 नहीं नेह योग्य आश्रय दुःखकारी । सर्वर समता रूप निर्भर
 शिव सुखकारी ॥ इस चौदह राजू लोकमें दुर्लभ निज निधि
 पावना । जग शरण धर्म 'मणि' धितिये इम नित बारह भावना ।

(३३) करुणाष्टक भाष्य ।

(पं० पन्नालाल विशारद महरोनी कृत)

हे त्रिभुवन गुरु जिनवर, परमानन्दैक हेतु हितकारी ।
 करहु दया किङ्करपर, प्राप्ती ज्यों होय मोक्ष सुखकारी ॥ १ ॥
 हे अहं भवहारी, भव धितिये मैं भयो दुःखी भारी ।
 दया दीन पर कीजे, फिर नहीं भव वास होय दुःखकारी ॥ २ ॥
 जग उद्धार प्रभो ! मम कजे, उद्धार विषम भव जलसे ।

चार चार यह विनती करता हूँ मैं पतित दुखी दिलसे ॥ १ ॥
 तुम प्रभु करुणासागर तुम ही अशरण शरण जगत स्वामी ।
 दुखित मोह रिपुसे मैं यातें करता पुकार जिन नामी ॥ ४ ॥
 एक गांवपति भी जब करुणा करता प्रबल दुखित जनपर ।
 तब हे त्रिभुवनपति तुम करुणा क्या नहीं करोगे मुझपर ॥ ५ ॥
 विनती यही हमारी मंटो ससार भ्रमग भयकारी ।
 दुखी भयो मैं भारी तातें करता पुकार बहु वारी ॥ ६ ॥
 करुणामृग कर शीतल भव तप हारी चरण कमल तरे ।
 रहें हृदयमें मेरे जब तक हैं कर्म मुझे जग घेरे ॥ ७ ॥
 पद्मनन्दि गुण-वंदित भगवन् ! संसार शरण उपकारी ।
 अंतिम विनय हमारी करुणा कर करहु भव जलधि पारी ॥ ८ ॥

[३४] मंगलाष्टक ।

श्रीमन्नमुरासुरेन्द्रमुकुट-प्रद्योतरत्नप्रभा ।
 भास्वतपादनखेन्दवः प्रभावनांभोषाववस्थायिनः ॥
 ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः ।
 स्तुत्या योग्यजनैश्च पंचगुरुवः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ १ ॥
 नामेयादि जिनप्रशस्तवदनाः ख्याताश्चतुर्विंशति ।
 श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रमृतयो ये चक्रणो द्वादशः ॥
 ये विष्णु प्रतिविष्णुलालधराः सप्तोत्तारविंशति ।
 त्रैलोक्याभिपदाक्षिपष्टि पुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ २ ॥
 ये पंचौषधिकृद्भयः श्रुततपे वृद्धिगताः पञ्च ये ।

ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ विघ्नाश्चारिणः ॥
 पञ्चज्ञानधराश्च येऽपि विपुला ये बुद्धिऋद्धीश्वराः ।
 सप्तैते सकलाश्च ते मुनिवराः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ३ ॥
 ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः ।
 जम्बूशाल्मल्लिचैत्यशखिषु तथा वक्षारः रूप्याद्रिषु ॥
 इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे ।
 शैले ये मनुजोत्तरे जिनग्रहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ४ ॥
 कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे ।
 चंपायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्पेदशैलेर्हतः ॥
 शेषाणामपि चोर्जयन्ति शिखरे भेमीश्वरस्यार्हतः ।
 निर्वाणावनयः प्रसिद्ध विभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ५ ॥
 यो गर्भावतरोत्सवे भगवतां जन्मामिषेकोत्सवे ।
 यो जातः परिनिष्क्रमस्य विभवे यः केवलज्ञानभाक् ॥
 या कैवल्यपुरःप्रवेशमहिमा संपादिता भाविता ।
 कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥ ६ ॥
 जायन्ते जिन चक्रवर्तिबलभृद्भोगीन्द्रकृष्णादयोः ।
 धर्मादेवं दियङ्गनाङ्गविलसच्छशशश्चन्दनाः ॥
 तद्धीना नरकादियोनिषु नरा दुःखं सहन्ते ध्रुवम् ।
 स स्वर्गात् सुखरामनयिकपदं कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ७ ॥
 सप्पर्णे हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते ।
 संपद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विषत्ते रिपुः ॥
 देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे ।
 धर्मादेवं नभोपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥ ८ ॥

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्यत्करम् ।

कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थकराणां मुखाः ॥

ये श्रृण्वन्ति पठन्ति ते च सुजना धर्मार्थकामान्विता ।

लक्ष्मीराश्रित्य ते विपापरहिता कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ९ ॥

सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं ।

मुक्तिश्री नगराधिनाथ जिनपत्युक्तोपवगप्रदः ॥

धर्मः सूक्तिसुधाधि देव महिता चैत्यालयश्चालकः ।

प्रोक्तं तन्निविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ १० ॥

दिव्योऽष्टौ च जयादिकाः द्विगुणिताः विद्यादिकाः देवताः ।

श्री तीर्थकर मातृकाश्च जनकाः यक्षाश्च यक्षवास्तथा ॥

द्वात्रिंशन्निदशा गृहस्थितिसुराः दिक्कन्यकाश्चाष्टधा ।

दिक्पाला दशचेत्यमी सुरगणः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ११ ॥

(३५) शील माहात्म्यम् ।

जिनराजदेव कीजिये मुझ दीनपर करुणा । भविवृन्दको
अब दीजिये इस शीलका शरणा ॥ टेक ॥ शीलकी धारामें जो
स्नान करें हैं । मलकर्मको सो धोयके शिवनार वरें हैं ॥ वृतराज
सो वेताल व्याल काल डरें हैं । उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरें
हैं ॥ १ ॥ तप दान ध्यान जापजपन जोग आचारा । इस शीलसे
सब धमक मुंहका है उजारा ॥ शिवपंथ ग्रन्थ मंथके निर्ग्रन्थः
निकारा । विन शील कौन कर सके संसारमें पारा ॥ २ ॥ इस
शीलसे निर्वाण नगरकी है अवादी । त्रेषट् शलाका कौन ये ही

शील सवादी ॥ सब पूज्यके पदवीमें हैं परधान ये गादी ।
 अठारा सहस्र भेद भने वेद अवादी ॥१॥ इस शीलसे सीताका
 हुवा आगसे पानी । पुर द्वार खुला चलनिमें भरकूप सों पानी ॥
 नृप ताप टरा शीलसे रानी दिया पानी । गंगामें ग्राहसों बची इस
 शीलसे रानी ॥ ४ ॥ इस शील ही से सांप सुमनमाल हुआ है ।
 दुख अंजनाका शीलसे उद्धार हुआ है ॥ यह सिन्धुमें श्रीपालको
 आधार हुआ है । वप्राका परम शील ही से पार हुआ है ॥ ५ ॥
 द्रोपदीका हुआ शीलसे अम्बरका अमारा । जा धातुदीप कृष्णने
 सब कष्ट निवारा ॥ सब चन्दना सतीकी व्यथा शीलने टारी ।
 इस शीलसे ही शक्ति विशल्याने निकारी ॥ ६ ॥ वह कोटि शिला
 शीलसे लक्ष्मणने उठाई । इस ही से नागन था कृष्ण कन्हाई ॥
 इस शीलने श्रीपालजीकी कोढ़ मिटाई । अरु रनमंजूसाको
 लिया शील बचाई ॥ ७ ॥ इस शीलसे रनपाल कुंवरकी कटी वेरी ।
 इस शीलसे पिप सेठके नन्दनकी निबेरी ॥ झूलीसे सिंह पीठ
 हुआ सिंह ही सेरी । इस शीलसे करमाल सुमनमाल गलेरी ॥ ८ ॥
 सामन्तभद्रजीने यही शील सम्हारा । शिवपिंडते जिनचन्द्रका
 प्रतिधिम्व निकारा ॥ मुनि मानतुंगजीने यही शील सुघारा । तब
 आनके चक्रेश्वरी सब बात सम्हारा ॥ ९ ॥ अकलंकदेवजीने
 इसी शीलसे भाई । ताराका हरा मान विजय बौद्धसे पाई ॥
 गुरु कुन्दकुन्दजीने इसी शीलसे भाई । गिरनारपै पाषाणकी
 देवीको बुलाई ॥ १० ॥ इत्यादि इसी शीलकी महिमा है घनेरी ।
 विस्तारके कहनेमें बड़ी होयगी देरी ॥ पल एकमें सब कष्टको
 यह नष्ट करेरी । इस ही से मिली रिद्धिसिद्धि वृद्धि सबेरी ॥ ११ ॥

विन शील खता खाते हैं सब कांछके ढीले । इस शील विना
तंत्र मंत्र जंत्र हीकीले ॥ सब देव करें सेव इसी शीलके हीले ।
इस शील ही से चाहे तो निर्वाणपदी ले ॥ ११ ॥ सम्यक्तत्व
सहित शीलको पालें हैं जो अन्दर । सो शील धर्म होय है
कल्याणका मन्दिर ॥ इससें हुवे भवपार है कुल कौल और
चन्दर । इस शीलकी महिमा न सके भाष पुरन्दर ॥ १२ ॥
जिस शीलके कहनेमें थका सहस बदन है । जिस शीलसे भय
प्राय भगा क्रूर मदन है । सो शील ही भविवृन्दको कल्याण मंदन
है । दश पैड़ ही इस पैड़से निर्वाण सदन है ॥ १३ ॥

(३६) बार्हस्पत्य परीषद् ।

छप्पप-क्षुषा तृषा हिमै ऊर्ध्वं हसमसैक दुख भारी ।
निरावरण तन अरैति वेद उपजावन नारी ॥ चरैया औसैन शयैने
दुष्ट वीर्यक बध बन्धनै । यौवै नहीं अलौभ रोग तृणै परैत होय
तन ॥ भउ जनित मैनि सनमौने वश प्रेक्षा और अज्ञौन कर ।
दरशैने मलीन बार्हस सब साधु परीषद् जान नर ॥ १ ॥

दोहा-सूत्र पाठ अनुसार ये कहे परीषद् नाम ।

इनके दुख जो मुनि सहैं तिनप्रति सदा प्रणाम ॥ २ ॥

१ क्षुधा परीषद्-अनसन ऊनोदर तप पोषत पक्षमास
दिन जीत गये हैं । जो नहीं वेन योग्य भिक्षा विधि सुख अन्न
सब शिथिल भये हैं ॥ तब तहां दुस्सह भूखकी वेदन सहत
साधु नहीं नेक नये हैं । तिनके चरण कमलप्रति प्रति दिन
हाथ जोड़ हम शीश नये हैं ॥ ३ ॥

२ तृष्ण परीषह—पराधीन मुनिवरकी भिक्षा पर घर लेंय कहैं कुछ नाहीं । प्रकृति विरुद्ध पारण मुनित बढ़त प्यास की त्रास तहांही ॥ ग्रीष्मकाल पित्त अतिकोपै लोचन दोय फिरे जब जाहीं । नीर न चहैं सहैं ऐसे मुनि जयवन्ते वतों जग-माहीं ॥ ४ ॥

३ शीत परीषह—शीत काल सबही जन कम्पत खड़े तहां वन वृक्ष डहे हैं । झंझा वायु चलै वर्षात्रस्तु वर्षत बादल झूम रहै हैं ॥ तहां धीर तटनी तट चौपट ताल पाल परकर्म दहे हैं । सहैं सँमाल शीतकी बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥ ५ ॥

४ उष्ण परीषह—भूखप्यास पीड़े उर अन्तर प्रजुलै आंत देह सब दोगै । अग्नि सरूप धूप ग्रीष्मकी तातीवायु झालसी लागै ॥ तपैं पहाड़ ताप तन उपजति कोपै पित्त दाह ज्वर जागै । इत्यादिक गर्भकी बाधा सहैं साधु धीरज नहीं त्यागैं ॥ ६ ॥

५ ङन्समस्क परीषह—ङन्स मस्क माखी तनु काटैं पीड़ैं वन पक्षी बहुतेरे । डसैं व्याल विषहारे विच्छू लगैं खजूरे आन घनेरे ॥ सिंह स्याल मुन्डाल सतावैं रीछ रोझ दुख देहि घनेरे । ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे ॥ ७ ॥

६ नश्वर परीषह—अन्तर विषयवासना बरतै बाहर लोक लाज भय भारी । यातैं परम दिगम्बर मुद्रा घर नहिं सकैं दीन संसारी ॥ ऐसी दुर्द्धर नगन परीषह जीतैं साधुशील व्रतधारी । निर्विकार बालकवत निर्भय तिनके चरणों धोक हमारी ॥ ८ ॥

७ अरति परीषह—देशकालका कारण लहिकै होत अचैन अनेक प्रकारैं । तब तहां छिन्न होत अगवासी कलमलाय

थिरतापद छाड़ें ॥ ऐसी अरति परीषद् उपजत तहां धीर-धीरज
उरधारें । ऐसे साधुनको उर अन्तर बसो विरन्तर-नाम हमारे ॥९॥

८ स्त्री परीषद्—जो प्रधान केहरिको पकड़ै पकग पकड
पानसे चावें । गिनकी तनक देख भौं बांकी कांठिन सूर दीनता
जायें । ऐसे पुरुष पहाड उडावन प्रलय पवन त्रिय वेद परायें ।
धन्य धन्य वे सूर साहसी मन सुमेर जिनका नहिं कापै ॥१०॥

९ चर्या परीषद्—चार हात परवान परख पथ चलत
दृष्टि इत उत नहिं ताँनै । कोमल चरण कठिन धरतीपर धरत
धीर बाधा नही मानें ॥ नाग तुरङ्ग पालकी चढते तै सर्वादि याद
नहीं आनै । यों मुनिराज सहै चर्या दुःख तब दृढ़ कर्म कुलाचल
भानै ॥११॥

१० आसन परीषद्—गुफा मसान शैल तरु कोटर
निबसै जहां शुद्ध भूहरे । परमितकाल रहैं निश्चल तन बारबार
आसन नहीं फेरै ॥ मानुष देव अचेतन पशुकुल बैठे विपति आन
जब घरे । और न तजै मजै थिरतापद ते गुरु सदा बसो उर
मेरे ॥ १२ ॥

११ शयन परीषद्—जो प्रधान सोनेके महलन सुन्दर
सेज सोय सुख जावें । ते अब अचल अंग एकासन कोमल
कठिन भूमिपर-भोजें ॥ पाहनखण्ड कठोर कांक्षी गढत कोरका-
थर नही हंसे ॥ शयन परीषद् नीतैं ते मुनि कर्मकालिमां
जावें ॥ १३ ॥

१२ आक्रोश परीषद्—जगत जीव यावन्त चराचर
सबके हित सबको सुखदानी । तिन्हें देख दुर्वचन कइ खल

पाखंडी ठग यह अभिमानी ॥ मारो चाहि पकड़ पापीको तपसी
भेष चोर है छानी । ऐसे वचन बाणकी चेला क्षमा ढाल ओढ़ें
मुनि ज्ञानी ॥ १४ ॥

१३ वध बंधन परीषह-निरपराध निर्वैर महामुनि
तिनको दुष्ट लोग मिल मौर । कोई खैंच खंबसे बांधै कोई
पावकमें परजारै ॥ तहां कोप करते न कदाचित पूरव कर्मविपाक
बिचारै । समरथ होय सहे वध बंधन ते गुरु भव भव शरण हमारै ॥

याचना परीषह-घोर वीर तपकरत तपोधन अये
क्षीण सूखी गलबाहीं । अस्थि चाम अवंशेष रहो तन नसांजाल
झूलकै तिसमाहीं ॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जाउ
पर जांचत नाहीं । दुर्द्धर अयार्चक व्रत धौरै करै न मलिन धरम
परछाहीं ॥ १५ ॥

१५ अलाम परीषह-एकवार भोजनकी वेला मौन
साध बस्तीम आव । जो न बनै योग्य भिक्षाविधि तो महन्त
मन खेद न लावै ॥ ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतैं तब तपवृद्धि
भावना भावै । यों अलामकी परम परीषह सहे साधु सो ही शिव
पाव ॥ १६ ॥

१६ रोग परीषह-बात पित्त कफ श्रोणित चारों ये
जब घटें बढैं तनु माहीं । रोग संयोग शोक जब उपजत जगत
जाव कायर होजाहीं ॥ ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहे सूर उप-
चार न चाहि ॥ आतमलीन विरक्त देहसों जैनयती निज नेम
निवाहीं ॥ १७ ॥

१७ तृणस्पर्श परीषद्-सखेतृण जरु तीक्ष्णकटि-
कठिन कांकरी पांव-विदार । रज उड़ आत पड़े लोचनमें तीर-
फांस तनु पीर बिथार ॥ तापर पर सहाय नहीं बांछत अपने
करसैं काढ़ न डोरें । यों तृणपरस परीषद् विजयी से गुरु भव भव
शरण हमारैं ॥ १९ ॥

१८ मल परीषद्-यावज्जीव जल न्हौन तजो जिन नम
रूप बन थान खंडे हैं ॥ चले पसेव धूपकी बेला उड़त धूल सन
अंग भरे हैं ॥ मलिन देहको देख महामुनि मलिनभाव उर नाहिं
करैं हैं । यों मलजनित परीषद् जीतैं तिनहि हाथ हम सीस
धरे हैं ॥ २० ॥

१९ सत्कार पुरस्कार परीषद्-जा महान विद्यानिधि
विजयी निर तपसी गुण अतुल भरे हैं । तिनकी विनय वचनसे
अथवा उठ प्रणाम जन नाहिं करैं हैं ॥ तो मुनि तहां खेद नहीं
मानत उर मलीनता भाव हरे हैं ॥ ऐसे परम साधुके अहानिशि
हात जोड हम पांय परे हैं ॥ २१ ॥

२० प्रज्ञा परीषद्-तर्क छंद व्याकरण कलानिधि
आगम अलङ्कार पढजानैं । जाकी सुमति देख परवादी बिलखत
होय लाज उर आनैं ॥ जेसे सुनत नाद केहरिका वनगयंद भाजत
भयमानैं । ऐसी महाबुद्धिके भाजन पर मुनीश मद रंच न ठानैं ॥

२१ अज्ञान परीषद्-सावधान बैतै निशिवासर संय-
मझूर परम वैरागी । पालत सुति गये दीर्घ दिन सकल संग
ममता परत्यागी ॥ अविज्ञान अथवा मनपर्य्यय केवल ऋद्धि
न अजहूं जागी । यों विकल्प नहीं करैं तपोनिधि सो अज्ञान
विजयी बढभागी ॥ २२ ॥

२२ अदर्शन परीषह—मैं चिरकाल घोर तपकीनों अर्जों कादि अतिशय नहीं जाँगे । तपबल सिद्ध होत सब सुनियत सो कुछ बात झूठी लागै ॥ यों कदापि चितमें नहीं चिंतत सम-
कित शुद्ध शांति रस पाँगे । सोई साधु अदर्शन विनई ताक
दर्शनसे अघ भाँगे ॥ २४ ॥

किस २ कर्मके उदयसे कौन २ परीषह होती हैं—

ज्ञानावरणीतें दोई प्रज्ञा अज्ञान होई एक महा मोहतें
अदर्शन बखानिये । अन्तराय कर्मसेती उपजै अलाम दुख सप्त
चारित्र मोहनी केवल जानिये नगन निषव्या नारि मान सन्मा-
नगारि यांचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये । एकादश बाकी
रहीं वेदना उदयसे कहीं बाईस परीषह उदय ऐसे उर आनिये ॥

अडिह्ल एकवार इनमाहिं एक मुनि कै कही । सब
उनीस उच्छृष्ट उदय आवैं सही ॥ आसन शयन विहाय दाय
इन माहिंकी । शीत उष्णमें एक तीन य नाहिंकी ॥ २५ ॥



तृतीय खंड ।

(१) लघुःअभिषेक पाठ ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्धजगप्रयेशं
स्याद्वावादनायकमनन्तचट्टयार्हम् ॥

श्रीमूलसंघमुदशां मुकुतैकहेतु
जेनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाम्यध.यि ॥

[इस श्लोकको पढ़कर जिनचारणोंमें ऽष्पांजलि छोड़नी चाहिए)

श्रीमन्मन्दरमुदरे शुचिजलैर्धौतैः सुदर्भाक्षतैः

पीठे मुक्तिवरं निधाय, रत्नं त्वपादपद्मस्रजः ।

इद्रेऽङ्गं निजभूषणार्थं मिदं यज्ञोपवीतं दधे ।

मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जेनाभिषेकोत्सवे ॥

[इस श्लोकको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीत तथा नाना

प्रकारके सुंदर आभूषण धारण करना चाहिये)

सौगन्ध्यसंगतं ध्रुवतश्चकृतेन सौवर्ण्यमानमिव गंधमर्निधमादौ ।

आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्ध पादारविन्दमभिवन्ध जिनोत्तमानाम् ।

(इस श्लोकको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको अपने अंगमें चन्दनके नव तिलक करना चाहिये ।)

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदर्पयुता

विबोधाः । संरक्षणार्थं नृपतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य

भूमिम् ॥ (इसको पढ़कर अभिषेकके लिये भूमिका प्रक्षालन करे)

क्षीर्गर्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः प्रक्षालितं सुवैर्यदनेकवारम् ।

अत्युद्धतहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि स्वसंभवतापहारि ॥

(जिस पीठपर (सिंहासनपर) बिराजमान करके अभिषेक करना होवे उसका प्रक्षालन करना चाहिये ।)

श्रीशारदासुमुखनिर्गतवानवर्ण श्रीमंगलीकरसर्वजनस्य नित्यं ।
श्रीमत्स्वयं क्षयतयस्य विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णलिखित भिनमद्रपीठे ॥

(इस श्लोकको पढ़कर पीठपर श्रीकार लिखना चाहिये ।)

इन्द्राग्निद्वंद्वरनैर्ऋतपाशपाणि - वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिद्वाः स्वं स्वं प्रतीच्छत वर्णिभिनपाभिषेके ॥

(नीचेलिखे मंत्रोंको पढ़कर क्रमसे दश दिक्गणोंके लिये अर्घ्य चढ़ावो ।)

१ ॐ आ क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।

२ ॐ आ क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।

३ ॐ आ क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।

४ ॐ आ क्रौं ह्रीं नर्ऋत आगच्छ आगच्छ नैर्ऋताय स्वाहा ।

५ ॐ आ क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।

६ ॐ आ क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।

७ ॐ आ क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।

८ ॐ आ क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।

९ ॐ आ क्रौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीन्द्राय स्वाहा ।

१० ॐ आ क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

इति दिक्गणमंत्राः ।

दध्युल्ललाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण ।

त्रैलोक्यमंगलसुखानलहामदाह मारुतिकं तवविभोरवतारयामि ॥

सम्पूर्णशारदशशाङ्कमरीचिजालस्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुषवाहैः ।
सीरैर्जिनाः शुचितैरैरमिषिच्यमाणाः संपादयन्तु मम चित्तसमीहितानि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।)

दुग्धाब्जिवीचिपयसांचितफेनराशिपांडुत्वक्रांतिमवधारयतामतीव ।
दध्नां गता जिनपते प्रतिमां सुधारा सम्पद्यतां सपदि वांछितसिद्ध्ये वः ॥
(इस श्लोकको पढ़कर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।)

भक्त्या कलाटतऽदेशनिवेशितोच्चैः हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः ।
तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्यधारा सद्यः पुनातु जिनविम्ब गतैव शुष्मान् ॥
(इस श्लोकको पढ़कर इक्षुरसके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।)

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः सर्वाभिरौषधिभिरहंतमुज्ज्वलाभिः ।
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला कालेयकुङ्कुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥
(इस श्लोकको पढ़कर सर्वौषधीके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।)

द्रव्यैरनल्पधनसारचतुः समाधैरामोदवासितसमस्तदिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेनपयसा जिनपुङ्गवानां त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर केसर कस्तूरी कर्पूरादिसे बनाये हुये सुगंधित जलसे स्नपन करना चाहिये ।)

इष्टैर्मनोरथशतैरिव अव्यपुंसां पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिर्ध्वसानैः ।
संसारसागरविलंघनहेतुसेतुमाप्तावये त्रिभुवनैरुपति जिनेन्द्रम् ॥

(इस श्लोकको पढ़कर शेष बचे हुये सम्पूर्ण कलशोंसे अभिषेक करना चाहिये ।)

१. घृत दुग्ध दधि आदिके मिलानेसे सर्वौषधि होती है तथा कर्पूरादि सुगन्धद्रव्योंके मिलानेसे भी सर्वौषधि होती है ।

मुक्ति श्रीचनिताकरोदकपिदं पुण्याङ्करोत्पादकम् ।

नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रप्रदवीराज्याभिषेकोदकम् ॥

सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनकृता संवृद्धिसम्पादकम् ।

कीर्तिश्रीमयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गंधोदकम् ॥

(इस श्लोकको पढ़कर अपने अङ्गमें गंधोदक लगाना चाहिये ।)

इति श्री लघुरभिषेकविधिः समाप्तः ॥

(२) विनयपाठ ।

इहि विधि ठाहो होयके प्रथम पढ़े जो पाठ ॥

धन्य जिनेश्वर देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥ १ ॥

अनंत चतुष्टयके घनी तुमही हो शिरताज ॥

मुक्तिवधूके कंथ तुम तीन भुवनके राज ॥ २ ॥

तिहुँ जगकी पीडाहरण भवदधि शोषनहार ॥

ज्ञायक हो तुम विश्वके शिषसुखके करतार ॥ ३ ॥

हरता अघ-अंधियारके करता धर्मप्रकाश ॥

धिरता पद दातार हो धरता निजगुण रास ॥ ४ ॥

धर्मामृत उर जलधसों ज्ञान भानु तुम रूप ॥

तुमरे चरण-सरोजको नावत तिहुँ जगभूष ॥ ५ ॥

मैं बंदों जिनदेवको कर अति निरमल भाव ॥

कर्म बंधके छेदने और न कोई उपाय ॥ ६ ॥

भविजनको भविकूपतें तुमही काढ़नहार ॥

दीनदयाल अनाथपति आत्म गुण भंडार ॥ ७ ॥

चिदानंद निर्मल कियो धोय कर्मरज मैल ॥
 सरक करी या जगतमें भविनको शिव गैल ॥ ८ ॥
 तुम-पंद-पंकज पूजतैं विघ्न रोग टर जाय ॥
 शत्रु मित्रताको धरें विष निरविषता थाय ॥ ९ ॥
 चक्री खग अरु इन्द्रपद मिलैं आपतैं आप ॥
 अनुक्रम कर शिवपद लहै नेम सकल हन पाय ॥ १० ॥
 तुम विन मैं व्याकुल भयो जैसे जल विन मोन ॥
 जन्म जरा मेरी हरो कगे मोह स्वाधीन ॥ ११ ॥
 पतित बहुत पावन किये गिनती कौन करेय ॥
 अननसे तारे कुधी सु जय जय जय जिनदेव ॥ १२ ॥
 थकी नाव भविदधिविषैं तुम प्रभु पार करेय ॥
 खेवटिया तुम हो प्रभु सो जय जय जय जिनदेव ॥ १३ ॥
 राग सहित जगमें रुले मिले सरागी देव ॥
 वीतराग भैटो अबै भैटो राग कुटेव ॥ १४ ॥
 कित निगोद कित नारकी कित तिर्यच अज्ञान ॥
 आन घन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥ १५ ॥
 तुमको पूजैं सुरपति अहिपति नरपति देव ॥
 घन्य भाग मेरो भयो करनङ्गो तुम सेव ॥ १६ ॥
 अशरणके तुम शरण हो निराधार आधार ॥
 मैं दूबत भवसिंधुमें खेओ लगायो पार ॥ १७ ॥
 इंद्रादिक गणपति थकी तुम दिनती भगान ॥
 दिनती आपनी टारि कै कीजे आप समान ॥ १८ ॥
 तुमरी नेक सुदृष्टसे जग उतरत है पार ॥

हाहा हूबो जात हों नेक निहार निहार ॥ १९ ॥
 जो मैं कह ऊं औरसों ती न मिटै ठा झार ॥
 मेरी तो मोसों बनी तारैं करत पुकार ॥ २० ॥
 बंदों पाचों परमगुरु सुरगुरु वंदन जास ॥
 विघनहरन मंगलकरन पूरन परम प्रकाश ॥ २१ ॥
 चौविसों जिन पद नमों नमों शारदामाय ॥
 शिवमग साधक साधु नमि रचों पठ सुखदाय ॥ २२ ॥

(३) देवशास्त्रगुरुपूजा ।

ॐ नमः नमः नमः । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।
 णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरियाणं ।
 णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः ।

(यहां पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं,
 केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंतलोगुत्तमा,
 सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ।
 चत्तारिसरणं पव्वज्जामि—अरहतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्व-
 ज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पव्वज्जामि ॥

ॐ नमोऽहं स्व हा ।

(यहां पुष्पाञ्जलि क्षेप. करना चाहिये)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।

ध्यायेत्पञ्चनमस्कां सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।

यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ १ ॥

अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः ।

मङ्गलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः ॥ ३ ॥

एसो पंच णमोयारो सुवपावप्पणासणो ।

मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥

अहमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।

सिद्धचक्रस्य सङ्कीर्ण सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।

सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

(यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये ।)

(यदि अवकाश हो, तो यहांपर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना, नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढ़कर एक अर्घ चढ़ाना चाहिये।)

उदकचन्दनतंदुलपुष्पकैश्वरसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥ ७ ॥

ॐ श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगन्त्रयेशं

स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम् ।

श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतेकहेतु—

जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यषायि ॥ ९ ॥

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय

स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।

स्वस्ति प्रकाशसहजोज्जितदृढायाय

स्वस्ति प्रसन्नकलिताद्भुतवैमवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधमुष्णवाय

स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।

स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय

स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं ।

भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ॥

आलम्बनानि विविधान्यवरुण्य वरुणन् ।

भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥

अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि ।

वस्तून्यनूनमस्त्रिहान्ययमेक एव ।

अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ ।

पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ १२ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः
स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री
पद्मप्रभः । श्रीसुपार्थः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः । श्रीपुण्यदन्तः
स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः । श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः ।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति
श्रीशांतिः । श्रीकुण्डः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः । श्रीमहिकः स्वस्ति
स्वस्ति श्रीमुनिमुव्रतः । श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः ।
श्रीगंधः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः । (पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः ।

दिव्यावधिज्ञानबलपबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥

आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये ।

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि ।

चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविकोकनानि ।

दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्ब्रह्मन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्ध्या दशसर्वपूर्वैः ।

प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वः ।

नभोऽगणस्त्रैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥

अणिमिदक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्नि ।

मनोवपूर्वाग्वलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ६ ॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्वर्यं प्राकाम्यमन्तद्धिमथाप्तिमाप्ताः ।

तथाऽपतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।

ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥

आमर्षसर्वौषधयस्तथाक्षीविषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च ।

सखिल्लविडजल्लमलौषधोशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥

क्षीरं स्रवन्तोऽन्नं घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।

अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥

इति स्वस्तिमंगलविधानं ।

सर्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुमृतां पापसन्तापहर्ता ।

त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्धातिकर्षणशः ।

श्रीमान्निवाणसम्पद्द्वरगुप्तिकरालीढकण्ठः सुकण्ठै—

र्धेवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकरुणाणपुनाः ॥ १ ॥

जय जय जय श्रीसत्कातिप्रभो जगतां पते ।

जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मञ्जताम् ।

जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकुतेऽ नम्

जय जय जिनेश त्व नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । सर्वौषट् ।

(इत्याह्वाननम् ।) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

(इति स्थापनम् ।) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो
भव भव । वषट् । (इति सन्निधिकरणम्)

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति त्वत्पादपङ्केरुह-

द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते ।

मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां

दृग्दानेन मयि प्रसीद भवती सम्पूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर

अवतर संधौषट् । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान ! अत्र

तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान ! अत्र

मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः ।

तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतरः संवीषद् ।

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।

दुग्धाढ्यसंस्पर्धिगुणैर्जलोवैर्भिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणमहिताय अर्हत्परगोष्ठिने जन्मजगमृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्मितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्मजगमृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्मजरमृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यन्त्रिकोद्गमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान् ।

श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृङ्गैर्भिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणमहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्मितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यसरीन् सुभक्त्या ।

दीर्घाक्षताङ्गैर्धवक्रक्षत्तौर्धैर्भिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याह्लादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्या-
यसर्वसाधुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
विनीतमव्यावृजविबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् ।
कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामवाणविध्वंसनाय
पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याह्लादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय
कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्या-
यसर्वसाधुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
कुदर्यकन्दर्यविसर्पसर्पप्रह्मनिर्णाशनवैनतेयान् ।

प्राज्याज्यसारैश्चैरुमी रसाढ्यैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय
नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याह्लादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्या-
यसर्वसाधुभ्यः क्षुषारोगविनाशनाय नेवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमानधीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातिदीपान् ।

दीपैः कनत्काञ्चनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय
दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रादिगुणविराजमाना-
चार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति ।

दुष्टाष्टकर्मेष्वनपुष्टज्ञानसंघूपने भासुगधूपकेतुन् ।

धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं
निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्या-
यसर्वसाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुत्रादिवादाऽस्त्रलितप्रभावान् ।

फलैरलं मोक्षफलमिसौरिर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशदगुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं
निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय
सर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्धारिगन्ध क्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामरुघूपचूत्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्धनपुण्ययोग्यान् जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेऽहम् ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय
षट्चत्वारिंशदगुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय
सर्वसाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते

त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः ।

पुण्याढ्या मुनिराजक्रीत्तिसहिता मूर्त्वा तपोभूषणा

स्ते भव्याः सकलावबोद्धरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षेपण करना)

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः ।

सुमतिः पद्मभासश्च सुपाश्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥

चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवानन्मुनिः ।
 भेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥
 अनन्तो धर्मनामा च शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः ।
 अरश्च मणिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥
 हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
 ध्वस्तोपसर्गदित्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
 कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः ।
 एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलार्तिवः ॥ ५ ॥
 पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्मूरिभूतिभिः ।
 चतुर्विधस्य सङ्घस्य शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥
 जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
 सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ७ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
 सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
 चारित्र्यमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ९ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

अथ देवजयमाला प्राकृत ।

चत्ताणुद्धाणे नणघणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तघरु ।
 तुहु चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥ १ ॥
 जय रिसह रिसीसर णमियपाय । जय अभिय जियंगमरोसराय ।
 जय संभव संभवकय बिओय । जय अहिणंदण णंदियपओय ॥ २ ॥
 जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास । जय पउमप्पह पउमाणिवास ।
 जय जयहि सुपास सुपासगत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥ ३ ॥
 जय पुप्फयंत दंततरंग । जय सीयल सीयलवयणमंग ।
 जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जनाणपुज्ज ॥ ४ ॥
 जय विमल विमलगुणसेट्ठिठाण । जय जयहि अणंतानंतणाण ।
 जय घम्म घम्मतित्थयर संत । जय सांति सांति विहियायवत्त ॥ ५ ॥
 जय कुंयु कुंयुपहुअंगिसदय । जय अर अर माहर विहियसमय ।
 जय मल्लि मल्लि आदामगंध । जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ॥ ६ ॥
 जय णमि णमियामराणियरसामि । जय णेमि घम्मरहचक्खणेमि ।
 जय पास पासछिंदणकिचाण । जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥ ७ ॥

घत्ता ।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
 अणहणहिं अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविमि अरहंतावलिहिं ॥
 ॐ ह्रीं वृषमादिमहावीरान्तेम्यो महाध्वं निर्वणभीति स्वाहा ॥ १ ॥

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत ।

संपइ सुहकारण, कम्मधियारण, भवसमुद्धतारणत्तरण ।
 निणवाणि णमस्समि, सत्तपयास्समि, सगमोक्खसंगमकरण ॥ १ ॥

जिणंदमुहायो विणिगयतार । गणिंदविगुंफिय गंधपयार ।
तिलोयहिंमंडण धम्मह खाणि । सया पणमामि जिणिंदहवाणि ॥१॥
अवगहईहअवायजुएहि । सुवारणमेयहिं तिणिणसएहि ।
मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥२॥
सुदं पुण दोणिण अणेयपयार । सुवारहमेय जगत्तयसार ।
सुरिंदणरिंदसमाच्चिओ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥३॥
जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि । पयासइ पुण्णपुराकिउलद्धि ।
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदहवाणि ॥४॥
जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ । जु तिण्णविक्खलसरूव भणेइ ।
चउग्गइक्खण दज्जउ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥५॥
जिणिंदचरित्तविच्चित्त मुणेइ । सुसावयधम्महिं जुत्ति जणेइ ।
णिउग्गुवित्तिज्जउ इत्थु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥६॥
सुजीवअ नीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्ण विपाव त्रिबंघ विमुक्खु ।
चउत्थुणिउग्गु विमासिय णाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥७॥
तिमेयहिं ओहि विणाण विचित्तु । चउत्थु रिजेविउलंमइ उत्तु ।
सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥८॥
जिणिंदह णाणु जगत्तयमाणु । महात्तमणासिय सुक्खणिहाणु ।
पयच्चहुभत्तिभरेण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥९॥
पयाणि सुवारहकोडिसेयण । सुलक्खतिरासिय जुत्ति भरेण ।
सहस्सअठावण पंच वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥१०॥
इकावण कोडिउ लक्ख अठेव । सहस्स चुलसीदिसवा छक्केव ।
सढाइगवीसह गंधपयाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥११॥

अस्ता-इह निणवरवाणि विसुद्धमई । जो भवियणणियमण घरई ।

सो मुरणरिंदसंपय लहिवि । केवलणाण विउत्तरई ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं भिनमुखोद्धतस्याद्वादनयगर्भितुद्वादशांगश्रुतज्ञानाय
स्वर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलहकारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं ।

तव कम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महन्वयहं ॥ १ ॥

बंदामि महारिसि सीलवंत । पचेदियसंजम जोगजुत्त ।

जे म्यारह अंगह अणुसरंति । जे चउदहपुव्वह मुणि थुणंति ॥ २ ॥

पादाणु सारवार कुट्टुवुद्धि । उप्पण्णजाह आयासरिद्धि ।

जे पाणाहारी तोरणीय जे रुक्खमूल आतावणीय ॥ १ ॥

जे मोणिघाय चंदाहणीय । जे जत्थत्थवणि णिवासणीय ।

जे पंचमहन्वय धरणधीर । जे समिदि गुत्ति पालणाहि वीर ॥ ३ ॥

जे वड्ढहि देह विरत्तचित्त । जे रांयरोसमयमोहचत्त ।

जे कुगइहि सवरु विगयलोह । जे दुरियविणासण कामकोह ॥ ४ ॥

जे जल्लमल्ल तिणलित्त गत्त । आरम्म परिगह जे विरत्त ।

जे तिण्णकाल बाहर गमंति । छट्ठम दसमठ तउचरंति ॥ ५ ॥

जे इक्कास दुइगास लित्ति । जे णीरसभोयण रह करंति ।

ते मुणिवर बंदऊं ठियमसाण । जे कम्म उहइवरसुकक्षाण ॥ ६ ॥

बारह विह-संजम जे धरंति । जे चारिउं विकहा परहरंति ।

बावीस परीषह जे सहंति । संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ७ ॥

जे धम्मबुद्ध महियलि थुणंति । जे काउस्सगो णिस गमंति ।
 जे सिद्धिविलासणि अहिलसंति । जे पक्खमास आहार लिंति ॥९॥
 गोदूहणं जे वीरासणीय । जे घणुह सेज वज्जासणीय ।
 जे तवबलेण आयास नंति । जे गिरिगुहकंदर विवर थंति ॥१०॥
 जे सत्तुमित्त समभावचित्त । ते मुणिवरवंदउ दिढचरित्त ।
 चउवीसह गंथह जे विरत्त । ते मुणिवरवंदउं जगपवित्त ॥११॥
 जे सुज्झा णिज्झा एकचित्त । वंदामि महारिसि मोखपत्त ।
 रयणत्तरंजिय सुद्धमाव । ते मुणिवर वंदउं ठिदिसहाव ॥१२॥
 चत्ता-जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधूअणुराईया ।

रयणत्तरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मई झाईया ॥१३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुगविराजमानाचार्योपा-
 ध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

(४) देवशास्त्रगुरु भाषा पूजा ।

अडिल्ल-प्रथमदेव अरहन्त सु श्रुतसिद्धान्तजू ।

गुरु निर्ग्रंथ महन्त मुकतिपुरपन्थजू ॥

तीन रतन जगमाहिं सो ये भवि ध्याइये ।

तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा-पूजो पद अरहंतके, पूजो गुरुपद सार ।

पूजो देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ।

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा ।

अंति शोभनीकसुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा ॥

(८) मर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि. अग्र तसु बहुविधि नचूं ।

अर्हंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

-दोहा—मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ॥

जे त्रिजग उदरमंझार प्राणी, तपत अति दुद्धर खरे ।

तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥

तसु भ्रमरलोमित प्राण वावन, सरस चंदन घसि सचूं ।

। अर्हंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ २ ॥

-दोहा—चंदन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं ॥ २ ॥

यह भवसमुद्र अपार तारण—के निमित्त सुविधि ठई ।

अति-दृढ़ परमपावन अथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥

उज्जल अखंडित सालि तंदुल, पुंज घरि त्रयगुण जचूं ।

अर्हंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

-दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति, परम अखंडित वीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ १ ॥

जे विनयवंत सुमन्यउरअंबुजप्रकाशन. मान हैं ।

जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमार्हि. प्रधान हैं ॥

लहि कुन्दकमलादिक पहुप. भव भव कुवेदनसों बचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ४ ॥

दोहा—विविधमांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।

तासों पूजों परमपद; देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणबिध्वंसनाय पुष्पं ॥ ४ ॥

अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।

दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुडसमान है ॥

उत्तम छहौरसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशाय चरुं ॥ ५ ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीनें मोहतिमिर महाबली ।

तिहि कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाश जोति पभावली ॥

इह मांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा—स्वपरप्रकाशक जोति अति दीपक तमकरि हीन ।

जासों पूजों परमपद; देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

जो कर्म—ईधन दहन अभिसमूहसम उद्धत लसै ।

वर धूप तासु सुगन्धि ताकरि सकलपरिमलता हंसै ॥

इह मांति धूप चढ़ाय नित, भवज्वलनमाहिं नहिं पचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ७ ॥

दोहा—अभिमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन ।

जासों पूजों परम पद; देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा ।
 अति शोमनीकसुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा ॥
 भर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि. अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
 अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा—मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन ।
 नासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाथ जलं ।
 जे त्रिजग उदरमँझार मानी, तपत अति दुद्धर खरे ।
 तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥
 तसु भ्रमरलोभित घ्राण वाचन, सरस चंदन घसि सचूं ।
 अर्हत श्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ २ ॥

दोहा—चंदन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन ।
 नासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाथ चंदनं ॥ २ ॥
 यह भवसमुद्र अपार तारण—के निमित्त सुविधि ठई ।
 अति दृढ़ परमपावन जघारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
 उज्जल अखंडित सालि संदुल, पुंज घरि त्रयगुण जचूं ।
 अर्हत श्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा—संदुल सालि सुगंधि अति, परम अखंडित वीन ।
 नासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥
 ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ १ ॥
 जे विनयवंत सुमन्यउरजंबुनप्रकाशन भान हैं ।
 जे एकसुखचारित्र भाषत, त्रिजगमार्हि.प्रधान हैं ॥

लहि कुन्दकमलादिक पहुप. भव भव कुवेदनसों वचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ४ ॥

दोहा—विविधभांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।

तासों पूजों परमपद; देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ १ ॥

अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।

दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुडसमान है ॥

उत्तम छहौरसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशाय चरुं ॥ ५ ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महाबली ।

तिहि कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशनोति प्रभावली ॥

इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा—स्वपरप्रकाशक जोति अति दीपक तमकरि हीन ।

जासों पूजों परमपद; देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

जो कर्म—ईधन दहन अग्निसमूहसम उद्धत लसै ।

वर घूप तासु सुगन्धि ताकरि सकलपरिमलता हँसै ॥

इह भांति घूप चढ़ाय नित, भवज्वलनमार्हि नहिं पचूं ।

अर्हतश्रुतसिद्धांतगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ७ ॥

दोहा—अग्निमार्हि परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन ।

जासों पूजों परम पद; देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अं ट क र्म वि धां स नाय धूपं ॥ ७ ॥
 लोचन सुरसना त्राण उर. उत्साहके करतार हैं ।
 सोपै न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार हैं ॥
 सो फल चद्रावत अर्थ पूरन, परम अम्रतरम सचूं ।
 अर्हतश्रुतसिद्धांत गुरु निर्ग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ८ ॥
 दोहा-ने प्रधान फल फलविधैं, पंचकरण-रसलीन ।
 जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥
 ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥
 जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।
 वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनमके पातक हरूं ॥
 इहमांति अर्घ चद्राय नित भवि, करत शिवपंक्ति मचूं ।
 अर्हत श्रुत सिद्धांत गुरु, निर्ग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ९ ॥
 दोहा-वसुविधि अर्घ संनेयके, अति उछाह मन कीन ।
 जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥
 ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ ॥ ९ ॥
 अथ जयमाला ।
 दोहा-देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।
 भिन्न भिन्न कहूं आरणी, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥

चडकर्मकि त्रेसठ प्रकृति नाशि । जीते अष्टादशदोषराशि ।
 ने परम सुगुण हैं अनंत वीर । कहवतके छयांश गुण गंभीर ॥ २ ॥
 शुभ समवसरगशोभा अपार । शत इंद्र नमत कर शीस धार ।
 देवांविदेव अर्हत देव । वंदो मनवचतनकरि सु सेव ॥ ३ ॥

तिनकी धुनि है ओंकाररूप । निरअक्षरमय महिमा अनूप ।
 दश अष्ट महाभाषा समेत । लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥४॥
 सो स्यादवादमयं सप्त भंग । गणधर गूँथे बारह सु अंग ।
 रवि शशि न हरै सो तमहराय । सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥५॥
 गुरु आचारज उवझाय साध । तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध ।
 संसारदेह वैराग धार । निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥
 गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस । भवतारनतरन जज्ञान ईस ।
 गुरुकी महिमा वरनी न जाय । गुरु नाम जपों मनवचकाय ॥७॥
 सोरठा-कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै ।

‘द्यानत’ सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सूचना-आगे जिस भाईको निराकुलता व स्थिरता हो, वह नीचे लिखे अनुसार बीस तीर्थकरोंकी भाषा पूजा करे । यदि स्थिरता नहीं हो, तो इस पूजाके आगे पत्र २०५ में जो अर्थ लिखा है, उसको पढ़कर अर्थ चढ़ावै ।

(५) बीस तीर्थकर पूजा भाषा ।

दीप अढ़ाई मेरुपन, अब तीर्थकर बीस ।

तिन सबकी पूजा करूँ, मनवचतन धरि सीस ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरा ! अत्र अवतर अवतर ।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरा ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरा ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ।

इन्द्रफणीद्रनरेद्रबंध, पद निर्मलधारी ।

शोभनीक संसार, सार गुण हैं अविकारी ॥

क्षीरोदधिसम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार ।

सीमंघर जिन आदि दे, बीस विदेहमैश्वर ॥

श्रीजिनराज हो भव, तारणतरणजिह्वा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।

(इस पूजार्थ यदि बीस पुंज करना हो तो इस प्रकार मंत्र
बोलना चाहिये ।)

ॐ ह्रीं सीमंघर-युग्मंघर-बाहु-सुबाहु सजात-स्वयंप्रभु-वज्रभा-
नन-अनन्तवीर्य-सूरप्रभु-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-
सुंजगम-ईश्वर-नेमिप्रभु-वीरघेण-महामद्र-देवयशाऽजितवीर्येति वि-
ंशतिविद्यमानतीर्थकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा-
मीति स्वाहा ॥ १ ॥

तीन लोकके जीव, पाप आताप सताये ।

तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये ॥

बाबन चंदनसों अजूं (हो), अमनतपन निरवार । सीमं० ॥२॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो भवत्तापप्रविनाशनाय चंदनं
निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी ।

तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जग-नामी ॥

तंदुल अमल सुगंधसों (हो), पूजों तुम गुणसार । सीमं० ॥३॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥३॥

भावि-सरोज-विकाश, निचतमहर-रविसे हो ।

जतिश्रावकआचार कथनक्रो, तुम्हीं बड़े हो ॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदनप्रहार । सीमं० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥४॥

कामनाग विषधाम-नाशको गरुड़ कहे हों ।

क्षुधा महादबज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥

नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों मूखविडार । सीमं० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं ॥५॥

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाडिं भरयो है ।

मोह महातम घोर, नाश परकाश करचौ है ॥

पूजों दीपप्रकाशसों हो, ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं ॥६॥

कर्म आठ सब काठ,—भार विस्तार निहारा ।

ध्यान अगनिकर प्रगट, सर्व कीनों निरवारा ॥

घूप अनूपम खेचतें (हो), दुःख जलै निरधार । सीमं० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय घूपं ॥

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं ।

सबको छिनमें जीत, जैनके मेरु खरे हैं ॥

फल अति उत्तमसों जजों (हो), बांछित फल दातार । सी० ॥८॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ।

जल फल आठों दरब, अरघ कर प्रीति धरी है ।

गणधर इन्द्रनिहूतें, श्रुति पूरी न करी है ॥

‘द्यानत’ सेवक जानके (हो), जगते लेहु निकार । सीमं० ॥९॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविश्वतितीर्थकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० स्वाहा ।

अथ जयमाला आरती ।

सोरठा-ज्ञानपुष्पाकर चन्द्र, भविकत्वेतद्वित मेघ हो ।

प्रमतममान अमन्द, तीर्थकर वीसों नमों ॥ १ ॥

सीमन्वर सीमन्वर स्वामी । जुगमन्वर जुगमन्वर नाभी ।

बाहु बाहु जिन जगजन तारे । करम मुचाहु बाहुवल दारे ॥१॥

जात सुजात केवलज्ञान । स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधान ।

ऋषमानन ऋषि मानन दोष । अनन्त वीर्य वीरजकोष ॥ २ ॥

सौरीप्रभ सौरीगुणमाल । मुगुण विशाल विशाल दयाल ।

वज्रधार भवगिरिवज्रर हैं । चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥ ३ ॥

भद्रबाहु भद्रगिके करता । श्रीमुजंग मुजंगम भरता ।

ईश्वर सबके ईश्वर छानै । नेमिप्रभु बस नेमि बिरानै ॥ ४ ॥

वीरसेन वीरं जग जानै । महामद्र महामद्र बखानै ।

नमों जसोधर जसधरकारी । नमों अजितवीरज बलधारी ॥ ५ ॥

धनुष-पांचसै काय विगनै । आव कोढ़िपूष सब छानै ।

समवसरण शोभिन जिनराजा । भवजलतारनतरन जिहाजा ॥६॥

सम्यक् रत्नत्रयनिधि दानी । लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी ।

शत इन्द्रनिकरि वंदित सोहैं । सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥७॥

दोहा- तुमको पूजे वंदना, करे धन्य नर सोय । . .

‘द्यानत’ सरघा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविश्वतितीर्थकरेभ्योऽर्घ्यं निर्धपामीति स्वाहा ।

अथ विद्यमानवीसतीर्थकरोका अर्थ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पवैश्वरुसुदीपसुघृषफलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥१॥

ॐ ह्रीं सीमंघरयुग्मंघरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभुऋषभानन-
अनन्तवीर्यसूरप्रभुविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगमई-
श्वरनेमिप्रभुवीरसेनमहामद्रदेवयशोजितवीर्येति विंशतिविद्यमान-
तीर्थकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

(६) अकृत्रिम चैत्यालयोका अर्थ ।

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यानिलयान्नित्यं त्रिलोकीगतान् ।

वन्दे भावनव्यन्तरान्द्युतिवरान्करूपामरान्सर्वगान् ॥

सद्गन्धाक्षतपुष्पदामदामचरुकैर्दार्प्यैश्च धूपैः फलै-

नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये ॥१॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिनविम्बेभ्योऽर्घ्यं ।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।

यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम् ॥१॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां ।

वनमवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ॥

इह मनुजकृतानां देवरानार्चितानां ।

जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥२॥

जम्बूघातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-

श्चन्द्राम्भोजशिखण्डकण्ठकनकपावटघनाभाजिनः ।

सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकमेन्वना

मृतानागतवर्त्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ३ ॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे

वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकरुचिके कुण्डले मानुषाङ्के ।

इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके

ज्योतिर्लोकैऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयाणि ॥ ४ ॥

द्वौ कुन्देन्दुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ

द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ।

शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः सन्तप्तहेयप्रभा-

स्ते सज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिमकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामि ॥

इच्छामि भंते—चेद्दयमत्ति काओसगो कओ तस्सालोचेओ

अहलोय तिरियलोय उट्टुलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिण-

चेद्दयाणि ताणि सज्जाणि । तीसुवि लेएसु भवणवासियचाणवित-

रजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गन्धेण

दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण बुब्बेण दिव्वेण चुप्पेण दिव्वेण वासेण

दिव्वेण ह्माणेण । णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति ।

अहमवि इह संतो तत्थ संताई णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि

णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोद्धिलाओ सुगहगमणं समा-

हिमरणं जिणगुणयेपत्ति होउ मज्झं ।

(इच्छामि वादः । परिपुण्यांलि क्षिपेत्)

अथ पौर्वाहिकमाध्याह्निकअपराह्निकदेववन्दनायां पूर्वाचार्या-

नुक्रमेण सकलकर्मसयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरु-
भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(कायोत्सर्ग करना और नीचे लिखे मंत्रका नौबार जाप करना)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरीयाणं ।

णमो उवज्झायाणं, णमो छोए सन्वसाहूणं ॥

ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(७) सिद्धपूजा ।

उर्द्धवाधो रयुतं सविन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं

वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्त्वान्वितम् ।

अन्तःपत्रतटेष्णनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं

देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीमकण्ठीरवः॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर
अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहिते
भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सुक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।

वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयन्त्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं

हीनादिमावरहितं भववीतकायम् ।

रेवापगावरसरो-यमुनोद्भवानां

नीरैर्यजे कलशैर्वैरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं ॥ १ ॥

आनन्दजनकं घनकर्ममुक्तं

सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननातिवीतम् ।

सौरभ्यवासितमुचं हरिचन्दनानां

गन्धैर्यजे परिमलैर्वैरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं ।

सर्वानगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं

सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।

सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानां

पुञ्जैर्यजे शशिनिभर्वैरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदमाप्तये अक्षतं ॥ १ ॥

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं

द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।

मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां

पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वैरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं ।

वर्द्धस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं

ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।

क्षीराक्षसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-

नित्यं यजे चरुवैर्वैरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंसनाय नैवेद्यं ।

आतङ्कशोकमयरोगमदपशान्तं ।

निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम् ॥

कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-

र्दीपैर्यजे रुचिबैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीर्घं

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितान्तं ।

त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडं प्रदीपम् ॥

सद्द्रव्यगन्धधनसारविमिश्रितानां ।

धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं ।

सिद्धासुगदिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै-

र्ध्येयं शिवं सकलमव्ययनैः सुबन्धम् ।

नारिङ्गपूगकदलीफलनारिकेलैः ॥

सोऽङ्गं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं ।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः सङ्गं वरं चन्दनं ।

पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम् ॥

धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये ।

सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥ १० ॥

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं ।

सुक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ॥

कर्मौषकक्षदहनं सुखशल्पवीनं ।

वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति ।

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं ।

यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः ॥

सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽऽद्यावाधत्तासैर्गुणै-

र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११

(पुष्पाक्षरिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शान्त निरंश । निरामय निर्भय निमल हंस ॥

सुखाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ १ ॥

विदुरितसंसृतपाव निरङ्ग । समाप्तपूरित देव विसङ्ग ॥

अवन्ध कषायविहीन विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ २ ॥

निवारितदुष्कृतकर्मविपास । सदा मलकेवलकैलिनिवास ॥

भवोदधिधारग शान्त विमोह । प्रसिद्ध विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ ३ ॥

अनन्तसुखामृतपागर घोर । कलङ्करजोमलभूरिसमोर ॥

विस्त्रण्डितकाम विराम विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ ४ ॥

विकारविबर्णित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ॥

विहार विराव विरङ्ग विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ ५ ॥

रजोमलक्षेदविमुक्त विगात्र । निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ॥

सुदर्शनरामित नाथ विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ ६ ॥

नरामरवन्दित निर्मलभाव । अनन्तशुनीश्वरपूज्य विहाव ॥

सदोदय विश्वमहेश विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धममूह ॥ ७ ॥

विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र । परात्पर शंकर सार वितन्द्र ।
 विक्रोप विरूप विशङ्क विमोह । प्रसोद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥८॥
 अरामरणोज्झित धीतविहार । विधितत निर्मल निरहंकार ।
 अचिन्त्यचरित्र विदर्प विमोह । प्रसोद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥
 विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ । विमाय विक्राय विशब्द विशोभ ।
 अनाकुल केवल सर्व विमोह । प्रसीद्ध विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१०॥
 असमसमयसारं चारुवैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनंदीन्द्रवंद्यम् ।
 निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति
 सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥११॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन्यो महाधर्मं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आडिल्ल छन्द—अविनाशो अविकार परमरस धाम हो ।
 समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ॥
 शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनंत हो ।
 जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥१॥
 ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे ।
 नित्य निरंजन देव सरूपी हो रहे ॥
 ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिके ।
 सो परमात्म सिद्ध नमूं सिरनायके ॥२॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशते, गुण अनंतकी खान ।
 ध्यान घेरै सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

सोलहकारणका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्वरसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं ॥ १ ॥

दशलक्षणधर्मका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्वरसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्द्धवार्जवसत्यशौचसं-
न्यमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ्यं ॥ २ ॥

रत्नत्रयका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्वरसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे शिवरत्नमहं यजे ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोद-
शप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ पञ्चपरमेष्ठिजयमाला (प्राकृत)

मणुय—णाइन्द—सुरवरियछत्तया । पञ्चकल्लाणसुक्खावली पत्तया ॥

दंसणं णाण ज्ञाणं अणंतं बलं । ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥

जेहिं ज्ञाणगिगवणेहि अइयट्ठयं । जन्मजरमरणणयरत्तयं दइडयं ॥

जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं । ते महा दिंतु सिद्धावरं णाणयं ॥ २ ॥

पञ्चहाचारपञ्चगिगसंसाइया । वारसंगाइं सुयजलहिं अवगाइया ॥

मोक्खलच्छी महंती महं ते सया । सुरिओ दिंतु मोक्खं गया संगया ॥

चोरसंसारमीमाडवीकाणणे । तिकखवियराणहपावपञ्चाणणे ॥

णट्टमगाण जीवाण पइदेसया । वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥ ४ ॥

द्वगत्तवयरणकरणेहिं झीणं गया । धम्मवरज्ञाणक्खेक्खणाणं गया ॥
 णिळ्मरं तवसिरीं ऐ समाळिगया । साहवो ते महामोवस्सपहमगया ॥५॥
 एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए । गुरुयसंसारघणवेळि सो छिंदए ॥
 बहह सो सिद्धसुवखाइ वरमाणणं । कुणइ कम्मिषणं पुंजपज्जाकणं ॥६॥

आचार्य-अरहा सिद्धाहरिया, उवझाया साहू पञ्चपरमेष्टी ।

पयाण णमुक्कारो, भवे भवे मम सुहं दितु ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिन्योऽर्ध-
 महार्धं निर्वपाभीति स्वाहा ।

इच्छामि भंते पञ्चगुरुभक्ति कामोत्तमो कवो, तत्सालोचो
 अट्टमहापदि हेरसंजुत्ताणं अरहंताणं । अट्टगुण सपण्णाणं उद्धलो-
 यम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं । अट्टपवयणमाउसंजुत्ताणं आहरियाणं ।
 आयारादिसुदणायोवदेसयाणं उववझायाणं । तिरयण गुणपाकणर-
 याणं सव्वसाहूणं । णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि ।
 दुःखवस्सवो धम्मवस्सवो बोदिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिण-
 गुणसंपत्ति होउ मज्झं । इत्याशीर्वादः । (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

[९] समुच्चयचौकीसी पूजा ।

(कविवर वृन्दावनजीकृत)

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पदम सुगार्स जिनराय ।
 अन्द पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपुज पूजितसुरराय ॥
 विमल अनंत धर्मेनसदज्जक, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय ।
 मुनिमुन्नत नमि नेमि पार्सप्रसु, वर्द्धमानपद पुष्प चद्राय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र
अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशति-
जिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरा-
न्तचतुर्विंशति जिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

मुनिमनसम उज्जल नीर, प्रासुक गन्ध भरा ।

भरि कनककटोरी घीर, दीनीं धार धरा ॥

चौवीसों श्रीजिनचंद, आनन्दकंद सही ।

पदजनत हरत भवकंद, पावत मोक्षमही ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्ममरामृत्युविनाशनाय जलं ।
गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी ।

जिनचरनन देत चढ़ाय, भवआताप हरी ॥ चौवीसों ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं ।
तंदुल सित सोमसमान, सुंदर अनियारे ।

सुकताफलक्री उनमान, पुंन घरों प्यारे ॥ चौवीसों० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तेभ्योऽश्रयपदप्राप्तये अक्षतं ।

वरकंज कदंब कुरंद, सुमन सुगंध भरे ।

जिन अग्र घरों गुनमंड, कामकलंक हरे ॥ चौवीसों० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ।
मनमोदनमोदक आदि, सुंदर सद्य बने ।

रसपूरित प्रासुक स्वाद, जनत लुधादि हने ॥ चौवीसों ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुमारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।
तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगै ।

सब तिमिरमोह क्षय जाय, ज्ञानकला जागै ॥ चौवीसों० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाथ दीपं ।
दक्षगांध्र हुताशनमार्द्धि, हे प्रभु सेवत हों ।

मिस धूम करम जरि जांठि, तुम पद सेवत हों ॥ चौबीसों ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूरं निर्वपा० ॥

शुचि पक सरव फल सार, सब ऋतुके रचायो ।

देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौबीसों ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलगात्रये फलं निर्वपा० ॥

नरुफल आठों शुचि सार, ताको अर्घ करों ।

तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोच्छ वरों ॥

चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनंदकंद सही ।

पदजनत हरत भवकंद, पावत मोक्षमंडी ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घ्यपदगात्रये अर्घ्य ।

जयमाला ।

दोहा-श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाथ हितहेत ।

गारुं गुणमाला अबै, अजर अपरपदहेत ॥ १ ॥

द्यन्ता-जय भवतमंजन जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।

शिवमगपरकाशक अरिगननाशक, चौबीसों जिनराज बरा ॥ २ ॥

जय रिषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित जीत वसुधरि तुरन्त ।

जय समंव भवमय करत चूर । जय अभिनंदन आनंदपूर । ॥ ३ ॥

जय सुमति सुमतिदायक दयाल । जय पद्म पद्मदुति तनरसाल ।

जय जय सुपास भवपासनाश । जय चंद चंदतनदुतिपकाश ॥ ४ ॥

जय पुष्पदंत दुतिदंत सेत । जय शीतल शीतलगुननिकेत ।

जय श्रेयनाथ नुतसहस्रभुज । जय वासवपूजित वासुपूज ॥ ५ ॥

जय विमल विमलपददेनहार । जय जय अनंत गुणगन अपार ।
जय धर्म धर्म शिवधर्मदेत । जय शान्ति शान्तिपुष्टीकरेत ॥ ६ ॥
जय कुंतु कुंतुवादिक् रखेय । जय अर जिन वसुभरिक्षय करेय ॥
जय मल्लि मल्ल हृतमोहमल्ल । जय मुनिसुव्रत व्रतशङ्खदल्ल ॥ ७ ॥
जय नमि नित वासवनुत सपेम । जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम ॥
जय पारसनाथ अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगरसाथ ॥ ८ ॥

घत्ता-चौवीस जिनंदा आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी ।

तिनपदजुगचन्दा उदय अमंदा, वासववंदा हितधारी ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामोति स्वाहा ॥

सोरठा-मुक्तिमुक्तिदातार, चौवीसों जिनराजवर ।

तिनपद मनवचधार, जो पुनै सो शिव कहै ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः । (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(१०) सप्तत्रिंशत्पूजा ।

छप्पय-प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर ।

तोसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथौ वर ॥

पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि ।

सप्तम जयमित्राख्य सर्वचारित्रधामगनि ॥

ये सातों चारणऋद्धिधर, करूं तासु पद स्थापना ।

मैं पूजुं मनवचकायकरि, जो सुख चाहूं आपना ॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्रावतर अवतर सर्वौ-

षट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र भम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गीता छन्द ।

शुमतीर्थद्वय जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायके ॥

भव तृषा कंद निकंद कारण, शुद्ध घट भरवायके ॥

मन्वादि चारण ऋद्धिधारक, मुनिनकी पुजा करूं ।

ता करें पातक हरे सारे सकल अनंद विस्तारूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालसजय-
मित्रर्षिभ्यो जन्ममरामृत्यु विनाशनाथ जलं ॥ १ ॥

श्रोत्रण्ड कदलीनन्द केशर, मन्द मन्द घिसायके ।

तप्तु गन्ध प्रसरति दिग्दिगन्तर, भर कटोरी लायके ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालस-
जयमित्रर्षिभ्यो चन्दनं ॥ २ ॥

अति धवल अक्षत खण्डवर्जित मिष्ट राजनभोगके ।

कलधौत थारा भरत सुन्दर, चुम्बित शुभ उपयोगके ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षनाम्बु निर्वपामि ॥ ३ ॥

बहु वर्ण सुवर्ण सुमन आलं, अमर कमल गुलाबके ।

केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निन कर चावके ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

पद्मवान नाना भांति चातुर, राचत शुद्ध नये नये ।

सदृशिष्ट लाहू आदि भर बहु, पुष्टकर थारी लये ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

कलधौत दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृतसारसो ।

अति ज्वलित जगमग जोति जाकी, तिमिर नाशनहार सो ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

दिक्चक्र गंधित होत जाकर, धूप दशअंगी कही ।

सो लाय मन वच काय शुद्ध, लगायकर खेळं सही ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तविंशत्यो धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायके ।

द्रावही द्रादिम चारु पुंगी, थाल भर भरवायके ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तविंशत्यो फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु वर, दीप धूप सु लावना ।

फल कलित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥ म० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तविंशत्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

बन्दू ऋषिराजा, धर्मनहाजा, निजपर काना, करत भले ।

करुणाके धारी, गगनविहारी, दुख अपहारी, भरम दले ॥

काटत यमफन्दा, भविजन वृन्दा, करत अनंदा, चरणनमें ।

जो पूजें ध्यावें, मङ्गल गावें, फेर न आवें भववनमें ॥

पछड़ी छन्द ।

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत । त्रस थावरकी रक्षा करंत ॥

जय मिथ्यातमनाशक पतङ्ग । करुणारत्नपूरित अङ्गमङ्ग ॥ १ ॥

जय श्रीस्वरमनु अकलङ्करूप । पद सेव करत नित अमर मूप ॥

जय पञ्च अक्ष जीते महान । तप तपत देह कञ्चन समान ॥ २ ॥

जय निचय सप्त तत्त्वार्थभास । तप रमातनो तनमें प्रकाश ।

जय विषय रोष सम्बोध भास । परणतिके नाशन अचल ध्यान ॥ ३ ॥

जय जयहिं सर्वसुन्दर दयाल । लखि इन्द्रजालवत जगतमाल ॥

- जय तृष्णाहारी रमण राम । निज परणतिमें पायो विराम ॥ ४ ॥
- जय आनंदधन कल्याणरूप । कल्याण करत सबको अनूप ॥
- जय मदनान्न जयवान देव । निरमद विरचित सब करत सेव ॥ ५ ॥
- जय जेय विनयलालस अमान । सब शत्रु मित्र जानत समान ॥
- जय कृशितकाय तपके प्रभाव । छवि छटा उड़ति आनंददाय ॥ ६ ॥
- जयमित्र सकल जगके सुमित्र । अनगिनत अधम कीने पवित्र ॥
- जय चन्द्रवदन राजीव-नयन । कबहुं विकथा बोलत न वयन ॥ ७ ॥
- जय सातो मुनिवर एक सङ्ग । नित गगन गमन करते अमङ्ग ॥
- जय आये मथुरापुरमँझार । तहुँ मरीरोगको अति प्रचार ॥ ८ ॥
- जय जय तिन चरणोंके प्रसाद । सब मरी देवकृत भई बाद ॥
- जय लोक करे निर्भय समस्त । हम नमत सदा तिन जोर हस्त ॥ ९ ॥
- जय भीषम ऋतु पर्वतमझार । नित करत अतापन योग सार ॥
- जय तुषा परीषह करत जेर । कहुं रंच चलत नहिं मन सुमेर ॥ १० ॥
- जय मूल अठाइस गुणन धार । तप उग्र तपत आनन्दकार ॥
- जय वर्षा ऋतुमें वृक्षतीर । तहुँ अति शीतल श्लेख समीर ॥ ११ ॥
- जय शीत काल चौपटमँझार । कै नदी सरोवर तट विचार ॥
- जय निवसतध्यानारूढ़ होय । रन्चक नहिं मटकत रोम कोय ॥ १२ ॥
- जय मृतकासन वज्रसनीय । गौदूहन इत्यादिक गनीय ॥
- जय आसन नाना भांति धार । उपसर्ग सहत ममता निवार ॥ १३ ॥
- जो जपत निहारो नाम कोय । तिस पुत्र पौत्र कुल वृद्धि होय ॥
- जय भरे लक्ष अतिशय भण्डार । दारिद्र्यतनो दुख होय क्षार ॥ १४ ॥
- जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच । अरु ईतिभीत सब नसत सांच ॥
- जय तुम सुमरत सुख कहत लोक । सुर असुर नवत पद देत धोक ॥

शोला—ये सातों मुनिराज महातपलछपी घारी ।

परम पूज्य पद घरें सकल जगके हितकारी ॥

जो मन वच तन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावैं ।

सौ जन मनरङ्गलाल अष्ट ऋद्धनकौ पावै ॥

दोहा—नमत करत चरनन परत, अहो गरीब निवान ।

पञ्च परावर्तननिर्ते, निरवारौ ऋषिराज ॥

ॐ ह्रीं ऋषिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(११) अथ सोलहकारण पूजा ।

आडिल्ल—सोलहकारण भावं तीर्थकर जे भये ।

हरषे इन्द्र अपार मेरूपै ले गये ॥

पूजा करि निज घःय लख्यौ बहु चावसौ ।

हमह षोडशकारण भावैं भावसौ ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणानि ! अत्रावरावतर । संवोषट् ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्नि-
हितौ भव भव वषट् ।

चौपाई—कंचनझारी निर्मल नीर । पूजौं जिनवर गुणगंभीर ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थकरपददाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशा-
-य जलं ॥

चंदन घिस-कपूर मिलाय, पूजौ श्री जिनवरके पाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शन० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः चंदनं० ॥

तंदुल धवल सुगंध अनूप । पूजौं जिनवर तिहुंजगमूप ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शनवि० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अक्षतान् नि० ॥

फूल सुगंध मधुपर्गुनार । पूजौं जिनवर जगमाधार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शन० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पुष्पं नि० ॥

सदनेवन बहुविध पकवान । पूजौं श्री जिनवर गुणस्नान ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शनवि० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः नैवेद्यं नि० ॥

दीपकजोति तिमर छयकार । पूजू श्रीजिन केवलधार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥

दर्शविशुद्ध भावना माय । सोलह तीर्थकरपद दाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो दीपं नि० ॥

अगरुः सुगंध शुभ स्वेय । श्रीजिनवर आर्गे महकेय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शन० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो निर्वपामि ॥७॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार । पूजों जिन वांछितदातार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शन० ॥८॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो फलं ॥ ८ ॥

अरु फल आठों दरब चढ़ाय । 'धानत' व्रत करों मनलाय, -परम-
गुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शन० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्थं निर्वपामि ॥९॥

अथ जयमाला ।

दोहा-षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।

पापपुण्य सब नाशकै, ज्ञानभानु परकास ॥ १ ॥

दर्शनविशुद्ध धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥

विनय महा धारे जो प्रानी । शिववनिताकी सखी बखनो ॥२॥

शील सदा दिह जो नर पावैं । सो औरनकी आपश टाकैं ॥

ज्ञानाम्बास करै मनमांहीं । ताकै मोहमहातम नाहीं ॥३॥

जो संवेगभाव विस्तारै । सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥

दान देय मन हरष विशेषै । इइ भव जस परभव सुख देखै ॥४॥

जो तप तपै खपै अभिराष । चुरै करमशिलर गुरु भाषा ॥

साधुसमाधि सदा मम लावै । तिहुंनगभोगि भोग शिव जानै ॥५॥

निशदिन बैयावृत्य करैया । सौ निहचै भवनीर उरैया ॥

जो अरहंतभगति मन आनै । सो जन विषय कषाय न जानै ॥६॥

जो आचारनभगति करै है । सो निर्मल आचार धरै है ॥

बहुश्रुतवंतभगति जो करई । सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥७॥

प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानंददाता ॥
 षट्पावश्य काल जो साधै । सो ही रतनत्रय आराधै ॥ ८ ॥
 धरमप्रभाव करै जे ज्ञानो । तिन शिवमारग रीति पिछानी ॥
 वत्सलभंग सदा जो ध्यावै । सो तीर्थंकरपदवी पावै ॥ ९ ॥
 दोहा—एही सोलहभावना, सहित धरै व्रत भोग ।

देवहन्द्रनारवंधपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणैः पूर्णार्थः ।

(अर्थके बाद विसर्जन भी करना चाहिये)

(१२) दशलक्षणधर्मपूजा ।

अडिह—उत्तम छिमा मारंदव आरजवभाव हैं ।

शौच सत्य संजम तप त्याग उपाव हैं ॥

आकिचन ब्रह्मचर्य धरम दश साग हैं ।

चहुंगतिदुखैँ काढ़ि मुक्तिकरता हैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतः अवतर ! संवौषट् ।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो
 भव भव । वषट् ।

सौरठा—हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल मुरम ।

भव आताप निवार, दसलच्छन पूजो सदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामि ॥ १ ॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशो दिशा । भवभा० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चंदनं निर्वपामि ॥ २ ॥

अमल अखंडित सार, तंदुल चंद्रसमानं शुभ ॥ भवआ० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३॥

फूल अनेक प्रकार, महकैं ऊरघलोक लों ॥ भवआ० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षटरस-युत ॥ भवआ० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

जाति कपूर सुघार, दीपकजोतिः सुहावनी ॥ भवआ० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

अगर धूप विस्तार, फैलै सर्व सुगंधता ॥ भवआ० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

फलकी जाति अपार, घ्रान नयन-मनमोहने ॥ भवआ० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

आठों दरब सम्हार, 'द्यानत' अधिक उल्लाहसों ॥ भवआ० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्थं निर्वपामि ॥ ९ ॥

अंगपूजा ।

सोरठा—पीडें दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं ।

घरिये क्षमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

१ कहीं, २ सोरठा कहकर प्रत्येक धर्मकी स्थापना करते हैं और फिर आगेकी चौगाई तथा गीता कहकर अर्घ चढ़ाते हैं और कहीं २ सोरठाके अन्तमें भी अर्घ चढ़ाते हैं और चौगाई गीताके अन्तमें भी अर्घ चढ़ाते हैं । यथार्थमें सोरठा और चौगाई गीताके अन्तमें एक २ धर्मका अलग २ एक २ अर्घ चढ़ाना चाहिये ।

चौपाई मिश्रित गीताछंद ।

उत्तमक्षमा गहो रे भाई । इहमव नस परमव सुखदाई ॥
 गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥
 कहि है अयानो वस्तु छौनै, बांध मार बहुविधि करै ।
 धरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहां धरे ॥
 तैं करम पूरव क्रिये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा ।
 अति क्रोध अगनि बुझाय प्राणि, साम्य जल ले सीयरा ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
 मान महाविषरूप, करहि नीचगति जगतमें ।
 कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ॥ २ ॥
 उत्तम मार्दव गुन मन माना । मान करनकौ कौन ठिकाना ॥
 वस्यो निगोदमार्हितैं आया । दमरी रूंकन भाग विकाया ॥
 रूंकन विकाया भागवशतैं, देव इकहंझी भया ।
 उत्तम मुआ चंडाल हुआ, भूप कीडोंमे गया ॥
 जीतव्य—जोवन—धनगुमान, कहा करै जलबुदबुदा ।
 करि विनय बहुश्रुत बड़े जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥२॥
 ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
 कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना वसे ।
 सरल स्वभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥ १ ॥
 उत्तमआर्जवरीति बखानी । रंचक दगा बहुत दुखदानी ॥
 मनमें हो सो वचन उचरिये । वचन होय सो तनसौं करिये ॥

तत्त्वार्थसूत्रमें सत्यसे पहले शौचधर्मको कहा है, इस कारण इस
 पुत्रामे भी हमने तत्त्वार्थसूत्रके पाठादुष्टार शौचधर्मको पहले कर दिया है ।

करिये सरल तिहुंजोग अपने, देख निर्मल आरसी ।

मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अँगारसी ॥

। नहिं लहै ललमी अधिक छलकरि, करमबंधविसेखता ।

भय त्यागि दूष विलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

धैरि हरिदै संतोष, करहु तपस्या देहसौं ।

शौच सदा निर्दोष, धरम बड़ो संसारमें ॥ ४ ॥

उत्तम शौच सर्व जग जाना । लोभ पापको बाप बखाना ॥

आसपास महान् दुखदानी । सुख पावै संतोषी प्राणी ॥

प्राणी सदा शुचि शीलजपतप ज्ञानध्यानप्रभावतैं ।

नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिशेष स्वभावतैं ।

ऊपर अमल मल भरयो भीतर, कौन विष घट शुचि कहै ॥

बहु देह मैली सुगुनथैली, शौचगुन साधू लहै ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

कठिन वचन मति बोल, परनिंदा अरु झूठ तज ।

सांच जबाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥ ५ ॥

उत्तम सत्य बरत पालीजे, परविश्वास घात नहिं कीजे ।

सांचे झूठे मानुष देखो, आपनपूत स्वपास न पेखो ॥

पेखो तिहायत पुरुष सांचिको, दरब सब दीजिये ।

मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुण लख लीजिये ॥

ऊंचे सिंहासन बैठ वसुनृप, धर्मका भूति भया ।

बच झूठसेती नरक पहुंचा, सुरगमें नारद गया ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो ।

संजम रतन संमाल, विषयचोर बहु फिरत हैं ॥ ६ ॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे । भवमवके भाजैं अघ तेरे ।

सुरग नरक पशुगतिमें नाहीं । आलसहरन करन सुख ठाहीं ॥

ठाहीं पृथी जल आग आरुत, रूख त्रस करुना धरो ।

सपरसन रसना भ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥

जिस विना नहिं निजगाज सीझें, तू रूख्यो जगकीचमें ।

इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जममुखवीचमें ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तप चाहैं सुखराय, कर्म सिखरको वज्र है

द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निन सक्ति सम् ॥ ७ ॥

उत्तम तप सवमाहिं बखाना । कर्मशिखरको वज्र समाना ।

बस्यो अनादिगोदमंशारा । भूविकलत्रय पशुतन धारा ॥

धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता ।

श्रीजैनवांनी तत्वज्ञानी, भई विषमपयोगता ॥

अति महादुर्लभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै ।

नरमवअनूपमकनकधरपर, मणिमयी कलसा धरै ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

दान चार परकार, चार संघको दीजिये ।

धन विजुली उनहार, नरमव लाहो लीजिये ॥ ८ ॥

उत्तमत्याग कस्यो जगसारा । औषध शास्त्र अमय अहारा ।

निश्चय रागद्वेष निरवारै । ज्ञाता दोनों दान संमारै ॥

दोनों संमारै कूपजलसम, दरव घरमें परिनया ।

निजहाथ दीने साथ लीजे, खायाखोया वह गया ॥

धनि साधु शास्त्र अमयदिवैया, त्याग राग विरोधको ।

विन दान श्रावक साधु दोनों, लहै नहीं बोधको ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

परिग्रह चौविस भेद, त्याग करें मुनिरानजी ।

तिसनामाव उछेद, घटती जान घटाइये ॥ ९ ॥

उत्तम आर्किचन गुण जानौ । परिग्रहचिंता दुख ही मानौ ।

फाँस तनकसी तनमें सालै । चाह लंगोटीकी दुख भालै ॥

भालै न समता सुख कमी नर विना मुनिमुद्रा धरै ।

धनि नगनपर तन-नगन ठाढ़े, सुर असुर पायन पैं ॥

धरमाहि तिसना जो घटावैं, रुचि नहीं संसारसौ ।

बहु धन बुराहू मला कढिये, लीन पर उपगारसौ ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्किचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा ॥९॥

शीलवाढ़ि नौ राख, ब्रह्मभाव अन्तर लखो ।

करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नरभव सदा ॥१०॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनो । माता बहिन सुता पहिचानो ॥

सहै वानवर्षा बहु सूरै । टिकै न नैन वान लखि कूरै ॥

कूरै त्रियाके अशुचितनमें, कामरोगी रति करै ।

बहु मृतक सहहि, मसानमाहीं, काक ज्यों चौंच भैं ।

संसारमें विषबेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा ।

‘धानत’ धरमदशपेंड़ि चढ़िकै, शिवमहलमें पग धरा ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा ॥१०॥

अथ जयमाला !

दोहा-दशलक्षण वंदौ सदा, मनवंचित फलदाय ।

कहौ आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥ १ ॥

उत्तम क्षमां जहां मन होई । अंतरबाहर शत्रु न कोई ॥

उत्तममार्दव विनय प्रकासै । नाना भेद ज्ञान सब भासै ॥ २ ॥

उत्तमभार्जव कपट मिटावै । दुरगति त्यागी सुगति उपजावै ॥

उत्तमशौच लोभ परिहारी । संतोषी गुनरतनमँडारी ॥ ३ ॥

उत्तमसत्यवचन मुख बोले । सो प्राणी संसार न डोलै ।

उत्तमसंयम पाळै ज्ञाता । नरभव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥

उत्तमतप निरवांक्षित पाळै । सो नर करमशत्रुको टालै ॥

उत्तमत्याग करै जो कोई । भोगीभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥ ५ ॥

उत्तमआर्किचनव्रत धारै । परमसमाधिदशा विसतारै ॥

उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै । नरसुरसहित मुक्तिफल पावै ॥ ६ ॥

दोहा-करै करमकी निर्जरा. भवपीनरा विनाशि ।

अजर अमरपदको लई, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागार्किचन्य
ब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना)

(१३) पञ्चमेरुपूजा ।

तीर्थकरोके न्हवनजलतैं, भये तरिथ शर्वदा ।

तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरनकी सदा ॥

दो जलधि ढाईदीपमें सव, गनतमूल विराजही ।

पूजौं असी निजधाम प्रतिमा, होहि सुख, दुख भाजही ॥१॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिअस्सीचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।

अत्रावतरावतर । संवोषट् ।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिअस्सीचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।—

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिअस्सीचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।

अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टक ।

चौपाई आंचलीबद्ध (१९ मात्रा)

सीतलमिष्टसुवास मिलाय । जलसौं पूजौं श्री जिनराय ॥

महांसुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥

पांचों मेरु असी निजधाम । सब प्रतिमाजीको करों प्रणाम ॥

महांसुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं ॥१॥

जल केशरकरपूरमिलाय । चन्दनसौं पूजौं श्रीजिनराय ॥

महांसुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों ॥२॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं ।

अमल अखंड सुगंध सुहाय । अच्छतसौं पूजौं जिनराय ।

महांसुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचौं० ॥३॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थविम्बेभ्यो अक्षतान् ।

वरन अनेक रहे महंकाय, फूलनसौं पूजौं जिनराय ।

महांसुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥४॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यः पुष्पं ॥

मनवांछित बहु तुरत बनाय । चरुसौं पूजौं श्री जिनराय ।

महांसुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥५॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो नैवेद्यं ॥

तमहर उज्जल जोति नगाय दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय ।

महांसुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥६॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो दीपं ॥

खेडं अगर परिमल अधिकाय । धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय ।

महांसुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥७॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो धूपं ॥

सुरस सुवर्ण सुगंध सुमाय । फलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।

महांसुख होय, देखे नाथ परम सुख होय । पांचौं० ॥८॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यः फलं ॥

आठ दरबमय अरघ बनाय । 'दानत' पूजौं श्रीजिनराय ।

महांसुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥९॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनविम्बेभ्यो अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा ।

प्रथम सुदर्शन स्वाम, विजय अचल मंदर केहा ।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥ १ ॥

बेसरी छंद ।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै । भद्रशाल वन भूपर छाजै ।
चैत्यालय चारों सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ १ ॥
ऊपर पंच शतकपर सोहै । नंदनवन देखत मन मोहै ॥ चै० ॥ १ ॥
साढ़े बासठ सहस ऊंचाई । वन सौमनस शोभा अधिकाई ॥ २ ॥
ऊंचा जोजन सहस छतीसं । पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥ चै० ॥ ५ ॥
चारों मेरु समान बखानो । भूपर भद्रशाल चहुं जानो ॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ ६ ॥
ऊंचे पांच शतकपर माखें । चारों नंदनवन अभिलाखे ॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ ७ ॥
साढ़े पचपन सहस उतंगा । वन सौमनस चार बहुरंगा ॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ ८ ॥
उच्च अठाइस सहस बताये । पांडुक चारों नव शुभ गाये ॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ ९ ॥
सुरनर चारन वंदन आवैं । सो शोभा हम किह सुख गावैं ॥
चैत्यालय अस्सी सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ १० ॥
दोहा-पंचमेरुकी आरती, पढ़े सुनै जो कोय ।

‘धानत,’ फल जानैं प्रभु, तुरत महांसुख होय ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंवधिअस्सीजिनचत्त्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये)

(१४) रहस्यपूजा ।

दोहा-चहुंगतिफणिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार ।

शिवसुखमुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्रावतरावतर । संबोपट् ।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितौ भव भव । वषट् ।

सोरठा-क्षीरोदधि उनहार, उज्जल जल अति सोहना ।

जनमरोगनिरवार, सम्यग्रत्नत्रय यज्ञो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मजरामृत्युरोगविनाशनाय जलं ॥ १ ॥

चंदन केसर गारि, परिमल महां सुगंधमय । जन्मरो० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चंदनं ॥ २ ॥

तंदुल अमल चितार, वासमती सुखदासके । जन्मरो० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥ ३ ॥

महकै फूल अपार, अलि गुनै ज्यो श्रुति करे । जन्मरो० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामवाणविघ्नसनाय पुष्पं ॥ ४ ॥

काद्व बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत । जन्मरो० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय शुभारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपरतनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें । जन्मरो० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूरकी । जन्मरो० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

फलशोभा अधिकार ळोंग छुहारे जायफल । जन्मरो० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

आठदरव निरधार, उत्तमंसों उत्तम लिये । जन्मरो० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ९ ॥

सम्यकदर्शनज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।

पार उतारन ज्ञान, 'धानत' पूजौं व्रतसहित ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

दर्शनपूजा ।

दोहा-सिद्ध अष्टगुणमय प्रगट, मुक्तमहलसोपान ।

जिहविन ज्ञानचरित अफल, सम्यकदर्श प्रधान ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । सन्निहितौ भव भव वषट् ।

सोरठा-नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल क्षय करै ।

सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

जल केसर धनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकद० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अक्षत अनुप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यक० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान्निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकद० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

नेवज विविधप्रकार, छुषा हरै धिरता करै । सम्यकद० ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

दीपज्योति तमहार घटपट परकाशै महं । सम्यकद० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

धूप प्राणसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै । सम्यकद० ॥७॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफलआदि विधार, निहचे सुराशिवफल करै । सम्यकद० ॥८॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फड फूल चरु । सम्यकद० ॥९॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति ॥९॥

जयमाला ।

दोहा- आपभाप निहचै लखै, तत्वप्रीति व्योहार ।

रहितदोष पच्चीस है, सहित अष्ट गुन सार ॥१॥

चोपाइमिश्रित गीता छन्द ।

सम्यकदर्शन रतन गहीजे । जिनवचमैं संदेह न कीजे ।

इहभव विभवचाह दुखदानी । परभवभोग चहै मत प्रानी ॥

प्रानी गिरान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ।

परदोष ढकिये धरम ढिगतेको सुधिर कर हरखिये ॥

चहुसंघको वात्सल्य कीजे धर्मकी परभावना ।

गुन आठसौं गुन आठ लहिकै, इहां फेर न आवना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चविंशतिदोषरहित सम्यग्दर्शनाय

पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

ज्ञानपूजा ।

दीहा-पञ्चभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन मान् ।

मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान अत्र अवतर अवतर । संवापट् १ ।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान अत्र मम सन्निहितो भव भव ।

वपट् ॥

सोरठा-नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मळ क्षय करै ।

सम्यकज्ञान विचार, आठ भेद पूजौ सदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसर घनतार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अक्षत अनुप निहार, दारिद्र नाशे सुख करै । सम्यकज्ञा० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपा० स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकज्ञा० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज विविधप्रकार, छुषा हरै थिरता करै । सम्यकज्ञा० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपा० स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपज्योतिर्महार, घटपट परकाशे महां । सम्यकज्ञा० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप धानसुखकार, रोग विघन नइता हरै । सम्यकज्ञा० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि निथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यकज्ञा० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकज्ञा • ॥९॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्थ निर्वपा • स्वाहा ॥९॥

अथ जयमाला ।

दोहा—आप आप जानै नियत ग्रंथपठन व्योहार ।

संशय विभ्रम मोह विन, अष्टअंग गुनकार ॥१॥

चोपाई मिश्रित गीता छन्द ।

सम्यक्ज्ञान रतन मन भाषा । आगम तीजा नैन बताया ॥

अक्षर शुद्ध अर्थ पहिचानौ । अक्षर अर्थ उभय संग जानौ ॥

जानौ सुकाल पदो जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।

तपरीति गही बहु मान देकै, विनयगुन चित लाइये ॥

ए आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पण देखना ।

इस ज्ञानहींसों भरत सीझे, औरं सब पटपेखना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णाध्य निर्वपा • स्वाहा ॥१॥

चारित्र पूजा ।

दोहा—विषयरोग औषध महा, देवकषायजलधार ।

तीर्थकर जाकौं धरै, सम्यक्चारितसार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर ।

संबोषट् ।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्रतिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितौ

भव भव । वषट् ।

सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल क्षय करै ।

सम्यक्चारित धार, तेरहविध पूजौ सदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय नमः ॥ १ ॥

जल केशर धनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकचा ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय चंदनं निर्वपा ॥ १ ॥

अक्षत अनुप निहार, दारिद्र नाशै सुख करै । सम्यकचा ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय अक्षतान् निर्वपा ॥ २ ॥

पुहपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकचा ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय पुष्पं निर्वपा ॥ स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यक ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय नैवेद्यं निर्वपा ॥ स्वाहा ॥ ५ ॥

दापजोति तमहार, घटपट प्रकाशै महान् । सम्यकचा ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप प्राण सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै । सम्यकचा ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशसम्यकचारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफलआदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यक ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय फलं निर्वपा ॥ स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यक ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय अर्घ्यं निर्वपा ॥ स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जपमाला ।

दोहा-आप आप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार ।

स्वपर दया दोनो लिये, तेरहविध दुखहार ॥ १ ॥

चोपाई मिश्रित गीता छंद ।

सम्यकचारित रतन सँमालो । पांच पाप तजिके व्रत पालो ।

पंचसमिति त्रय गुणति गहीनै । नरभव सफळ करहु तन छीनै ॥

छीनै सदा तनको जतन यह; एक संजम पाळिये ॥
 बहु रूप्यो नर्कनिगोदमाहि, कषायविषयनि-टाळिये ॥
 शुभ करमजोग सुघाट आयो पार हो दिन जात है ।
 'धानत' धरमकी नाव बैठे शिवपुरी कुंशलात है ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधिसम्यक्चारित्राय महाध्व्यं निर्वपा० ॥१॥

अथ समुच्चय जयमाला ।

दोहा-सम्यक्दरशन ज्ञान व्रत, इन विन मुक्त न होय ।
 अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जले-दव-लोय ॥ १ ॥
 तामै ध्यान सुथिर बन आवै । ताके कमरबंध कट जावै ।
 तापै शिवातिय प्रीति बढ़ावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ २ ॥
 ताको चहुंगातिके दुख नाहीं । सो न परै भवसागरमाहीं ॥
 जनमबराभृत दोष मिटावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ३ ॥
 सोई दशलच्छनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ॥
 सो परमात्म पद उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ४ ॥
 सोई अक्षरचक्रिपद लेई । तीनलोकके सुख विलसेई ॥
 सो रागादिक भाव बहावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ५ ॥
 सोई लोकालोक निहारै । परमानंददशा विस्तारै ॥
 आप तिरे औरन तिरबावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ६ ॥
 दोहा-एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कसो नहिं जाय ।

तीनभेद व्योहार सब, धानतको सुखदाय ॥ ७ ॥

सम्यग्गतनत्रयाय महाध्व्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये ।

(१५) श्रीनन्दीश्वरपूजा ।

अङ्किल-सरब पर्वमें बड़ो अठाई पर्व है ।

नन्दीश्वर सुर जाहि लेय वसु दरब है ॥

हमें शक्ति सो नाहि इहां करि थापना ।

पूजो जिनगृह प्रतिमा है हित आपना ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।

अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाश-
ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र
मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

कंचनमणिमय भृंगारं, तीरथनीरभरा ।

तिहुँ धार दयी निरवार, जामन मरन जरा ॥

नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन-पुंज करो ।

वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाश-
ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा-
मीति स्वाहा ॥ १ ॥

भवतपहर शीतलवास, सो चंदननाही ।

प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठांही ॥ नंदी० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाश-
ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपा-
मीति स्वाहा ॥ २ ॥

उत्तम अक्षत मिनराज, पुंनघरे सोहै ॥

सब जीते अक्षसमाज, तुम सम अरु को है ॥ नंदी० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाम्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ॥१॥

तुम कामविनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं ।

रहुं शील लच्छमी एव, छूटैं सुकनसौं ॥ नंदी० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाम्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ॥२॥

नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पुरा ॥ नन्दी० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाम्यः क्षुषारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि ॥५॥

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमाहिं लसै ॥

टूटे करमनकी राश, ज्ञानकणी दसै ॥ नन्दी० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाश-
ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाम्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

कृष्णागरूपसुवास दशदिशिनारि बरै ।

अति हर्षभाव परकाश, मानों नृत्य करें । नंदी० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाम्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

बहुविषफल ले तिहुंकार, आनंद राचत हैं ।

तुम शिबफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥

नंदीश्वरश्रीजिनधाम, बावन पुंज करों ।

वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशजि-
नालयस्थजिनप्रतिमाम्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

यह अरघ क्रियो निज हेत, तुमको अर्पित हों ।

‘द्यानंत’ कीनो शिवखेत, मूषे समर्पित हों ॥ नंदी० ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशजि-
नालयस्थजिनप्रतिमाम्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—क्रांतिक फागुन साढ़के, अंत आठ दिनमाहिं ।

नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजें इह ठाहिं ॥ १ ॥

एकसौ तरेसठ कोड़ि जोजनमहां ।

काख चौरासिया एक दिशमें लहा ॥

आठमों द्वीप नन्दीश्वरं भास्वरं ।

भवन बावज प्रतिमा नमों सुखकरं ॥ २ ॥

चारदिशि चार अंजनगिरि राजहीं ।

सहस चौरासिया एकदिश छाजहीं ।

ढोलसम गोल ऊपर तले सुंदरं ॥ भवन० ॥ ३ ॥

एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी ।

एक इक काख जोजन अमल जलभरी ॥

चहुंदिशा चार वन काखजोजन वरं ॥ भवन० ॥४॥

सोल बापीनमधि सोल गिरि दधिमुखं ।

सहस्र दश महां, जोनन लखत ही सुखें ॥
बावरीकौन दोमाहिं दो रतिकरं । भवन० ॥ ५ ॥

शैल नत्तीस इक सहस्र जोनन कहे ।
चार सोले भिले सर्व बावन लहे ॥

एक इक शीशपर एक जिनमदिरं । भवन ॥ ६ ॥
बिंब अठ एकसौ रतनमई सोहही ।

देवदेवी सरव नयनमन मोह ही ॥
पांचसै धनुष तन पञ्चभासनपरं ॥ भवन० ॥ ७ ॥

लाक नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं ।
स्यामरंग भौह सिरकेश छवि देत हैं ॥

वचन बोलत मनो ईसत कालुषहरं ॥ भवन ॥ ८ ॥
क्रोडिशशि भानद्युति तेन छिप जात हैं ।

महांवैराग परिणाम ठहरात हैं ॥
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकघरं । भवन० ॥ ९ ॥

सोरठा ।

नंदीश्वर निजवाम, प्रतिमामहिमाको कहैं ।
‘धानत’ कीनों नाम, यहै भक्ति शिवसुख करे ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्धे निर्वपामीति स्वाहा ।

[अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये]

(१६) निर्वाणक्षेत्र पूजा ।

सोरठा—परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ शानक शिव गये ।

सिद्ध भूमि निशदीस, सनवचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्राणि । अत्र अवतर
अवतर । संवौषट् । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्राणि ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाण-
क्षेत्राणि अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

गीता छंद ।

शुचि क्षीरदधिसम नीर निर्मल, कनकक्षारीमें भरौं ।

संसारपार उत्तार स्वामी, जोर कर विनती करौं ॥

सम्मेदगिरि गिरनार चंपा, पावापुरि कैलासको ।

पूजो सदा चौबीसजिननिर्वाणभूमिनिवासको ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं ॥ १ ॥

केशर कपुर सुगंध चंदन, सलिल शीतल विस्तरौं ।

भवपापको संताप मेटौ, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं ॥ २ ॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनंदधरि तरौं ।

औगुन हरी गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् ॥ ३ ॥

शुभफूलास सुवासवासित, खेद सब मनके हरौं ।

दुखधाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः पुष्पं ॥ ४ ॥

नेवज अनेक प्रकार जोग, मनोग घरि भय परिहरौ ।

यह मुखदुखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौ ॥सम्मे०॥५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपक प्रकाश टजाम उज्जल, तिमिरसेती नडिं डरौ ।

संशयविमोहविमर्ष-तमहर, जोरकर विनती करौ ॥सम्मे०॥६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतित्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं ॥ ६ ॥

शुभ धूप परम अनूर पावन, भाव पावन आचरौ ।

सब करमपुंन जलाय दीजे, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं ॥७॥

बहु फल भँगाय चढ़ाय उत्तम, चारंगतिसौं निरवतौ ।

निहचै सुकृतफल देहु मोक्षौ, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥८॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं ॥ ८ ॥

जल गंध अच्छत फूरु चरु फल, दीप धूपायन घरौ ।

‘द्यानत’ करो निर्भय नगततैं, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥९॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा-श्रीचौबीसजिनेश, गिरिकैलासादिक नमौ ।

तीरथ महागदेश महांपुरुष निर्वाणतैं ॥ १ ॥

नमौ रिषभ कैलासपहारं । नेमिनाथ गिरनार निहारं ॥

मासुपुज्य चंपापुर वंदौ । सनमति पावापुर अभिनंदौ ॥ २ ॥

वंदौ अजित अजितपददाता । वंदौ संभवभवदुःखघाता ॥
 वंदौ अभिनन्दन गणनायक । वंदौ सुमति सुमतिके दायक ॥३॥
 वंदौ पदम मुक्तिपदमाधर । वंदौ सुपार्श आशपासाहर ॥
 वंदौ चंदप्रभु प्रभु चंदा । वंदौ सुविधि सुविधिनिधिकंदा ॥ ४ ॥
 वंदौ शीतल अघतपशीतल । वंदौ श्रियांस श्रियांस महीतल ॥
 वंदौ विमल विमल उपयोगी । वंदौ अनंत अनंतसुखभोगी ॥५॥
 वंदौ धर्म धर्म विस्तारा । वंदौ शांति शांतमनधारा ॥
 वंदौ कुंथु कुंथुरखवाल । वंदौ अरि अरहर गुणमाल ॥ ६ ॥
 वंदौ मल्लि काममल चूरन । वंदौ मुनिसुव्रत व्रतपूरन ॥
 वंदौ नमि जिन नमित सुरासुर । वंदौ पार्श पासभ्रमजरहर ॥७॥
 वीसौ सिद्धभूमि जा ऊपर, सिखर समेद महांगिरि मुपर ॥
 एकवार बंदै जो कोई । ताहि नरक पशुगति नहिं होई ॥ ८ ॥
 नरगतिनृप सुर शक्र कहावै । तिहुँ जग भोग भोगि शिव पावै ॥
 विघनविनाशक मंगलकारी । गुण विकास वंदै नरनारी ॥ ९ ॥

छंद घत्ता ।

जो तीरथ जावै पापमिटावै ध्यावै गावै भक्ति करै ।
 ताको जस कहिये संपत्ति कहिये, गिरिके गुणको बुध उचरै ॥१०॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ।

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये ।)

(१७) द्वेक्षपूजा ।

दोहा-प्रभु तुम राजा भगतके, हमें देय दुख मोह ।

तुम पद पूजा करत हं. हमपै करना होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीमिनेन्द्र-
भगवन् अत्र अवतरावतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीमिनेन्द्र-
भगवन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठैः ।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीमिनेन्द्र-
भगवन् अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट् ।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो, तुमपै आयो, नळ लायो ।

उत्तम गंगाजळ, शुचि अति शीतळ, प्राशुक निर्मळ, गुन गायो ॥

प्रभु अंतरजामी त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।

यह अरज सुनीजै, दीळ न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीमिनेन्द्र-
भगवद्भ्यो जन्ममरामृत्युविनाशनाय जठं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

अवतपत निरंतर, अगनिपटंतर, मो हर अंतर. खेद कथौ ।

कै बावन चंदन, दाहनिचंदन, दुमपदचंदन, हरष धरयो ॥प्रभु०॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीमिनेन्द्र-
भवातापनाशाय चंदनं ॥

१ संवौषडिति देवोद्देशेन हविस्त्यागे । २ ठः ठैः इति बृहद्वचनौ ।
३ वषडिति देवोद्देश्यकहविस्त्यागे ।

औगुन दुखंतादा, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ।

तंदुरु गुनमंडित, अमर अखंडित, पुजत पंडित, प्रीति धरै ॥प्रभु॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसंहितश्रीजिनेभ्यो
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति ॥ ३ ॥

सुरनर पशुको दंरु, काम महांकर, बात कहंत छर, मोहि लिया ।

ताके घर लाऊं फूक चढ़ाऊं, भक्ति बढाऊं, खोल दिया ॥प्रभु॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसंहितश्रीजिनेभ्यो
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा ही, मो कागै ।

सद घेवर बाबर, लाहू बहु घर, थार कनक भर तुम जागै ॥प्रभु॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसंहितश्रीजिनेभ्यो
क्षुद्रोगनाशाय नैवेद्यं ॥

अज्ञान महातम, छाये रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावै ।

तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप संवारा, जस गावै ॥ प्रभु ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसंहितश्रीजिनेभ्यो
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

इह कर्म महावन, भूक रह्यो जन, शिवमारग नहि पावत हैं ।

कुष्णागुरुधूपं, अमरअनूपं, सिद्धस्वरूपं, दयावत हैं ॥

प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।

बह अरज सुनीजै, ढीक न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥७॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसंहितश्रीजिनेभ्यो
अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥

सबै नोरावर, अंतराय अरि, सुफल विप्र करि डारत हैं ।
 फलपुंन विविध भर, नयनमनोहर, श्रीभिनवरपद धारत हैं ॥ प्र०
 ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितपदचत्वारिंशद्गुणसहितश्रीभिनेम्यो
 मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥

आठों दुस्तदानी, आठनिशानी तुम दिग आनि निवारन हों ;
 दीनननिस्तारन, अधमठधारन, 'छानत' तारन कारण हो ॥ प्रमु०
 ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितपदचत्वारिंशद्गुणसहितश्रीभिनेन्द्र-
 मगवद्भ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला ।

गुण अनंत को कहि सकै, छियालिसों भिनराय ।
 प्रगट सुगुन गिनती कहूं, तुम ही होहु सहाय ॥ १ ॥
 एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अध्यात्म नामी ॥
 तीन काल विधि परगट जानी । चार अनंतचतुष्टय ज्ञानी ॥१॥
 पंच पावर्तन परकासी । छहों दरबगुनपर्नयमामी ॥
 सातमंगवानी परकाशक । आठों कर्म महारिपुनाशक ॥ २ ॥
 नव तत्त्वनकै भाखनहारे । दश वच्छनसौं भविजन तारे ॥
 ग्यारह प्रतिमाके उपदेशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥ ४ ॥
 तेरहविधि चारितके दाता । चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥
 पंद्रह भेद प्रमाद निवारी । सोलह भावन फल अविकारी ॥ ५ ॥
 सारे सत्रह अंक भरत भुव । ठारै धान दान दाता तुव ॥
 भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन । बीस अंक गणघरजीकी धुन ॥६॥
 इकहस सर्व धातविधि जानै । बाइस विध नवमै गुन धानै ॥
 तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर । सो पूभै चौबीस भिनेश्वर ॥७॥

नाश पचीस कषाय करी हैं । देशवाति छब्बीस हरी हैं ॥
 तत्त्व दरब सत्ताइस देखे । मति विज्ञान अठाइस पेखे ॥ ८ ॥
 उनतिस अंक मनुष सब जाने । तीस कुलाचल सर्व बखाने ।
 इकतिस पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समाधिक टारे ॥ ९ ॥
 तेतिस सागर सुखकर आये । चौतिस भेद अलङ्घि बताये ॥
 पैतिस अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥ १० ॥
 सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अठतिस पद लहि नरक अपुनमें ॥
 उनतालीस उदीरन तेरम । चाकिस भवन इंद्र पूजें नम ॥ ११ ॥
 इक्तालीस भेद आराधन । उदै बियालीस तीर्थकर मन ॥
 तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं । द्वार चवाकिस नर चौथेमहिं ॥ १२ ॥
 पैतालीस पर्यके अच्छर । छियालीसों बिन दोष सुनीश्वर ॥
 नरक उदै न छियालीस मुनिधुन । प्रकृति छियाकिस नाश दशम
 गुन ॥ १३ ॥

छियालीस घन राजु सात भुव । अंक छियालीस सरसों कहि कुव ॥
 भेद छियालीस अंतर तपवर । छियाकिसों पुरन गुन जिनवर ॥ १४ ॥

अडिह्ल-मिथ्या तपन निवारन चन्द समान हो

मोहतिमिर वारनको कारन भानु हो ॥

काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो

‘दानत’ सम्यकरतनत्रय गुनईश हो ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्विगुणसहितश्रीजिनेन्द्र-
 भगवद्रम्यो पूर्णार्घि निर्वपामि ॥

(पूर्णार्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये)

(१८) सरस्वतीपूजा ।

दोहा—जनम जरा मृत छय करै, हरे कुनय जइरीति ।

भक्तसागरसौं छे तिरै, पूजै भिनवचपीति ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीभिनमुखोद्भवसरस्वतीमायादिनि । अत्र अवतर
भवतर । संवोषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो
भव भव । वषट् ।

छीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अमंगा, सुखसंगा ।
घरि कंचन शरी, धार निकारी, तृषा निबारी, हित चंगा ॥
तीर्थकरकी ध्वनि, गणघरने मुनि, अंग रचै चुनि, ज्ञानमई ।
सो भिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीभिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नमः ॥ १ ॥

करपुर मंगाया, चंदन आया, केसर काया, रंग भरी ।
शारदपद बंदौ, मन अभिनंदौ, पापनिर्दौ, दाह हरी ॥तीर्थ०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीभिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चन्दनं निर्वपामीति ।
सुखदासकमोदं, धारकमोदं, अतिभनुमोदं, चंद्रसमं ।
बहुभक्ति बदाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं ॥ तीर्थ०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीभिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि ॥३॥
बहुश्लसुवासं, विमलपकाशं, आनंदरासं, काय धरै ।
मम काम मिटायौ, शील बदायौ, सुख उपजायौ, दोष हरै ॥तीर्थ०॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीभिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि ॥४॥
पकवान बनाया, बहुघृत काया, सब विष माया, मिष्ट महान् ।
पूजूं शुक्ति गाळं, प्रीति बढाळं, क्षुधा नष्टाळं, हर्ष लहा ॥तीर्थ०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामि ॥ १ ॥
करि दीपक ज्योतं, तमक्षय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हम घट भासक, ज्ञान बढ़ै ॥ तीर्थ ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥
शुभगंध दर्शोकर, पावकमें घर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।

सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहवैं, खेवत हैं ॥ तीर्थ ० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥
बादाम छुहारो, लोंग सुपारो, श्रीफल भारी, ख्यावत हैं ।
मनवांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥ तीर्थ ० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥
नयनसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वलभारी*, भोल धरै ।
शुभगंधसम्हार, वसननिहारा, तुमट घारा, ज्ञान करै ॥
तीर्थकरकी धुनि, गनघरनेसुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।

सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्य भई ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै बस्त्रं निर्वपामि ॥ ९ ॥
जलचंदन अच्छत, फूल चरु चत, दीप धूप अति, फल कावै ।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर धानत, सुख पावै ॥ तीर्थ ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामि ॥ १० ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—ओंकार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल ।

नमो भक्ति संर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै ॥

*यहां शुद्ध (हाथकी कांती बुनी पवित्र स्वदेशी) खादी धोकर चढ़ाना । हिंसासे बने परदेशी और रेशमके वस्त्र चढ़ाना पापका कारण है ।

पहला आचारंग वखानो । पद अष्टादश सहस्र प्रमानो ।
 दूसरा सूत्रकृतं अभिलाषं । पद छत्तीस सहस्र गुरु भाषं ॥ १ ॥
 तीजा ठाना अंग सुजानं । सहस्र बियालिस पदसरधानं ॥
 चौथो समवायांग निहारं । चौसठ सहस्र काख इकधारं ॥ २ ॥
 पंचम व्याख्याप्रगपति दरशं । दोय काख अट्टाईस सहसं ।
 छट्टा ज्ञातुकथा विसतारं । पांचकाख छप्पन हजारं ॥ ३ ॥
 सप्तम उपासकाध्ययनंगं । सत्तर सहस्र ग्यारकाख अंगं ।
 अष्टम अंतकृतंदस ईसं । सहस्र अठाईस काख तेहसं ॥ ४ ॥
 नवम अनुत्तरदश सुविशालं । काख बानवै सहस्र चवालं ।
 दशम प्रश्नव्याकरण विचारं । काख तिरानवै सोल हजारं ॥ ५ ॥
 ग्यारम सुत्रविपाक सु भाखं । एक कोड़ चौरासी काखं ।
 चार कोड़ि अरु पंद्रह काखं । दोहजार सव पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥
 द्वादश दृष्टिवाद पनमेदं । इकसौ आठ कोड़ि पन वेदं ॥
 अइसट काख सहस्र छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥
 इक सौ बारह कोड़ि वखानो । काख तिरासी ऊरर जानो ॥
 ठावन सहस्र पंच अधिकाने । द्वादश अङ्ग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
 कोड़ि इकावन आठ हि काखं । सहस्र चुरासी छहसौ भाखं ॥
 साढ़े इक्कीस श्लोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥ १० ॥
 घत्ता-ना बानीके ज्ञानमें, सुझे लोक अलोक ।

‘ध्यानत’ नग जयवंत हो, सदा देत हों धोक ॥

इति सरस्वती पूजा ।

(१९) गुरुपूजा ।

दोहा-चहुं गति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाम ।

रतनत्रयनिधि नगन तन, घन्य महां मुनिरात्र ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर ।
संबोध ।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ
तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र मम
सन्निहितो भव भव । वषट् ।

शुचि नीर निर्मल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।

तिहुं धार तिहुं गददार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥

भवभोगतनवैराग्य धार, निहार शिव तप तपत हैं ।

तिहुं जगतनाथ अघार साधु सु पूज नित गुन जपत हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुम्यो जलं नि० ॥१॥

कर्पूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा करौं ।

सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरौं ॥

भवभोगतनवैराग्य धार निहार, शिवतप तपत हैं ।

तिहु जगतनाथ अराध साधु सु, पूज नितगुन जपत हैं ॥२॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुम्यो भवतापविनाशनाय चंदनं नि०

तन्दुल कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं ।

गुनकार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥भव भो०॥१॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुम्योऽक्षयपदपातये अक्षतान् नि०

शुभफूलरासमकाश-परिमल, सुगुरुपांशनि परत हों ।
 निरवार मार उपाधि स्वामी, शीक दिद उर भरत हों ॥भव०॥४॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः कामनाणविध्वंसनाय पुष्पं ।
 पक्वान मिष्ट सलौन सुंदर, सुगुरु पायन प्रीतिसौं ।
 कर क्षुषारोग विनाश स्वामी, सुधिर कीजे रीतिसौं ॥भव०॥५॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः क्षुषारोगविनाशनाय नैवेद्यं
 दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरुपद पुनो सदा ।
 तमनाश ज्ञानउजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ॥भव०॥६॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं
 नि० ॥
 बहु अगर आदि सुगन्ध खेऊं सुगुण पद पद्महि खरे ।
 दुस्त पुन्ज काट जलाय स्वामी गुण अछय चित्तमें घरे ॥भव०॥७॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि०॥७॥
 भर थार पुर बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगे घरो ।
 मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करो ॥भव०॥८॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०८॥
 जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।
 'दानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहि तार उतावली ॥भव०॥९॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं
 नि० ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार ।

त्यागी वैरागी महां, साधु सुगुनभण्डार ॥ १ ॥

तीन घाटि नवकोइ सब, वंदौ सीस नवाग्र ।

गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूँ आरती गाव ॥ २ ॥

एक दया पावैं मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं ।

तीनों लोक प्रगट सब देखैं, चारों आराधननिकरं ॥

पंच महाव्रत दुद्धर धारैं, छहों दरब जानै मुहितं ।

सातभंगवानी मन लावैं, पावैं आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥

नवों पदारथ विधिसों भाखैं, बंध दशों चूरन करनं ।

ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह व्रत धरनं ॥

तेरह भेद काठिया चूरे, चौदह गुनथानक लखियं ।

महाप्रमाद पंचदश नाशे, सोलकषाय सब नशियं ॥ ४ ॥

बंधादिक सत्रह सब चूरे ठारह जन्म न मरन मुनं ।

एक समय उनईस परीषह, बीस प्ररूपनिमें निपुणं ॥

भाव उदीक इकोसों जानै, बाहस अमखन त्याग करं ।

अहिमिंदर तेईसों बंदैं, इन्द्र सुरग चौबीस वरं ॥ ५ ॥

पच्चीसों भावन नित भावै, छविस अंगउपंग पढ़ैं ।

सत्ताईसों विषय विनाशैं, अट्ठाईसों गुण सु बंदैं ॥

शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीष्मगिरिसिर जोग धरैं ।

वर्षा वृक्ष तैरें थिर ठाढ़े, आठ क्रम हनि सिद्ध वरै ॥ ६ ॥

दोहा-कहाँ कहाँ लों भेद मैं, बुध थोरी गुन मूर ।

हेमराज, सेवक हृदय, भक्ति करौ भरपूर ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं आचार्यो गध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ।

(२०) मकसीपार्श्वनाथ पूजा ।

दोहा-श्री पारस पामेशजी, शिखर शीर्ष शिवधार ।

यहां पूजते भावसे, थापनकर त्रयवार ॥

ॐ ह्रीं श्रीमकसीपार्श्व जिन अत्र अवतर अवतर सम्बोषटा-
ह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्र मम सन्नहितो भव
भव वपद् सन्निधिकरणं ॥

अथाष्टकं ।

लै निर्मल नीर सुछान, प्राशुक ताहि करो ।

मन वच तन कर वर आन, तुम दिग धार वरों ॥

श्री मकसी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।

मम जन्म जरामृत्यु नाश, तुम गुण गावत हों ॥

ॐ ह्रीं श्री मकसीपार्श्वनाथजिनेन्द्रेभ्यो नमः ॥ १ ॥

धिस च दनसार सुवास, केसर ताहि मिलै ।

मैं पूजों चरण हुकास, मनमें आनन्द लै ॥

श्री मकसी पारसनाथ, मन वच ध्यावतहों ।

मम मोहाताप विनाश, तुम गुण गावत हों ॥ सुगंधं ॥ २ ॥

सन्दुल उज्ज्वल अति आन, तुम दिग पूज्य वरों ।

मुक्ताफलके उन्मान, लेकर पूज करो ॥

श्रीमकसी पारसनाथ, मन वच ध्यावतहों ।

संसार वास निरवाज, तुम गुण गावत हों ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

ले सुमन विविधिनं एव, पूजों तुम चरणा ।

हो काम विनाशक देव, काम व्यथा हरणा ॥

श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।

मन वच तन शुद्ध लगाय, तुम गुण गावत हों ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

सज्जाल सुवे वज्रधार, उज्ज्वल तुरत किया ।

काङ्क्ष मेवा अधिकार, देखत हर्ष हिया ॥

श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच पूज करो ।

मम क्षुधा रोग निर्वार, चरणों चित्त धरो ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥

अति उज्ज्वल ज्योति जगाय, पूजत तुम चरणा ।

मम मोहंधेर नशाय, आयो तुम शरणा ॥

श्री मक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।

तुमहो त्रिभुवनके नाथ, तुम गुण गावत हों ॥ दीपं ॥ ६ ॥

वर धूप दशांग बनाय, सार सुगंध सही ।

अति हर्ष भाव डर ल्याय, अग्नि मंझार दही ॥

श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।

वसु कर्महि कीजे क्षार, तुम गुण गावत हों ॥ धूपं ॥ ७ ॥

बादाम क्षुशरे दाख, पिस्ता ल्याय धरो ।

ले आम अनार सुपक्व, शुचिकर पूज करो ॥

श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।

शिवफल दीने भगवान, तुम गुण गावत हों ॥ फलं ॥ ८ ॥

जल आदिक द्रव्य मिलाय, वसुविधि अर्घ किया ।

घर साज रक्वो ल्याय, नाचत हर्ष हिया ॥

श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।

तुम भव्योंको शिव साथ, तुम गुण गावत हों ॥ अर्घ्यं ॥ ९ ॥

अट्टिल्ल-नक गंधाक्षत पुष्प सो नैवज ह्यायेके ।
 दीप घूप फल छेकर अर्घ बनायेके ॥
 नाचो गाय वजाय हर्ष छर धारकर ।
 पूरण अर्घ चढाय सु जयजयकार कर ॥ पूर्णार्घ ॥ १० ॥

जयमाला ।

दोहा-जयजयजय जिनरायजी, श्रीपारसपमेश ।
 गुण अनंत तुममांदि प्रभु, पर कहु गालं छेश ॥ १ ॥

पद्महि छन्द ॥

श्रीबानागम नगरी महान । सुरपुर समान जानो सुथान ।
 तहां विश्वसेन नामा सुमूष । नामादेवी रानी अनूप ॥ १ ॥
 आये तसु गर्भविषे सुख । वैशाखवदी दोहज स्वयमेव ।
 माताको सेवे सचि आन । आज्ञा तिनकी घर शीश मान ॥ २ ॥
 पुनः जन्म भयो आनंदकार । एकादशि पौष वदी विचार ॥
 त० इन्द्र आय आनंद घर । जन्माभिषेक कीनो सुसार ॥ ३ ॥
 शतवष तनी तुम आयु जान । कुंवरावय तीस वरस प्रमाण ॥
 नव हाथ तुम राजत शरीर । तन हरित वण सोहै सुधीर ॥ ४ ॥
 तुम उरग निह वर उरग सोई । तुम राजन्नद्धि भुगती न कोई ॥
 तपधारा फिर आनंद पाय । एकादशि पौष वदी सुहाय ॥ ५ ॥
 फिर कर्म छ तिया चार नाश । वर केवलज्ञान भयो प्रकाश ॥
 यदि चैत्र चौथ वेश प्रभात । हरि समोसरण रचियो विख्यात ॥ ६ ॥
 जाना रचना देखन सुयोग । दर्शनको आवत भव्य लोग ॥
 सावन मुदि सप्तमि दिन सुधारि । तन विधि अघातिना नाश चासि ॥ ७ ॥

शिव थान लयो वसुक्कर्म नाशि । पद सिद्ध भयो आनन्दराशि ॥
 तुम्हरी प्रतिमा मक्सी मझार । आपो भविजन आनन्दकार ॥९॥
 तहां जुरत बहुत भवि जीव आय । कर भक्तिभावसे शीश नाय ॥
 अतिशय अनेक तहां होत जान । यह अतिशय क्षेत्र भयो महान ॥ १० ॥
 तहां आय मव्य पूजा रचात । कोई स्तुति पढ़ते भांति भांति ॥
 कोई गावत गांन कला विशाक । स्वरताल सहित सुंदरसाक ॥ ११ ॥
 कोई नाचत मन आनंद पाय । तत थेई थेई थेई थेई ध्वनि कराय ॥
 छम छम नूपुर बाजत अनूप । अति नटत नाट सुंदर सरूप ॥ १२ ॥
 द्रुम द्रुम द्रुम बाजत मृदंग । सननन सारंगी बजति संग ॥
 झननन नन झरझरि बजे सोई । घननन घननन ध्वनि घण्ट होई ॥ १३ ॥
 इस विधि भवि जीव करें अनंद । कहीं पुण्यबंध करें पापमंद ॥
 हम भी बन्दन कीनी अवार । सुदि पौष पंचमी शुक्रवार ॥ १४ ॥
 मन देखत क्षेत्र बढ़ी प्रयोग । जुरमिक पूजन कीनी सुयोग ॥
 जयमाक गाय आनंद पाय । जय जय श्रीपारस जगति राय ॥ १५ ॥
 चत्ता—जय पार्श्वजिनेश नुत नाकेश चक्रधरेश ध्यावत हैं ।
 मन वच आराधे भव्य समार्षे ते सुरशिवफळ पावत हैं ॥

• इत्याशीर्वादः ॥

(इति श्रीमक्खीपार्श्वनाथपूजा संपूर्णम् ।)

(२१) श्री गिरिनारक्षेत्र पूजा ।

दोहा-वंदौ नेमि निनेश पद, नेम धर्म दातार ।

नेम धुरंधर परम गुरु, भविजन सुख कर्तार ॥ १ ॥

जिनवाणीको प्रणमिकर, गुरु गणधर उरधार ।

सिद्धक्षेत्र पूजा रचौ, सब जीवन हितकार ॥ २ ॥

उर्जयंत गिरीनाम तप्त, कहौ जगति विख्यात ।

गिरिनारी तासे कहत, देखत मन हर्षात ॥ ३ ॥

गिरिसुलन्नत सुभगाकार है । पंचकूट उतंग सुधार है ॥

बन मनोहर शिला सुहावनी । लखत सुंदर मनको भावनी ॥४॥

और कूट अनेक बने तहां । सिद्ध ध्यान सुभति सुन्दर जहां ॥

देखि भविजन मन हर्षावते । सकल जन वन्दनको आवते ॥५॥

त्रिभंगी छंद ।

तहां नेमकुमारा अत तप धारा कर्म विदारा शिव पाई ।

मुनि कोढ़ि बहत्तर सात शतक धर तागिरि ऊपर सुखदाई ॥

भये शिवपुरवासी गुणके राखी विधिधिति नाखी ऋद्धि धरा ।

तिनके गुण गाऊं पूज रचाऊं मन हर्षाऊं सिद्धि करा ।

दोहा-ऐसो क्षेत्र महान, तिहि पूजत मन वच काय ।

स्थापन त्रय वारकर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ॐ ह्रीं श्री गिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो ॥ अत्र अवतर अवतर
संबौषटाहाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्र मम स-
न्निहितो भव भव वषट् संन्निधिकरणं ।

लेकर नीरसुक्षीरसमान महां सुखदान सुभासुक भाई ।
 दे त्रय धार जनों चरणा हरना मम जन्मजरा दुःखदाई ॥
 नेमपती तन राजमती भये बालयती तहांसे शिवपाई ।
 कोडि बहत्तरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सुजनों हरपाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो जलं ॥ १ ॥

चंदनगारि मिलायं सुगंध सु ख्याय कटोरीमें धरना । मोह महांतम
 मैटन काज सु चर्चतु हों तुम्हारे चरणा ॥ नेम० । सुगंधं ॥ २ ॥
 अक्षत लज्जक ख्याय धरों तहां पुंन करो मनको हर्षाई ।
 देउ अक्षयपद प्रभु करुणाकर फेर न या भव बास कराई ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
 फूल गुलाब चमेली बेल कदंब सुचंपक तीर सुख्याई ।
 प्राशुक पुष्प लवंग चढ़ाय सुगाय प्रभु गुणकाम नशाई ॥ नेमपती०
 ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

नेवज नव्य करों भर थाल सुकंचन भाजनमें धर भाई ।
 मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई ॥
 नेमपती० ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीप बनाय धरों मणिका अथवा घृतवार्ति कपूर जलाई ।
 नृत्य करों कर आरति ले मम मोह महातम जाय पलाई ॥ नेमपती०
 ॥ दीपं ॥ ६ ॥

घूप दशांग सुगंध मईकर खेवहुं अग्निमझार सुडाई ।
 लौकर अर्ज सुनो जिनजी मम कर्म महावन देउ जराई ॥ नेमि-
 पती० ॥ घृपं ॥ ७ ॥

ले फल सार सुगंधमई रसनाहृद नेत्रनको सुखदाई । क्षेपत

हों तुम्हारे चरणा प्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई ॥ नेमपत्ती० ॥
फलं ॥ ८ ॥

ले वसु द्रव्यसु अर्घ करों वरधाल सु मध्य नहं हर्षाई ।
पूजत हों तुम्हारे चरणा हरिये वसुकर्म दली दुःखदाई ॥
नेमपत्ती० ॥ अर्घ ॥ ९ ॥

दोहा—पूजत हों वसु द्रव्य ले, पिढक्षेत्र सु दाय ।
निजहित हेतु सुझावनो, पूरण अर्घ चढ़ाय ॥ पूर्णार्घि ॥ १० ॥

पंच कल्याणकार्य ।

कार्तिक सुदिनी छठि जानो । गर्भागम तद्दिन मानो ॥

रत इन्द्र जने रस धानी । इत पूजत हम हर्षानी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक सुदि छठि गर्भमंगलप्राप्तेभ्यो ॥ अर्घ ॥ १ ॥

आवण सुदि छठि सुखधारी । तव जन्ममहोत्सव धारी ॥

सुरराजगिरि अन्हवाई । हम पूजत इत सुख पाई ॥

ॐ ह्रीं आवण सुदी छठि जन्ममंगलप्राप्तेभ्यो ॥ अर्घ ॥ २ ॥

सित सावनकी छठि प्यारी । तदिन प्रभु दिक्षाधारी ॥

तप घोर वीर तहां कग्ना । हम पूजत तिनके चरणा ॥

ॐ ह्रीं सावन सुदि छठि दिक्षाप्राप्तेभ्यो ॥ अर्घ ॥ ३ ॥

एकम सुदि अश्विन मासा । तव केवलज्ञान प्रकाशा ॥

हरि समवधरण तब कीना । हम पूजत इत सुख लीना ॥

ॐ ह्रीं अश्विन सुदि एकम केवलज्ञानप्राप्ताय ॥ अर्घ ॥ ४ ॥

सित अष्टमि मास आषाढा । तव योग प्रभूने छाँडा ॥

मिन लई मोक्ष ठकुराई । इत पूजत चरणा भाई ॥

ॐ ह्रीं आषाढ सुदी अष्टमी मोक्षमङ्गलप्राप्ताय ॥ अर्घ ॥ ५ ॥

अडिल्ल-कोढ़ि बहततरि मत्त सैरुड़ा जानिये ।

सुनिवार मुक्ति गये तहांसे सुपमाणिये ॥

पूजो निनके चरण सु मनवचक्रायके ।

बसुविधि द्रव्य मिलाव सुगाय वजायके ॥ पूर्णार्घि ॥

जयमाला ।

दोहा-सिद्धक्षेत्र जग उच्च थल, सब जीवन सुखदाय ।

कहो ताप जयमालका, सुनते पाप नशाय ॥ ९ ॥

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान । गिरिनारि सुगिरि उन्नत वखान ॥

तहां झूनागढ़ है नगर सार । सौराष्ट्र देशके मध्य सार ॥ २ ॥

जब झूनागढ़से चले सोई । समभूमि कोस वर तीन होई ॥

दरवाजेसे चल कोस आध । इक नदी बहत है जल अगाध ॥ ३ ॥

पर्वत उत्तर दक्षिण सु दोय । मंघि बहत नदी उज्ज्वल सु तोय ॥

ता नदी मध्य कई कुंड जान । दोनों तट मंदिर बने मान ॥ ४ ॥

तहां वैरागी वैष्णव रहाय । भिक्षा कारण तीरथ करांय ॥

इक कोस तहां यह मचो ख्याल । आगे इक वरनदी नाल ॥ ५ ॥

तहां श्रावकजन करते स्नान । धो द्रव्य चलत आगे सुनान ॥

फिर मृगीकुंड इक नाम जान । तहां वैरागिनके बने थान ॥ ६ ॥

वैष्णव तीरथ जहाँ रचो सोई । विष्णुः पूजत आनंद होई ॥

आगे चल डेढ़ सु कोश जाव । फिर छोटे पर्वतको चढ़ाव ॥ ७ ॥

तहां तीन कुंड सोई महान । श्रीजिनके युग मंदिर वखान ॥ ८ ॥

मंदिर दिगम्बरके दुजान । श्वेताम्बरके बहुते प्रमाण ॥

जहां बनी धर्मशाला सु जोय । जरकुंड तहां निर्मल सुतोय ॥ ९ ॥

फिर आगे पर्वतपर चढ़ाव । चढ़ प्रथम कूटको चले जाव ॥
 तहां दर्शनकर आगे सुजाय । तहां द्वितिय टोंकका दर्श पाय ॥१०॥
 तहां नेमनाथके चरण जान । फिर है उत्तर भारी महान ॥
 तहां चढ़कर पंचम टोंक जाय । अति कठिन चढ़ाव तहां लखाय ॥११॥
 श्रीनेमनाथका मुक्ति थान । देखत नयनों अति हर्ष मान ॥
 इह विम्ब चरणयुग तहां जान । भवि करत वंदना हर्ष ठान ॥१२॥
 कोई करते जय जय भक्ति लाय । कोई स्तुति पढ़ते तहं बनाय ॥
 तुम त्रिभुवनपति त्रैलोक्य पाल । मम दुःख दूर कीजे दयाल ॥१३॥
 तुम राज ऋद्धि भुगती न कोई । यह अधिरूप संसार जोई ॥
 तज मातपिता घर कुटुम्हार । तज राजमतीसी सती नार ॥१४॥
 द्वादश भावना भाई निदान । पशुबंदि छोड़ दे अभय दान ॥
 शेषावनमें दिक्षा सुधार । तप कर तहां कर्म क्रिये सु क्षार ॥१५॥
 ताही वन केवल ऋद्धि पाय । इन्द्रादिक पूजे चरण आय ॥
 तहां समोशरणचियो विशाल । मणिपंच वर्णकर अति रसाल ॥१६॥
 तहां वेदी कोट सभा अनुप । दरवाजे भूमि बनी सुरूप ॥
 बसु प्रतिहार्य छत्रादि सार । वर द्वादश सभा बनी अपार ॥१७॥
 करके विहार देशों मंझार । भवि जीव करे भवसिंधु पार ॥
 पुनः टोंक पंचमीको सुजाय । शिव थान लहो आनंद पाय ॥१८॥
 सो पूजनीक वह थान जान । वंदत जन तिनके पाप हान ॥
 तहांसे सुबहत्तर कोढ़ि और । मुनि सात शतक सब कहे जोर ॥१९॥
 उस पर्वतसे शिवनाथ पाय । सब भूमि पूजने योग्य थाय ॥
 तहां देश देशके भव्य आय । वंदन कर बहु आनंद पाय ॥२०॥
 पूजन कर कीनो पाप नाश । बहु पुण्य बंध कीनो प्रकाश ॥

यह ऐसा क्षेत्र महान जान । हम करी वंदना हर्ष ठान ॥२१॥
 उनईस शतक उनतीस जान । सम्बत अष्टमि सित फाग मान ॥
 सब संग सहित वंदन कराय । पूजा कीनी आनंद पाय ॥२२॥
 अब दुःख दूर कीजे दयाल । कहें चद्र कृपा क जे कृपाल ॥
 मैं अल्प बुद्धि जयमाल गाय । भवि जीव शुद्ध लीजे बनाय ॥२३॥
 घत्ता-तुम दया विशाला सब क्षितिपाला तुम गुणमाला कण्ठधरी ।
 ते अन्य विशाला तम जगजाला नावत माला मुक्तिवरी ॥
 इत्याशीर्वादः ॥

(२१) सोनागिरि पूजा ।

अडिल्ल-जम्बू द्वीप मंझार भरत शुभ क्षेत्र है । आर्यखंड सुजाना
 भद्रतई देश है ॥ सोनागिरि अभिगम सुपर्वत है तहां ।
 पंचकोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव जहां ॥ १ ॥
 दोहा-सोनागिरिके शीसपर, बहुत जिनालय जान ।
 चन्द्रपम्पू जिन आदिदे, पूजों सब भगवान ॥ २ ॥
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धक्षेत्र सोनागिरि अत्र अवतर अवतर संवौषटाह्वाननं ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्र ममसन्निहितो भव भव
 वषट् सन्निधिकरणं ।

सारंग छंद ।

पद्मद्रहको नीर ल्याय गंगासे मरके ।
 कनक कटोरी माहिं हेम झारिनमें धरके ॥
 सोनागिरिके शीस भूमि निर्वाण सुहाई ।
 पंचकोड़ि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुंचे मुनिराई ॥

- चन्द्र प्रभु जिन आदि सकल जिनवर पद पूजो ।
 स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाव अविचल पद हूजो ॥
- दोहा-सोनागिरिके शीसपर, जेने सब जिनराय ।
 तिनपद चारो तीन दे, त्रिविध रोग नश जाय ॥
 ॐ ह्रीं श्रीमोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो ॥ जलं ॥ १ ॥
 केशर आदि कपूर मिले मलयगिरि चन्दन ।
 परमल अधिकी तास और सब दाह निहन्दन ॥
- दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेने सब जिनराज ।
 ते सुगन्ध-र पुनिये, दाह निकन्दन काज । सुगंधं ॥ २ ॥
 तंदुल घवल सुगन्ध रूपाय जल घोष पखारो ।
 अक्षय पदके हेतु पुन ह दग तहां चारो ॥
- दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेने सब जिनराज ।
 तिन पद पूजा कीजिये । अक्षय पदके काज ॥ अक्षयं ॥ ३ ॥
 बेला और गुलाब मालती कमल मंगाये ।
 पारिजातके पुष्प रूपाय जिनचरण चढ़ाये ॥
- दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेते सब जिनराज ।
 ते सब पूजो पुष्प ले । मदन विनाशन काज ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
 विनन जो जगमाहि खांड धृत मांहि पकाये ।
 मीठे दुरत वनाय हेम थारी भर रूपाये ॥
- दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेते सब जिनराज ।
 ते पूजो नैवेद्य ले । क्षुधा हरणके काज ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥
 मणिमय दीप प्रनाल धरौ पंक्ति भरथारी ।
 जिन मंदिर तमहार करहु दर्शन नरनारी ॥

दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेते सब भिनराज ।

करो दीपले आरती । ज्ञान प्रकाशन काज ॥ दीप ॥६॥
दशविधि धूप अनूप अग्नि भाजनमें ढालो ।
जाकी धूम सुगन्ध रहे भर सर्व दिशालो ॥

दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेते सब भिनराज ॥

धूप कुम्भ आगे धरो । कर्म दहनके काज ॥ धूप ॥७॥
उत्तम फल जगमाहिं बहुत मीठे अरु पाके ।
अमित अनार अचार आदि अमृत रस छाके ॥

दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जेते सब भिनराज ।

उत्तम फल तिन ले मिलो । कर्म विनाशन काज ॥ फल ॥ ८ ॥
नरु आदिक वसु द्रव्य अर्घ करके घर नाचो ।
बाजे बहुत बनाय पाठ पढके सुख सांचो ॥

दोहा-सोनागिरिके शीसपर जेते सब भिनराज ।

ते हम पृथे अर्घ ले । मुक्ति रमणके काज ॥ अर्घ ॥९॥

अडिहल-श्री भिनवरकी भक्ति सो जे नर करत हैं । फल-
वांछां कुछ नाहिं प्रेम उर धरत हैं ॥ ज्यों जगमाहिं किसानसु
खेतीको करें । नाज काज जिय जान सुशुभ आपही शैं ॥ ऐसे
पूजा दान भक्ति वञ्च कीजिये । सुख सम्पति गति मुक्ति सहज-
कर लीजिये ॥ ॐ श्री सोनागिरिसिद्धक्षेत्रम्यो पूर्णार्घ ॥१०॥

अथ जयमाला ।

दोहा-सोनागिरिके शीसपर । जिन मंदिर अभिराम ।

तिन गुणकी जयमालिका । वर्णत आशाराम ॥ १ ॥

गिरि नीचे जिन मंदिर सुचार । ते यत्तिन रचे शोभा अपार ॥
 तिनके अति दी घ चौक जान । तिनमें यात्री मेले सु आन ॥२॥
 गुमठी छज्जे शोभिन अनूर । ध्वज पंकुति मोहें दिविवरूप ॥
 वसु प्रातिहार्य तहां घरे आन । सब मंगलद्रव्यनि की सुखान ॥३॥
 दरवाजोंपर कलशा निहार । कर्मोर सुमय जय ध्वनि उचार ॥
 जब पर्वतको चढ़ चलो जान । दरवाजो तहां इक शोभमान ॥४॥
 तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार । तिन वंघ पूज आगे सिधार ॥
 तहां दुःखित सुखितको देत दान । याचक मन जहां हैं अप्रमाण ॥५॥
 आगे जिन मंदिर दुहू और । जिन गान होत बार्जिन शोर ॥
 दरवाजो तहां दूजो विशाल । तहां क्षेत्रपाल दोल जोर लाल ॥६॥
 दरवाजे भीतर चौक मरि । जिन भवन रचे प्राचीन आरि ॥
 तिनकी महिमा दरणो न जाय । दो कुंड सुजलकर अति सुहाय ॥७॥
 जिन मंदिरकी वेदो विशाल । दरवाजो तीनों बहुसुहाल ॥
 ता दरवाजे पर द्वारपाल । लेलकुट सड़े अत हाथ माल ॥ ८ ॥
 जे दुर्जनको नहीं जान देय । ते निंदकको ना दरश देय ॥
 चल चंद्रमूके चौकमाहि । दारानें तहां चौ तर्फ आहि ॥ ९ ॥
 तहां मय्य सभानंदप निहार । तिसकी रचना नाना प्रकार ॥
 तहां चंद्रमसुक दरश पाय । फल जात लहो नरनन्न आय ॥१०॥
 प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात । कायोउत्सर्ग मुद्रा सुहात ॥
 वेदे पूजे लहां देय दान । जन्मृत्य मजनकर मधुर गान ॥११॥
 तायेई येई येई दानत सितार । सृदंग वीन मुहवंग सार ॥
 तिनकी ध्वनि सुन भवि होत प्रेम । नयकार करत नाचत सु पम ॥१२॥
 ते स्तुति कर फिर नाय शीस । भवि चले मनोकर कर्म सीस ॥

यह सोनागिरि रचना अपार । वरणन कर को कवि लहे पार ॥ १३ ॥

अति तनक बुद्धि आशासुपाय । बश भक्ति कही इतनो सुगाय ॥

मैं मन्दबुद्धि किम कहों पार । बुद्धिवान चुक लीजो सुधार ॥ १६ ॥

दोहा-सोनागिरि जय मालिका, लघु मति कही बनाय ।

पढ़े सुने जो प्रीतिसे, सो नर शिवपुर जाय ॥ १७ ॥

इत्याशीर्वादः । इति श्री सोनागिरि पूजा सम्पूर्ण ।

(२३) रविव्रतपूजा ।

अडिह्ल-यह भवजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही ।
करहु भव्यजन लोग, सुमनदेकें सही । पूजो पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग
लगायकें । मिटै सकल संताप मिले निष आयकें ॥ मतिमागर
इक सेठ कथा ग्रन्थन कही । उनही ने यह पूजा कर आनन्द
कही ॥ तारें रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये । सुख संपत्ति
सन्तान, अतुल निष लीजिये ॥

दोहा-प्रणमो पार्श्व जिनेशको, हाथ जोड़ सिर नाय ।
परभव सुखके कारने, पूजा करूं बनाय ॥ एतवार व्रतके दिना,
एही पूजन ठान । ता फल सुर सम्पति लहें, अनुक्रमते निर्वाण ॥
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टकं-उज्जल जल भर्कें अति लायो रतन कटोरन मां हीं ।
घार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाई ॥ पारसनाथ
जिनेश्वर पूजो रविव्रतके दिन भाई । सुख सम्पति बहु होय तुरत

ही, आनंद मंगलदाई ॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ मिनेन्द्राय जन्मजरा-
 मृत्यु विनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ मलयगिरि केशर
 अति सुंदर कुमकुम रंग बनाई । धार देत जिन चरनन आगे भक्त
 आताप नसाई ॥ पारसनाथ० ॥ सुगंध ॥ मोती सम अति ठज्ज
 तन्दुक ल्यावो नीर पखारो । अश्रय पदके हेतु भावसो श्री जिन-
 वर दिग धारो ॥ पारस० ॥ अछन्नं ॥ वेला अर मचकुन्द
 चमेली पारजातके ल्यावो । चुन चुन श्री जिन अग्र चढ़ाऊं मन-
 बाँछित फल पावो ॥ पारस० ॥ पुष्प ॥ वावर फेनी गोमा
 आदिक घृतमें लेत पकाई कंचन थाल मनोहर भरके चरनन देत
 चढ़ाई ॥ पारस० ॥ जैश्वर्य ॥ मन्मथ दीप रतनमय लेकर जग-
 मग जोत जगाई । जिनके आगे भारति करके मोह तिमिर नश
 जाई ॥ पारस० ॥ दीप ॥ चुन कर मलयगिरि चन्दन धूप
 दशांग बनाई । तट पावक लेय भावसों कर्म नाश हो जाई ॥
 पारसनाथ० ॥ धूप ॥ अफ ॥ आद ॥ दम सुपारी मांत मांतके
 लावो । श्री जिन चरन चढ़ाय हरप ॥ तानें शिव फल पावो ॥
 पारस० ॥ फल ॥ जल गवांढर अष्ट दश ले अर्घ बनावो भाई ।
 नाचत गावत हर्ष भावसो कंचन थाल भरी ॥ पारस० ॥ अर्घ ॥
 गीतका छंद ॥ मन वचन कय त्रिशुद्ध करके पार्श्वनाथ सु पुनिये ।
 जल आदि अर्घ बनाय विनन भाक्तवन्त सुहृजिये ॥ पूज्य पारस-
 नाथ जिनवर सकल सुख दाताजी । जे करत हैं नरनार पुनः
 कहत सुख अपारजी ॥ पूर्णार्घ ॥

अथ जयमाला !

दोहा ॥ यह जगमें विख्यात हूँ, पारसनाथ महान । जिन-
 गुणकी जयमालका, भाषा करों बखान ॥ पञ्चरी छंद ॥ जय
 जय प्रणमो श्री पार्श्व देव । इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ॥ जय
 जय सु बनारस जन्म लीन । तिहुं लोक विषे उद्योत कीन ॥ १ ॥
 जय जिनके पितु श्री विश्वसेन । तिनके घर भये सुख चैन एन ॥
 जय वामादेवी, माय जान । तिनके उपने पारस महान ॥ २ ॥
 जय तीन लोक आनन्द देन । भाविजनके दाता भये हैं पेन ॥
 जय जिनने प्रमुका शरण लीन । तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन
 ॥ ३ ॥ जय नाग नागनी भये अधीन । प्रभु चरणन लाग रहे
 प्रवीन ॥ तजके सो देत स्वर्गे सुजाय । धरनेद्र पद्मावति भये
 आय ॥ ४ ॥ जे चोर अंजना अधम जान । चोरी तन प्रभुको
 धरो ध्यान ॥ जे मृत्यु भये स्वर्गे सु जाय । रिद्धि अनेक उनने
 सु पाय ॥ ५ ॥ जे मतिसागर इक सेठ जान । जिन रविवृत
 पूजा करी ठान । तिनके सुत थे परदेशमाहिं । जिन अशुभ कर्म
 काटे सु ताहि ॥ ६ ॥ जे रविवृत पूजन करी शेठ । ताफलकर
 सबसँ भई भेंट ॥ जिन जिनने प्रमुका शरण लीन । तिन रिद्धि-
 सिद्धि पाई नवीन ॥ ७ ॥ जे रविवृत पूजा करहिं जेय । ते
 सुख्य अनंतानन्त लेय ॥ धरनेद्र पद्मावति हुय सहाय । प्रभु भक्ति
 ज्ञान तत्काल आय ॥ पूजा विधान इहिं विध रचाय । मन वचन
 कांय तीनों लगाय ॥ जो भक्तिभाव जैमाल गाय । सोही सुख
 सम्पति अतुल पाय ॥ ८ ॥ बाजत मृदंग वीणादि सार । गावत
 नाचत नाना प्रकार ॥ तन नन नन नन नन ताल देत । सन

नन नन सुर भर सु लेत ॥ ० ॥ ता थेइ थेइ थेइ पग घरत जाय ।
 छम छम छम घुघरू बजाय ॥ जे करहिं निरत इहिं भांत भांत ।
 ते लहहिं मुख्य शिवपुर सु भात ॥ ११ ॥ दोहा-रवित्रत पूजा
 पार्श्वकी, करें भक्त जन कोय । सुख सम्पति इहिं भव लहै, तुरत
 सुरग पद होय ॥ अडिछ । रवित्रत पार्श्व जिनैन्द्र पूज्य भव मन
 धरें । भव भवके आताप सकल छिनमें टरें ॥ होय सुरेन्द्र नरेन्द्र
 आदि पदवी लहै । सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहै ॥
 फेर सर्व विषं पाय भक्ति प्रभु अनुसरें । नानाविषं सुख योग
 बहुरि शिव त्रियवरै ॥ इत्याशीर्वादः ॥

【२४】 पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा ।

दोहा-निहि पावापुर छिति अष्टति हत सन्मत जगशीश ।

भये सिद्ध शुभ पानसो, जनों नाथ निज शीश ॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर । अत्र तिष्ठ २
 ठः ठः स्थापनं ॥ अत्रममसन्निहितो भवमववषट् सन्निधिकरणं परि
 पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । अथ अष्टक ॥ गीतका छंद ॥ शुचि सलिल
 शीतो कलिल रीतौ श्रमन चोतौ लै जिसो । भर कनक झारी
 त्रिगद हारी दै त्रिधारी जित तृषौ ॥ वर पद्मवन भर पद्मसरवर
 बहिर पावामामही । शिव घाम सन्मत स्वाम पायो जनों, सो सुख-
 दा मही ॥ ॐ ह्रीं श्री पावापुर क्षेत्रे वीरनाथ जिनैन्द्राय जन्मजरा-
 मृत्युविनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ जलं ॥ भव भ्रमत भ्रमत
 अक्षर्म तपकी तपन कर तप ताईयो । तसु बल्य कंदन मलय

चंदन उदय संग घिस ल्याइयो ॥ वरपद्म० ॥ सुगंधं ॥ तंदुल
नवीन अखंड लीने लै महीने ऊजरे । मणि कुन्दइन्दु तुषारद्युत जित
कण रकावीमें धरे ॥ वरपद्म० ॥ अक्षतं ॥ मकरंद लोभन सुमन
शोभन सुरभ चोभन लेयजी । मद समर हरवर अमर तरके ब्रान
द्वग हरवेयजी ॥ वरपद्म० ॥ पुष्पं ॥ नैवेद्य णवन लुघा मिटावन
सेव्य भावन युत किया । रस मिष्ट पूरत इष्ट सूरत लेय कर प्रभु
हित हिया ॥ परपद्म० ॥ नैवेद्यं ॥ तम अज्ञ नाशक स्वपर भाशक
ज्ञेय परकाशक सही । हिम पात्रमें घर मौल्य विनवर द्योत घर
मणि दीपही ॥ वरपद्म० ॥ दीपं ॥ आमोदकारी वस्तु सारी
विघ दुचारी नारनी । तसु तूप कर कर धूप लै दश दिश सुरभ
विस्तारनी ॥ परपद्म० ॥ धूपं ॥ फल भक्त पक्क सुचक सोहन
सुक्त जनमन मोहने । वर रस पुरत लख तुरत मधुरत लेय कर
अत सोहने । वरपद्म० ॥ फलं ॥ जल गंध आदि मिलाय वसु
विघ थार स्वर्ण भरायकें । मन प्रमुद भाव उपाय कर । लै आय
अर्घ बनायकें ॥ परपद्म० ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—चरम तीर्थ करतार श्री, वर्द्धमान जगपाल । कल मल
दल विघ विकल हुय, गाऊं तिन जयमाल ॥१॥ पद्मडि छंद॥
जय जय सुवीर जिन मुक्ति थान । पावापुर वन सर शोभवान ॥
जे शित असाढ़ छट स्वर्ग धाम । तज पुष्पोत्तरसु विमान ठाम॥१॥
कुंडलपुर सिद्धारथ नृपेश । आये त्रिशला जननी उरेश ॥ शित
चैत्र त्रियोदश युत त्रिज्ञान । जन्में तम अज्ञ निवार मान ॥ २ ॥
पूर्वान्ह धवल चतु दशि दिनेश । किय नव्हन कनकगिरि शिर

सुरेश । वय वर्ष तीस पद कुमर काल । सुख द्रव्य भोग मुगते
विशाल ॥ ९ ॥ मारगशिर अलि दशमी पवित्र । चंद्र चंद्रप्रभु
शिवका विचित्र ॥ चलपुरसे सिद्धन शीश नाय । धारो संयम वर
शर्मदाय ॥ ४ ॥ गत वर्ष दुदश कर तप विधान । दिन शित
वैशाख दर्श महान । रिजुकला सरिता तट स्व सोध । उपजायो
जिनवर चरम बोध ॥ ५ ॥ तवही हरि आज्ञा शिर चढ़ाय ।
रचियो समवाश्रित धनद राय । चतुसंध प्रभृत गौतम गनेश ।
युत तीस वरप विहरे जिनेश ॥ ६ ॥ भवि जीवन देशना विविध
देत । आये वर पावानप्र खेत ॥ कार्तिक आले अन्तिम दिवस ईश ।
कर योग निरोध अघातिपीश ॥ ७ ॥ है अकल अमल इक
समय माहि । पंचम गति पाई श्री जिनाह ॥ तव सुरपति जिन
रवि अस्त जान । आये तुरंत चंद्र स्व विमान ॥ ८ ॥ कर वपु
अरचा थुति विविध मांत । लै विविध द्रव्य परमल विख्यात ॥
तव ही अगनींद्र नवाय शीश । संस्कार देहकी त्रिनगदीश ॥ ९ ॥
कर भस्म वंदना स्व भहीय । निवसे प्रभु गुन चितवन स्वहीय ।
पुन नर मुनि गनपति आय आय । वंदी सो रज सिर ल्याय
ल्याय ॥ १० ॥ तवहींसें सो दिन पूज्यमान । पूजत जिनग्रह
जन हर्ष मान । मैं पुन पुन तिस भुवि शीश धार । वंदो तिन
गुणघर टरु मझार ॥ ११ ॥ जिनहीका अब भी तीर्थ एह ।
वर्तत दायक अति शर्म गेह ॥ अरु दुपम काल अवसान ताहि ।
वैतें गौभव थित हर सदाहि ॥ १२ ॥ कुसमंलता छंद ॥ श्री
सन्मत जिन अंग्रि पद्म युग जने भव्य जौ मन वच काय । ताके
जन्म जन्म संतत, अघ जावहिं इक छिन माहिं पलाय ॥ घनघा-

न्यादि शर्म इन्द्रीजन लहँ सो शर्म अतेन्द्री पाय । अजर अमर
अविनाशी शिवथल धर्णी दौल रहै शिर नाय ॥ इत्यादि
आशीर्वादः ॥

(२५) चंपापुर सिद्धक्षेत्र पूजा ।

॥ दोहा ॥ उत्तसव किय पनवार जहं, सुरगन युत हरि
आय । जनों सुथल वसपूज्य सुत, चम्पापुर हर्षाय ॥ १ ॥ ॐ
ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतर संवौषट् इत्याह्वानं
॥ १ ॥ अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ २ ॥ अत्र मम सन्नि-
हितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परिपुष्पांजलिं क्षपेत् ॥

॥ अष्टक ॥ सम अमिय विगत त्रस वारि, लै हिम कुंभ
भरा । लख दुखद त्रिगद हरतार, दै त्रय धार धरा ॥ श्री वासुपूज्य
जिनराय, निर्वृत थान प्रिया । चंपापुर थल सुखदाय, पूजो हर्ष
हिया ॥ ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविना-
शनाय जलं ॥ काश्मीर नीर मधगार, अती पवित्र खरी ।
शीतलचन्दन संगसार, लै भव तापहरी ॥ श्री वासुपूज्य ० ॥
सुगंधं ॥ २ ॥ मणिद्युत समखंड विहीन, तंदुल लै नीके, सौरम
युत नवंबर वीन, शाल महानीके ॥ श्री वासुपूज्य ० ॥
अक्षतं ॥ ३ ॥ अलि लुमन शुमन दग प्राण, सुमन सुरन हुमके ।
लैवहिम अर्जुनवान, सुमन दमन झुमके ॥ श्री वासुपूज्य ० ॥
पुष्पं ॥ ४ ॥ रस पुरत तुरत पकवान, पक्व यथोक्त घृती । क्षुध
गदमद प्रदमन जान, लैविष युक्करुती ॥ श्री वासुपूज्य ० ॥ नैवेद्यं
५ ॥ तमंज प्रनाशक सूर, शिव मग परकाशी । लै रत्नदीप

द्युत पूर, अनुपम सुखराशी ॥ श्री वासु० ॥ दीपं ॥ १ ॥ वर
परमल द्रव्य अनूप, सोध पवित्र करी । तसुचूरण कर कर धूप,
लैविष कंजहरी ॥ श्री वासु० ॥ धूपं ॥ ७ ॥ फल पक्व मधुररस
वान, प्रासुक बहुविधके । रस सुखद रसन दृग प्राप्ति, लेपद पद
सिषके ॥ श्रीवासु० ॥ फलं ॥ ८ ॥ जल फल वसु द्रव्य मिलाय,
लैभर हिमधारी ॥ वसु अंग धरा पर ल्याय, प्रमुद रव चित्तधारी ॥
श्री वासु० ॥ अर्थ ॥

अथ जयमाला

॥ दोहा ॥ भये द्वादशम तीर्थपति, चंपापुर निर्वाण । तिन
गुणकी जयमाला कछु, कहौ श्रवण सुख दान ॥ पद्धिद्विचन्द ॥
जय जय श्री चम्पापुर सु धाम । जहां राजत नृप चसुपूज नाम ॥
जनपौन पत्न्यसे धर्महीन । भवभ्रमन दुःखमय लख प्रवीन ॥१॥
उर करुणाधर सो तम विहार । उपज किरणावलि घर अपार ॥
श्रीवासुपूज्य तिन तने वाल । द्वादशम तीर्थ कर्ता विशाल ॥२॥
भवभोग देहसे विरत होय । वय वाल माहिं ही नाथ सोय ॥
सिद्धन नम महंघृत भार लीन । तप द्वादश विध उग्रोम
कीन ॥ तहं मोह सप्तत्रय आयु येह । दशप्रकृति पूर्व ही क्षय
करेह ॥ श्रेणीजु क्षपक आरुढ़ होय । गुण नवम भाग नव माहिं
सोय ॥ ४ ॥ सोलह वसु इक इक पट इकेय । इक इक इक इम
इन क्रम सहेय ॥ पुन दशम थान इक लोमटार । द्वादशम थान
सोलह विहार ॥ ५ ॥ है अनंत चतुष्टय युक्त स्वाम । पायों सब
सुखद-संयोग ठाम ॥ तहं काल त्रिगोचर सर्व गेय । युगपत हि
समय इक मंहि लेखेय ॥ ६ ॥ कछु काल दुविध वृष अभिय

वृष्टि । कर पौषे भव भवि धान्य श्रेष्ठि ॥ इक मांस आयु अवशेष
जान । जिन योगनकी सुप्रवर्त हान ॥ ७ ॥ ताही थल तृतिशित
ध्यान ध्याय । चतुदशम थान निवसे जिनाय ॥ तहं दुचरम समय
मझार ईश । प्रकृति जु वहत्तर तिनहि पीश ॥ ८ ॥ तेरहनठ चरम
समय मझार । करके श्री जगतेश्वर प्रहार ॥ अष्टमि अवनी इक
समयमद्ध । निवसे पाकर निज अवल रिद्ध ॥ ९ ॥ युत गुण
वसु प्रमुख अमित गुणेश । हेरहे सदाही इमहिं वेश ॥ तवहीसे
सो थानक पवित्र । त्रैलोक्य पूज्य गायों विचित्र ॥ मैं तसु रज
निज मस्तक लगाय । बन्दौ पुन पुन भुवि शशिनाय ॥ ताही पद
बांछा उर मझार । धर अन्य चाह बुद्धि विहार ॥ ११ ॥ दोहा ।
श्री चम्पापुर जो पुरुष, पूजै मनवच काय । वर्णि “ दौल ” सो
पायही, सुख संपति अधिकाय ॥ इत्याशीर्वादः ॥

इति श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र पूजा समाप्तम् ।

(२६) महावीर जिनपूजा

(कावि वृन्दावनजकृत)

श्रीमत वीर हैर भवपीर, भरै सुखसीर अनाकुलताई ।
केहरि अंक अरीकरदंक, नये हारिपंकतमौलि सुहाई ॥
मैं तुमकौ इत थापतु हौं प्रभु, भक्तिसमेत हिये हरषाई ।
हे करुणाधनधारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥

अथाष्टक । छन्द अष्टपदी ।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनमृग मरौ । प्रभु वेग हरौ
भवपीर, यातैं धार करौ । श्रीवीर महां अतिवार, सन्पतिनायक
हो । जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जठं ॥१॥

मलयगिरिचन्दन सार, केसरसंग घसौ । प्रभु भव आताप
निवार, पूजत हिय हुलसौ ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं नि० ॥२॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीने थारमरी । तसु पुन धरौ
अविरुद्ध, पाऊं शिवनगरी ॥ श्रीवीर०, जय वर्द्धमान० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥३॥

सुरतरुके सुमनसमेतं सुमन सुमन प्यारे । सो मनमथभंजन
हेतु, पूजूं पद थारे ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविवर्धनाय पुष्पं नि० ॥४॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार मरी । पद जज्जत, रज्जत
अद्य, भज्जत मूल अरी ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥५॥

तमखंडित मंडित-नेह, दीपक जोवत हूं । तुम पदतर हे
सुखगेह, प्रमतम खोवत हूं ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ॥६॥

हरिचंदन अगर कपूर, चूरि सुगन्ध करे । तुम पदतर खेवत
भूरि, आठौं कर्म जरै ॥ श्री वीर० ॥ जय वर्द्धमान ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्माविध्वंसनाय धूपं नि० ॥७॥

रितुफल कलवर्नित लाय, कंचनथार भरौ । शिव फलहित
हे जिनराय, तुमद्विगं भेट धरौ ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

जलफल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरौ । गुण गाळ
भवदाधितार, पूजत पाप हरौ ॥ श्रीवीर० जयवर्द्धमान० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ॥९॥

पंचकल्पाणक-राग टप्पा ।

मोहि राखौ हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी. मोहि
राखौ हो सरना ॥टेक॥ गरम सादसित छट्ट लियौ तिथि, त्रिशला
उर अघहरना । सुर सुरपाति तित सेव करत नित, मैं पूजूं भवत-
रना ॥ मोहि राखौ० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठिदिने गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर-
जिनन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जनम चैत सित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना । सुरगिर
सुरगुरु पूज रचायौ, मैं पूजूं भवहरना ॥ मोहिराखौ० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदशीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीमहावीर-
जिनेन्द्राय अघ निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मगशिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना ।
नृप कुमारघर पारन कीना, मैं पूजूं तुम चरना । मोहि राखौ०

ॐ ह्रीं मार्गशीर्ष कृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर-
जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुक्लदशै वैशाखदिवस आरि, घात चतुक क्षय करना ।
केवल लहि भावि भवसर तारे, जजूं चरन सुख भरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहांवीर-
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

क्रांतिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना । गनफ-
निवृंद जजै तित बहु विधि, में पूजूं मयहरना ॥ मोहि राखौ ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावास्यायां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीमहां-
वीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

अथ जयमाला ।

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा ।

अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा ।

दुखहरन आनंदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं ।

सुकुमाल गुन मणिमाल उन्नत, भालकी जयमाल है ॥ १ ॥

घस्ता-जय त्रिशलानंदन हरिकृतवंदन, जगदानंदनचंद वरं ।

भवतापनिकंदन तनमनवंदन, रहितसपंदन नयन धरं ॥ २ ॥

तोढक-जय केवलमानुकलासदनं । भविकोक्रविकाशन-कंजवनं ॥

जगजीत महारिपु मोहहरं । रजज्ञानदृगांवरचूरकरं ॥ १ ॥

गर्मादिक मंगल मंडित हो । दुख दारिद्र्यो नित खंडित हो ।

जगमाहिं तुमी सत पंडित हो । तुम ही भवभावविहंडित हो ॥ २ ॥

हरिवंश सरोजनकौं रवि हो । बलवंत महंत तुमी कवि हो ॥

लहि केवल धर्मप्रकाश कियो । अवलौं सोई मारग राजति यौ ॥ ३ ॥

पुनि आपतने गुणमाहिं सही । सुर मग्न रहैं नितने सब ही ।

तिनकौं बनिता गुण गावत हैं । लय तानिसौं मनभावत हैं ॥ ४ ॥

पुनि नाचत रंग अनेक भरी । तुव भक्तिविषे पग एम धरी ।

अननं अननं अननं अननं । सुर लेत तहां तननं तननं ॥ ५ ॥

घननं घननं घनघंट बजै । दमदं दमदं मिरदंग सजै ।
 गगनांगणगर्भगता सुंगतो । ततता ततता अतता वितता ॥ ६ ॥
 धृगतां धृगतां गति वाजत है । सुरताल रसाल जु छाजत है ।
 सननं सननं सननं नभमें । इकरूप अनेक जु धार भमें ॥ ७ ॥
 कह नारि सु वीन बजावतु हैं । तुमरौ जस उज्जल गावतु हैं ।
 करतालविषै करताल धरै । सुरताल विशाल जु नाद करै ॥ ८ ॥
 इन आदि अनेक उछाहभरी । सुर भाक्ति करै प्रभुजी तुमरी ।
 तुमही जगजीवनके पितु हो । तुमही विनकारनके हितु हो ॥ ९ ॥
 तुमही सब विघ्न विनाशन हो । तुमही निज आनंदभासन हो ।
 तुमही चितचितितदायक हो । जगमाहिं तुमी सब लायक हो ॥
 तुमरे पनमंगलमाहिं सही । जिय उत्तम पुण्य लियौ सब ही ।
 हमको तुमरी सरनागत है । तुमरे गुनमें मन पागत है ॥ ११ ॥
 प्रभु मो हिय आप सदा बसिये । जबलौ वसुकर्म नहीं नसिये ।
 तबलौ तुम ध्यान हिये बरतो । तबलौ श्रुतचितन चितरतो ॥ १२ ॥
 तबलौ व्रत चारित चाहत हौं । तबलौ शुभ भाव सुगाहत हौं ।
 तबलौ सतसंगति नित्य रहौ । तबलौ मम संजम चित्त गहौ ॥ १३ ॥
 जबलौ नहिं नाश करौ अरिको । शिवनारि बरौ समताधरिको ।
 यह द्यो तबलौ हमको जिनजी । हम जाचत हैं इतनी सुनजी ॥ १४ ॥
 घत्ता-श्रीवीर जिनेशा नमितसुरेशा, नागनरेशा भगतिभरा ।

वृन्दावन ध्यावै भक्ति बढ़ावै वांछित पावै शर्मवरा ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्ये निर्बपामीति स्वाहा ॥

दोहा-श्री सनमतिके जुगलपद, जो पूजहिं धर-प्रीत ।

वृन्दावन सो चतुरनर, लहै मुक्त जवनीत ॥ १६ ॥

सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
तंदुल घवल सु रुज्ज्वल खासे धोयके । हेम वरनके थार भरौं
शुचि होय कै ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध-
क्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥ फूल
सुगंध सु ल्याय हरषसौं आन चढ़ायौ । रोग शोक मिट जाय
मदन सब दूर पकायौ ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेद-
शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा
॥ ४ ॥ षट् रस कर नैवेद्य कनक थारी भर ल्यायो ॥ सुषां निवारण
हेतु सु पूजौ मन हरषायो ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेद-
शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो सुषारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति
स्वाहा ॥ ५ ॥ छेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत हो । पूजत
होत स्वज्ञान मोह तम नाश हो ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री
सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपा-
मीति स्वाहा ॥ ६ ॥ दस विधि धूप अनूप अग्नि मैं खेबहुं । अष्ट
कर्मकौ नाश होत सुख पावहुं ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री
सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति
स्वाहा ॥ ७ ॥ केला लोंग सुपारी श्रीफल ल्याइये । फल चढ़ाय
मन बांछित फल सु पाइये ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मे-
दशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा
॥ ८ ॥ जल गंधाक्षित फूल सु नेवन लीजिये । दीप घृत फल लैं
अर्घ चढ़ाइये ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध-
क्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पढडी छन्द-श्रीवीस तीर्थकर हैं जिनेन्द्र । अरु हैं असंख्य

बहुते मुनेंद्र ॥ तिनकों करनोर करों प्रणाम । तिनकों पुनो तन
 सकल काम ॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद
 प्राप्ताय अर्घ । ढार योगीरायसा—श्री सम्मेदशिखर गिर उन्नत
 शोभा अधिक प्रमानों । विंशति तिहपर कूट मनोहर अद्भुत रचना
 जानी ॥ श्री तीर्थकर बीस तहाति शिवपुर पहुंचे जाई । तिनके पद
 पंफज युग पूजों अर्घ प्रत्येक चढ़ाई । ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर
 सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥ प्रथम सिद्धवर कूट
 मनोहर आनंद मंगलदाई । अनित प्रभु नंह ते शिव पहुंचे पूजो
 मनवचकाई ॥ कोड़ि जु अस्सी एक अर्घ मुनि चौवन लाख सुंगाई ।
 कर्म काट निर्वाण पधारे तिनको अर्घ चढ़ाई । ॐ ह्रीं श्री सम्मेद-
 शिखर सिद्धकूटतें श्री अनितनाथ जिनेन्द्रादि एक अर्घ अस्सी
 कोड़ि चौवन लाख मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्व-
 पामीति स्वाहा ॥१॥ धवल कूट सो नाम दूसरो है सवकों सुख-
 दाई । संभव प्रभुसो मुक्ति पधारे पाप तिमिर मिटजाई । धवलदत्त
 हैं आदि मुनीश्वर नव कोड़ाकोड़ि जानी । लक्ष बहत्तर सहस्र बया-
 लिस पंच शतक ऋषि मानौ ॥ कर्म नाश कर अमरपुरो गए बंदी
 सीस नवाई । तिनके पद युग जलों भावसों हरष हरष चितलाई ॥
 ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर धवलकूटतें संभवनाथ जिनेन्द्रादि नव
 कोड़ाकोड़ि बहत्तर लाख व्यालिस हजार पांचसे मुनि सिद्धपद
 प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥१॥ चौपाई—आनंद कूट महा सुख-
 दाय । प्रभु अभिमंदन शिवपुर जाय । कोड़ाकोड़ि बहत्तर जानी ।
 सत्तर कोड़ि लाख छत्तीस मानौ ॥ सहस्र बयालीस शतक जु
 सात । कहें जि नागम में इस भांत । ए ऋषि कर्म कःट शिव गये,

तिनके पद युग पुनत भये ॥ ॐ ह्रीं श्री आनन्दकूटतै अभिन-
न्दननाथ जिनेन्द्रादि मुनि बहत्तर कोड़ाकोड़ि अरु सत्तर कोड़ि
छत्तीस लाख व्यालीस हजार सातसैं मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घ
निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ अडिछ छंद-अवचल चौथौ कूट महां
सुख धाम जी । जइ ते सुमति जिनेश गये निर्वानजी ॥ कोड़ा-
कोड़ि एक मुनीश्वर जानिये । कोड़ि चौरासी लाख बहत्तर
मानिये ॥ सहस इक्यासी और सातसैं गाईये । कर्म काट शिव
गये तिन्हें सिर नाईये ॥ सो थानक मैं पुजौ मन वच काय
जू । पाप दूर हो जाय अवचल पद पायजू ॥ ॐ ह्रीं श्री अवचल
कूटतै श्री सुमति जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ि चौरासी
कोड़ि बहत्तर लाख इक्यासी हजार सातसैं मुनि सिद्धपद प्राप्ताय
सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ ५ ॥ अडिछ छंद-मोहन कूट महाच परम
सुंदर कहौ । पद्मप्रभु जिनराय जहां शिवपद लहौ ॥ कोड़ि
निन्यानवै लाख सतासी जानिये । सहस तेताकिस और मुनीश्वर
मानिये ॥ सप्त सैकड़ा सत्तर ऊपर बीस जू । कहैं जवाहरदाससु दोय
कर जोरेजू ॥ ॐ ह्रीं श्री मोहनकूटतै श्री पद्मप्रभु मुनि निन्यानवै
कोड़ि सतासी लाख तेताकिस हजार सातसैं संताउन मुनि निर्वा-
णपदप्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ ६ ॥ सोरठा-कूट प्रभास
महान । सुंदर जग मणि मोहनौ । श्री सुपार्श्व भगवान, मुक्ति गये
अथ नाथ कर ॥ कोड़ाकोड़ी उनचास कोड़ि चौरासी जानिये ।
लाख बहत्तर जान सात सहस अरु सातसैं ॥ और कहे
व्यालीस जेहत्तैं मुनि मुक्तिहि गये । तिनको नमुं बित सीस
दास जवाहर जोरकर ॥ ॐ ह्रीं प्रभासकूटतै श्री सुपार्श्वनाथ जि-

नेन्द्रादि उनंचास कोडाकोडी बहत्तर लाख सात हजार सातसै
 व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्ध ॥ ७ ॥ दोहा
 पावन परम उत्तंग हैं कलित कूट है नाम ॥ चंद्र प्रभु मुक्तें गये,
 वंदौ आठौ जांम ॥ नवसै अरु वसु जानियौ, चौरासी ऋषि मान ।
 क्रीड़ि बहत्तर रिषि कहे । असी लाख परवान ॥ सहस्र चौरासी
 पंच शत । पचवन कहे मुनीश । वसु कर्मनकौ नाशकर ॥ गये
 लोकके शीस ॥ कलितकूटतैं शिव गये । वंदौ सीस नवाय ॥
 तिनपद पूजौ भाव सौ, निज हित अर्थ चढ़ाय ॥ ॐ ह्रीं
 कलितकूटतैं श्री चंद्रप्रभु जिनेंद्रादि नवसै चौरासी अरव बहत्तर
 कोड अस्सीलाख चौरासी हजार पांचसै पचवन मुनि सिद्धपद
 प्राप्ताय अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥ पद्धडी छन्द-सुवरण-
 भद्र सो कूट जान । जहं पुष्पदंतकौ मुक्त थान ॥ मुनि कोडा-
 कोडी कहै जु भाख । अरु कहे निन्यानवै चार लाख ॥ १ ॥ सौ
 सात सतक मुनि कहे सात । रिषि अस्सी और कहे विख्यात ॥
 मुनि मुक्ति गये वसु कर्म काट । वंदौ कर जोर नवाय माथ ॥ २ ॥
 ॐ ह्रीं श्री सूरप्रभुकूटतै पुष्पदंत जिनेंद्रादि एक कोडाकोडी
 निन्यानवै लाख सात हजार चारसै अस्सीमुनि सिद्धपद प्राप्ताय
 सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्ध ॥ ९ ॥ सुन्दरी छंद-सुभग विद्युतकूट सु
 जानियै । परम अद्भुतता परमानियै ॥ गये शिवपुर शीतलनाथनी ।
 नमहुं तिनपद करी धरि माथनी ॥ मुनिवसु कोडाकोडी प्रमा-
 निये । और जो लाख व्यालिस जानियै ॥ कहे और जु लाख
 वंत्तीस जू । सहस्र व्यालिस कहे यत्तीस जू ॥ और तहंसै नीसै
 पांच सुजानिये । गये मुनि शिवपुरकौ जु मानिये ॥ कहि पूजा

जे मनलायकें । धरहि जन्म न भवमें लायकें ॥ ॐ ह्रीं सुभग विष्णु-
 कूटतें श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि अष्ट कोड़ाकोड़ी व्यालीस लाख
 बत्तीस हजार नौसै पांच मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ
 ॥ १० ॥ ढार योगीरासा-कूटजु संकुल परम मनोहर श्री श्रीयांस
 जिनराई । कर्म नाश कर अमरपुरी गये, वंदों शीस नवाई ॥ कोड़ा
 कोड़ जु है ध्यानवै, छ्यानवै कोड़ प्रमानौ ॥ लाख ध्यानवै साढ़े
 नवभै, इरुसठ मुनीश्वर गानो । ताऊपर व्यालीस रहे हैं श्री मुनिके
 गुन गावै । त्रिविध योग कर जो कोई पूनै सहजानंद पद पावै ॥
 ॐ ह्रीं संकुल कूटतें श्रीयांसनाथ जिनेन्द्रादि ध्यानवै कोड़ाकोड़ी
 ध्यानवै कोड़ ध्यानवै लाख साढ़ेनौ हजार व्यालीस मुनि सिद्ध
 पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ ११ ॥ कुसुमलता छंद-श्री
 मुनि संकुल कूट परम सुंदर सुखदाई । विमलनाथ भगवान जहां
 षंचमगति पाई ॥ सात शतक मुनि और व्यालिस जानियै । सत्तर
 कोड़ सत लाख हजार छै मानिये ॥ दोहा-अष्ट कर्मको नाश कर,
 मुनि अष्टम क्षिति पाय ॥ तिनको मैं वंदन करों, जन्ममरण दुख
 जाय ॥ ॐ ह्रीं श्री संकुलकूटतें श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि सत्तर
 कोड़ सात लाख छैः हजार सातसै व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय
 सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १२ ॥ आङ्गिल-कूट स्वयंभू नाम परम
 सुंदर कहाँ । पशु अनंत जिननाथ जहां शिवपद कहाँ ॥ मुनि जु
 कोड़ाकोड़ी ध्यानवै जानियै । सत्तर कोड़ जु सत्तर लाख बला-
 नियै ॥ सत्तर सहस जु और सातसै गाइयै । मुक्ति गये मुनि तिन
 पद शीस नवाईये ॥ कहे जवाहरदास सुनौ मन लायकें । गिरवरको
 नित पूजौ मन हरषायकें ॥ ॐ ह्रीं स्वयंभूकूटतें श्री अनंतनाथ

जिनेन्द्रादि क्ष्यानवै कोड़ाकोड़ी सत्तर लाख सात हजार सातसैं मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्थ ॥ १३ ॥ चौपाई-कूट सुदत्त महां शुभ जानों । श्री जिनधर्म नाथकों धानों ॥ मुनि जु कोड़ा-कोड़ उनीस । और वहे ऋषि कोड़ उनीस ॥ नव्वै लाख नौ सहस्र सु जानों । सात शतक पंचानव मानों ॥ मोक्ष गये वसु कर्मन चुरे । दिवस रैन तुमही मगपुरे ॥ ॐ ह्रीं श्री सुदत्त कूटने श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि उनीस कोड़ाकोड़ी उनीस कोड़ नव्वै लाख नौ हजार सातसैं पंचानवै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्थ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १४ ॥ द्वे प्रमासी कूट मुंदर अति पवित्र सो जानिये । सातनाथ जिनेन्द्र जहांति परम धाम प्रमानिये । ॐ ह्रीं प्रभास कूटतें श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्रादि नौ कोड़ाकोड़ी नौ लाख नौ हजार नौसे निन्यानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्थ ॥ १५ ॥ गीतिका छन्द-ज्ञानघर शुभ कूट सुंदर परम मनको मोहनो । जहते श्री प्रभु कुंयु स्वामी गये शिवपुरको गनो ॥ कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवे मुनि कोड़ि क्ष्यानवे जानिये । लाख बत्तीस सहस्र क्ष्यानवे अरु सौ सात प्रमानिये ॥ दोहा-और कहे व्यालीस । सुमरो हिये मझार । जिनवर पुजो भाव सों, कर भवदधि तें पार ॥ ॐ ह्रीं ज्ञानघरकूट तें श्रीकुंयुनाथ स्वामी और क्ष्यानवे कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवे कोड़ि बत्तीस लाख क्ष्यानवे हजार अरु सातसौ वशलीस मुनि सिद्धपदप्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्थ ॥ १६ ॥ दोहा-कूट जु नाटक परम शुभ, शोभा अपरम्पार । जहते अरह जिनेन्द्रजी, पहुँचे मुक्त मंझार । कोड़ि निन्यानवे जानि मुनि, लाख निन्यानवे और । कहे सहस्र निन्यानवे, बंदी

कर जुग जोर ॥ अष्ट कर्मको नाश कर, अविनाशी पद पाय । ते
गुरु मम हृदये बसौ, भवदधि पार लगाय ॥ ॐ ह्रीं नाटककूटतें
श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि निन्वानवे कोड़ि निन्यानवे लाख
निन्यानवे हजार मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १७ ॥
अडिल्ल छन्द-कूट संबल परम पवित्र जू ॥ गये शिवपुर
मल्लि जिनेश जू ॥ मुनि जु क्ष्यानवे कोड़ि प्रमानिये, षट् जगत
हृदये सुख मानिये ॥ ॐ ह्रीं संबल कूटतें श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि
क्ष्यानवे कोड़ाकोड़ी मुनि सिद्धपदप्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १८ ॥
ढार परमादीको चालमें-मुनिसुव्रत जिनराज सदा आनंदके
दाई । सुंदर निर्जर कूट जहां तैं शिवपुर पाई ॥ निन्यानव कोड़ा
कोड़ कहे मुनि कोड़ सत्याना । नो लाख जोर मुनेन्द्र कहे नौसे
निन्याना । सोरठा-कर्मनाश ऋषिराज, पंचमगतिके सुख लहे ।
तारन तरन जिहान, मो दुख दूर करौ सकल ॥ ॐ ह्रीं श्री निर्जर
कूटतें श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि निन्यानवे कोड़ाकोड़ी
संतावन कोड़ नौ लाख नौ शतक निन्यानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय
अर्घ ॥ १९ ॥ ढारजोगराखा-एह मित्रघर कूट मनोहर सुंदर
अतिछबछाई । श्री नमिनाथ जिनेश्वर जहांतैं शिवपुर पहुँचे जाई ॥
नौसे कोड़ाकोड़ी मुनीवर एक अरब ऋषि जानौ । लाख सैतालिस
सात सहस अरु नौसे व्यालिस मानौ । दोहा-वसु कर्मनको
नाशकर, अविनाशी पद पाय । पूजौ चरन सरोज ज्यौ, मनवांछित
फल पाय ॥ ॐ ह्रीं श्री मित्रघर कूटतें श्री नमिनाथ जिनेन्द्रादि
मुनि नौसे कोड़ाकोड़ी एक अर्घ सैतालिस लाख सात हजार नौसे
व्यालिस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ २० ॥

दोहा—सुवर्ण भद्र जु कूटपै, श्री प्रभु पारसनाथ । जहंतै
 शिवपुरको गये, नमो जोड़ि जुग हाथ ॥ ॐ ह्रीं सुवर्णभद्र कूटपै
 श्री पार्श्वनाथ स्वामी सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपा-
 मीति स्वाहा ॥ ११ ॥ या विधि वीस जिनेंद्रके, वीसौ शिखिर
 महान ॥ और अहंख्य मुनि सहनही । पहुंचे शिवपुर थान । ॐ
 ह्रीं श्री वीस कूट सहित अनंत मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 अर्घं ॥ १२ ॥ ढारकातिककी-प्राणी हो आदीश्वर महाराजनी,
 अष्टापद शिव थान हो । वासपूज जिनराजनी चंपापुर शिवपद
 जान हो ॥ प्राणी नेम प्रभु गिरनारतैं, पावापुर श्री महावीर हो ॥
 प्राणी पूजौ अर्घ चढ़ाय कै, इह नाथै भयभीत हो । प्राणी पुनौ
 मनवच कायके ॥ ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ कैलाशगिरतैं, श्री महा-
 वीरस्वामी पावापुर तैं, श्री वासुपूज चम्पापुर तैं, नेमिनाथ गिरनार
 तैं सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १३ ॥ दोहा—सिद्ध-
 क्षेत्र जे और हैं, भरत क्षेत्रके मांहि ॥ और जु अतिशय क्षेत्र
 हैं, वहे जिनागम मांहि । तिनकौ नाम जु लेतही, पाप दूर हो
 जाय । ते सब पूजौ अर्घ लै, भव भवकुं सुखदाय । ॐ ह्रीं भरत
 क्षेत्र सम्बन्धी अतिशय क्षेत्रेभ्यो अर्घं । सोरठा—दीप अढ़ाई
 मांहि सिद्धक्षेत्र जे और हैं । पूजौ अर्घ चढ़ाय भवभवके अघ नाश
 है ॥ ॐ ह्रीं अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १४ ॥

अथ जयमाल ।

चौपाई—मन मोहन तीरथ शुभ जानौ । पावन परम सु
 क्षेत्र प्रमानौ ॥ उन्तीस शिखिर अनूपम सोहे । देखत ताहि
 सुरासुर मोहे । दोहा—तीरथ परम सुहावनौ, शिखिर सम्भेद

विशाल ॥ कहत अरुष बुध उक्तसो, सुखदायक जयमाल
 ॥ २ ॥ चोपाई-सिद्धक्षेत्र तीरथ सुखदाई । वंदत पाप दूर हो
 जाई । शिखिर शीतपर कूट मनोग । कहे बीस अतिशय संयोग
 ॥ ३ ॥ प्रथम सिद्ध शुभ कूट सुनाम । अनितनाथ कौं मुक्ति सु
 घाम ॥ कूट तनौ दर्शन फल कहौ । कोड़ि बत्तीस उपास फल
 लहौ ॥ ४ ॥ दुनो घवल कूट है नाम । संभव प्रभु जहँ
 निर्वाण ॥ कूट दरश फल प्रोषव मानौ । लाख ब्यालिस कहै
 बखानौ ॥ ५ ॥ आनंद कूट महां सुखदाई । जहँ तैं अभिनन्दन
 शिव जाई ॥ कूट तनौ वंदन इम जानौ । लाख उपास तनौ फल
 मानौ ॥ ६ ॥ अवचल कूट महासुख वेश । मुक्ति गए तहँ
 सुमति जिनेश ॥ कूट भावघर पूजे कोई । एक कोड़ प्रोषव फल
 होई ॥ ७ ॥ मोहन कूट मनोहर जान । पद्मप्रभु जहँ निर्वाण ॥
 कूट पुन्य फल कहै सुजान । कोड़ उपास कहै भगवान ॥ ८ ॥
 मन मोहन शुभ कूट प्रभास । मुक्ति गये जहँ श्रीयांस ॥ पूजै
 कूट महां फल होय । कोड़ बत्तीस उपवास जु सोय ॥ ९ ॥
 चन्द्रप्रभु कौ मुक्ति सु घाम । परम विशाल ललित घट नाम ॥
 दर्शन कूट तनौ इम जानौ । प्रोषव सोला लाख बखानौ ॥ १० ॥
 सुप्रभ कूट महां सुखदाई । जहँ पुष्पदंत शिव जाई ॥ पूजै
 कूट महा फल होय । कोड़ उपास कहौ जिनदेव ॥ ११ ॥ सो
 विद्युतवर कूट महान । मोक्ष गये शीतल घर ध्यान ॥ पूजै त्रिविध
 योग कर कोई । कोड़ उपास तनौ फल होई ॥ १२ ॥ संकुल
 कूट महां शुभ जानौ । जहँ श्री श्रीयांस भगवानौ ॥ कूट तनौ अव
 दर्शन सुनौ । कोड़ उपास जिनेश्वर मनौ ॥ १३ ॥ संकुल कूट

परम सुखदायि । विपक निनेश जहां शिव जाई ॥ मनवच दर्श
 करै जो कोई, कोढ़ उपास तनी फल होई ॥ १४ ॥ कूट स्वयंभू
 सुभगसु ठाम । गये अनंत अमरपुर धाम । यही कूट-को दर्शन
 करै । कोढ़ उपास तनी फल धरै ॥ १५ ॥ है सुदत्तवर कूट
 महान । जंहते धर्मनाथ निर्वाण ॥ परम विशाल कूट है सोई,
 कोढ़ उपास दर्श फल होई ॥ १६ ॥ कूट प्रभास परम शुभ
 कही । शांति प्रभु जंहते शिव लहो ॥ कूट तनी दर्शन है सोई ।
 एक कोढ़ प्रोषष फल होई ॥ १७ ॥ परम ज्ञानधर है शुभ कूट ।
 शिवपुर कुंथु गये अघ छूट ॥ इनको पुनै दोई केर जोर । फल
 उपास कही इक कोढ़ ॥ १८ ॥ नाटक कूट महान शुभ ज्ञान ।
 जंहतै अरह मोक्ष भगवान ॥ दर्शन करै कूटको जोई । क्षयानवै
 कोढ़ उपास फल होई ॥ १९ ॥ संवलकूट मल्लि जिनराय । जंहतै
 मोक्ष गये निज काय ॥ कूट दरश फल कही जिनेश । कोढ़ि एक
 प्रोषष फल वेस ॥ २० ॥ निर्जर कूट महान सुखदाई । मुनिसुव्रत
 जंह तै शिव जाई ॥ कूट तनी दर्शन है सोई । एक कोढ़ प्रोषष
 फल होई ॥ २१ ॥ कूट मित्रधरतें नमि मोक्ष । पूजत पांय सुरा-
 सुर जक्ष ॥ कूट तनी फल है सुखदाई । कोढ़ उपास कही जिनराई
 ॥ २२ ॥ श्रीप्रभु पार्श्वनाथ जिनराय, दुरगति ते छूटे महाराज ॥
 सुवर्णभद्र कूट को नाम । जहं तें मोक्ष गये जिन धाम ॥ २३ ॥
 तीन लोक हित करत अनूप । मंगल मय जगमैं चिद्रूप ॥ चिंता-
 मणि स्वर वृक्ष समान । रिद्ध सिद्ध मंगल सुख दान ॥ २४ ॥
 पारस और काम सुर घेनु । नानाविध आनंदको देनु । व्याधि
 विकार जाहि सब भाज । मन चितै पुरै सब काज ॥ २५ ॥ भव-

दधि रोग विनाशक होई । जो पद जगमै और न कोई ॥ निर्मल
परम धाम उत्कृष्ट । वन्दत पाप भजै अरि दुष्ट ॥ २६ ॥ जो
नर ध्यावत पुन्य कमाये । जस गावत ऐ कर्म नशाय ॥ कष्ट
अनादि कर्मके पाप । भजै सकल छिनमें संताप ॥ २७ ॥ सुर
नर इन्द्र फणिन्द्र जु सवै और खगेन्द्र महेन्द्र जु नमै, नित सुर
सुरी करै उच्चार । नाचत गावत विविध प्रकार ॥ २८ ॥ बहु
विध भक्ति करै मन लाय । विविध प्रकार वाजिप्र बजाय ॥ २९ ॥
द्रुम द्रुम द्रुम बानै मृदंग । घन घन घंट बजै मुहचंग ॥ झन
झन झनिया करै उच्चार । सरसारंगी धुन उच्चार ॥ ३० ॥
मुरली वीन बजै घन मिष्ट । पटहांतुरी स्वरावत पुष्ट ॥ नित
सुरगुण श्रुति गावत सार । सुरगण नाचत बहुत प्रकार ॥ ३१ ॥
झननन झननन नुरुर तान । तननन तननन टोरत तान । ता थेई
थेई थेई थेई चाल । सुर नाचत निज नावत सुमाल ॥ ३२ ॥
गावत नाचत नाना रंग ॥ छेत जहां सुर आनंद संग ॥ नित
प्रति सुर जहां वंदत जाय ॥ नाना विध मंगल कौं गाय ॥ ३३ ॥
अनहद धुन सुन मोद जु सोय । प्रापत व्रतकी अत ही होय ॥
तावै हमकुं है सुख सोई । गिरवर वंदौ कर घर दोई ॥ ३४ ॥
मास्त मंद सुगंध चलेय । गंधोदक तहां वरषै सोय ॥ जियकी
जात विरोध न होई । गिरवर वंदै कर घर दोई ॥ ३५ ॥
ज्ञान चरित तपसाधन होई, निज अनुभौकौ ध्यान धरेई ॥
शिव मंदिरको द्वारौ सोई, गिरवर वंदै कर घर दोई ॥ ३६ ॥ जो
भव वन्दै एक जुवार, नरक निगोद पशु गति टार ॥ सुर शिव-
पदकुं पावै सोय । गिरवर वंदै कर घर दोय ॥ ३७ ॥ ताकी

महिमा अगम अपार । गणधर कथन न पविं पार । तुम अमृत मैं
 मति कर हीन । कही भक्तिवश केवल कीन ॥ ३८ ॥ घत्ता-श्री
 सिधक्षेत्रं भति सुख देतं ॥ सेवतु नासौ विघ्न हरा ॥ अरु क्रम
 विनाशै सुखः पयासै केवल भासै सुख करा ॥ ३९ ॥ ॐ ह्रीं श्री
 सम्मेदशिखिर सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घ । दोहा—
 शिखिरसम्मेद पूजो सदा, मन बच तन नर नारि ॥ सुर शिवके
 जे फल लहै । कहते दास जवारी ॥ ४० ॥

इत्यादि आशीर्वादः ।

चतुर्थ खंड ।

(१) शान्तिपाठः

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करना चाहिये ।)

दोषकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।

अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥

पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पुनितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्वर ।

शान्तिकरं गणशान्तिममीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।

आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

तं जगदचित्शान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ?

सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।
ते मे मिनाः प्रवरवंशजगत्पदीपास्तीर्थकराः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ६ ॥
इन्द्रवज्रा ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रमामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥
स्वर्गधरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रमानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको ग्रीमिपालः ।
काले काले च सम्यग्दर्शतु मधवा व्याधियो यान्तु नाशम् ॥
तुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां भास्मभूज्जीवलोके ।
जिनेन्द्र धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥
अनुष्टुप-प्रध्वस्तघातिक्रमणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥
प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्ट प्रार्थना ।

शास्त्राम्यासो भिनपतिनुतिः सङ्गति सर्वदाद्यैः
सदृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भवभत्रे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

१ अशोकवृक्षः सुरपुष्पवृद्धिर्दिव्यध्वनिश्चामरमाधनं च ॥ मामण्डलं
दुन्दुभिरातपत्रं सद्गतिहाय्याणि त्रिनेश्वराणाम् ॥ (यह श्लोक क्षेपक है,
इसे बोलना न चाहिये ।)

आर्यावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।

तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥

आर्या-अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए मणियं ।

तं खमठ णाणदेव य मज्झवि दुःखक्खयं दिवु ॥ ११ ॥

दुःखक्खओ कम्मखओ समाहिमरणं च बोहिक्काहो य ।

मम होठ अगतवंधव तव जिणवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(२) विसर्जन फाट् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।

तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥

आव्हानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम् ।

विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥

मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।

तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥

आहूता ये पुरा देवा लब्धभगा यथक्रमम् ।

ते मयाम्बुर्क्षिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥ ४ ॥

(३) माया स्तुतिपाठ ।

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो ।
 श्रीनाभिनंदन जगतवंदन, आग्निनाथ निरंजनो ॥ १ ॥
 तुम आदिनाथ अनंदि सेऊं, सेय पद पूजा करूं ।
 कैलासगिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल हिरदै वरूं ॥ २ ॥
 तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली ।
 यह विरद सुनकर शरण आयो, कृपां कीजे नाथजी ॥ ३ ॥
 तुम चंद्रवदन सु चंद्रलच्छन, चंद्रपुरि परमेश्वरो ।
 महासेननंदन, जगतवंदन, चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
 तुम शांति पांच वरदाण पूजो, शुद्ध मनवंचकायजू ।
 दुर्भिक्ष चोरो पापनाशन, विघन जाय पलायजू ॥ ५ ॥
 तुमबाल ब्रह्म विवेकसागर, मन्व्यकमल विधाशनो ।
 श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
 जिन तन्त्री राजुल राजन्या, कामसैन्या वश करो ।
 चारित्र्य थ चढ़ि भये दूल्हा, जाय शिरमणी वरी ॥ ७ ॥
 कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मल क्रियो ।
 अश्वसेननंदन जगतवंदन, सकलसंघ मंगल क्रियो ॥ ८ ॥
 जिन घरी बालकपणे दीक्षा, कमठभान विदारकै ।
 श्रीपार्श्वनाथ जितेन्द्रक पद, मैं नमो शिरधारकै ॥ ९ ॥
 तुम कर्मघाता मोसदाता, दीन जानि दया करो ।
 सिद्धार्थनंदन जगतवन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
 छत्र तीन सोढे सुगन्ध मोहे, वीनती अवधारिये ।
 कर जोड़ि सेवक वीनवे प्रभु, आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥

अब होठ भव भव स्वामी मेरे, मैं सदा स्वेच्छ रहों ।
 कर जोड़ यो वरदान मांगो, मोक्षफल जवत् लहों ॥ १२ ॥
 जो एकमांहि एक राजे, एकमांहि अनेकनो ।
 इक अनेककी नहीं संख्या, नमो सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥
 चौपाई ।

मैं तुम चरणकमलगुणगाय । बहुविध भक्ति करी मन लाय । ।
 जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि । यह सेवाफळ दीजे मोहि ॥ १४ ॥
 कृपा तिहारी ऐसी होय । जामन मरन मिटावो मोय ।
 बारवार मैं बिनतो करूं । तुम सेयें भवसागर तरूं ॥ १५ ॥
 नाम लेत सब दुख मिट जाय । तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय ।
 तुम हो प्रभु देवनके देव । मैं तो करूं चरण तब सेव ॥ १६ ॥
 मैं आयो पूजनके काज । मेरो जन्म सफल भयो आज ॥
 पूजा करकैं नकडं शीस । सुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ १७ ॥
 दोहा-सुख देना दुख भेटना, यही तुम्हारी चान !

मो गरीबकी चीनती, मुन लीज्यो भगवान ॥ १८ ॥
 दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान ।
 स्वर्गनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥ १९ ॥
 जैसी मदिमा तुमविषै, और घरे नहिं कोय ।
 जो मृगजै ज्योत है, तारनभै नहिं सोय ॥ २० ॥
 नाथ निहारे नामतैं, अघ छिनमःहिं पलाय ।
 ज्यों दिस्कर परकाशतैं, अंधकार बिनशाय ॥ २१ ॥
 गहुन प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अमान
 पूजविधि जानूं नहीं, शरण राखि भगवान ॥
 इनि भाषास्तुतिपाठ समाप्त ।

(४) श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम् ।

(भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं)

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्वलक्षणं त्वां गिरां पतिम् । नाम्नामेष्टसहस्रेण
तोष्टुमोऽमीष्टसिद्धये ॥ १ ॥ श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरा-
त्मभूः । स्वयंप्रभः प्रभुर्मोक्ता विश्वभूरपुनर्मवः ॥ २ ॥ विश्वात्मा
विश्वलोकेऽशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विश्चविवेशो विश्वयोनिर-
नीश्वरः ॥ ३ ॥ विश्वदृष्टा विमुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः ।
विश्वप्राप्ती विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥ विश्वकर्मा
जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः । विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योति-
रनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पातिः ।
अनन्तचिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरवन्धनः ॥ ६ ॥ युगादिपुरुषो
ब्रह्मा पञ्चब्रह्मप्रभः शिषः । परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७ ॥
स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिनः । मोहारिविजयी जेता
धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥ प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगी-
श्वरार्चितः । ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥ ९ ॥ शुद्धो
बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सिद्धांतवेदेयः
सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥ सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रम-
विष्णुर्मवोद्भवः । प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो आजिष्णुर्धाश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥
विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । परमात्मा परंज्योतिस्त्रिज-
गत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः । पूतात्मा परमज्यो-

तिर्धर्माप्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विर्रजा-
 शुचिः । तीर्थकृत्केवलीशानः पूनार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अन-
 न्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निराबाधो
 निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिनिरामयः ।
 अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥ अग्रणीर्ग्रामिणी-
 नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् । शास्ता धर्मपातिर्धर्म्यो धर्मात्मा
 धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः । वृषो
 वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनाभिमृतात्मा भूतभृ-
 द्भूतभावनः । प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥ ७ ॥
 हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः । स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा
 भूतनाथो जगत्प्रभुः । सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
 सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ८ ॥ सुगतिः सुश्रुतः
 सुश्रुक् सुवाक् सूरिवहुश्रुतः । विश्रुतो विश्वतःपादो विश्वशीर्षः
 शुचिश्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
 भूतभव्यमवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः । स्पेष्ठो गरिष्ठो
 बहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेष्ट
 विश्वसुग्विश्वनायकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्धिजितान्तकः
 ॥ २ ॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो नरन् । विरागो
 विरतोसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥ ३ ॥ विनेयजनतावन्धुर्विलाना-
 शेषकल्मषः । वियोगो योगविद्धिद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥ ४ ॥
 क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक्सलिलात्मकः । वायुमूर्तिसङ्गात्मा

बहिमूर्तिरधर्मधृक् ॥ ५ ॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः ।
 ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिमूर्तात्मा
 निर्लेपो निर्भलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः
 ॥ ७ ॥ मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तकः । स्वतन्त्रस्तन्त्र-
 कृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥ ८ ॥ कृती कृतार्थः
 सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः । नित्यो मृत्युञ्जयो मृदुरमृतात्मा मृतो-
 ऽद्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्ममम्भवः । महाब्रह्म-
 पतिर्ब्रह्मेद् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ १० ॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्म-
 दमप्रभुः । प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥ ११ ॥

इति स्थविष्ठदिशतम् ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजो शोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः । पद्मेशः पद्मस-
 म्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ १ ॥ पद्मयोनिर्जगद्धो निरित्यः स्तुत्यः
 स्तुतीश्वरः । स्तवनाहो हृषीकेशो जितजेयः । कृतक्रियः ॥ २ ॥
 गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गगाग्रणीः । गुणाकरो गुणाम्भो-
 धिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥ ३ ॥ गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगी-
 र्गुणः । शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥ ४ ॥ अगण्यः
 पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः । धर्मागमो गुणग्रामः पुण्यापुण्य-
 निरोधकः ॥ ५ ॥ पापापेतो विपापात्मा विपाप्मां वीतकरुमषः ।
 निर्द्वन्द्वो निर्भदः शान्तो निर्भेदा निरुपद्रवः ॥ ६ ॥ निर्निमेषो
 निराहारो निःक्रियो निरुपप्लवः । निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धृताङ्गो
 निरास्त्रवः ॥ ७ ॥ विशालो विपुलज्योतिरतुल्योचिन्त्यवैभवः ।
 सुसंवृत्तः सुगुप्तात्मा सुभृत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो
 मुनिः परिदृढः पतिः । धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विद्वान्तकः

द्विक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवविमनःपर्ययोः ॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्नि-
बन्धोऽद्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ ॥ रूपिण्णवधेः ॥ २७ ॥ तदनन्तमागे-
मनःपर्ययस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकाद्वीनि-
भाज्यानि युगपदेकास्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च
॥ ३१ ॥ सदसत्तोरविशेषाद्यच्छोपलब्धवेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगमसं-
ग्रहव्यवहारजुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ॥ ३३ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमादयिकः
पारिणमिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥ २
सम्यक्तचारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञानदर्शनदानलाभमौ गोपभोगवीर्याणि च ॥ ४ ॥
ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रिपञ्चभेदाः सम्यक्तचारित्रसंयमासंय-
माश्च ॥ ५ ॥ गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाऽज्ञानाऽसंयताऽसिद्धे-
श्याश्चतुश्चतुर्भ्यैकैकैकैकषड्भेदाः ॥ ६ ॥ जीवमव्याऽमव्यत्वानि च
॥ ७ ॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥ संसा-
रिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥ समनस्काऽमनस्काः ॥ ११ ॥ संसारिण-
स्त्रसंस्थावराः ॥ १२ ॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥
द्दीन्द्रियादयस्त्रिसाः ॥ १४ ॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५ ॥ द्विवि-
धानि ॥ १६ ॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगौ
भावोन्द्रियम् ॥ १८ ॥ स्पर्शनरसनग्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ १९ ॥
स्पर्शनरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥
वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥ २२ ॥ कृमिपिपीलिकाअमरमनुष्यादीनामे-
कैकवृद्धानि ॥ २३ ॥ संशिनः समनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ
कर्मयोगः ॥ २५ ॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥ अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥

विग्रहं वती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः । १८ । एकसमयाऽवि-
 ग्रहाः ॥ १९ ॥ एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥ २० ॥ सम्मूर्च्छनगर्भोप-
 पादाज्जन्म ॥ २१ ॥ सचित्तशीतसंवृतांसेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः
 ॥ २२ ॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥ २३ ॥ देवनारकाणामुपपादः
 ॥ २४ ॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ॥ २५ ॥ औदारिकवैक्रियकाहारक-
 तैजसकर्मणानि शरीराणि ॥ २६ ॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥ २७ ॥
 प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥ २८ ॥ अनन्तगुणे परे ॥ २९ ॥
 अप्रतीघाते ४ ॥ अनादिसम्बन्धे च ॥ ३० ॥ सर्वस्य ॥ ३१ ॥
 तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३२ ॥ निरुपमो-
 गमन्त्यम् ॥ ३३ ॥ गर्भं सम्मूर्च्छनमाद्यम् ॥ ३४ ॥ औपपादिकं
 वैक्रियिकम् ॥ ३५ ॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ३६ ॥ तैजसमपि ॥ ३७ ॥
 शुभं विशुद्धमव्याधाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ३८ ॥ नारकस-
 म्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥ ३९ ॥ न देवाः ॥ ४० ॥ शेषाभिवेदाः ॥ ४१ ॥
 औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ४२ ॥
 इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

रत्नशर्कराबालुकापङ्कधूमत्तमोमहात्मःप्रभासूंमयो घनाम्बु-
 चाताकाशप्रतिष्ठाः सप्तांश्वोऽवः ॥ १ ॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्च-
 दशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥ २ ॥
 नारकानित्याऽशुमत्तरलेख्यांपरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥
 परस्परोदीरितदुःखाः ॥ ४ ॥ संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक्
 चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्विंशतित्रयस्त्रिंशत्सप्त-
 गरोपमासत्त्वानां परां स्थितिः ॥ ६ ॥ जम्बूद्वीपलवणोदद्वयः
 शुभनामानो द्वोपसमुद्राः ॥ ७ ॥ द्विद्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो

वलयकृतयः ॥ ८ ॥ मन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्र-
विष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥ ९ ॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यव-
तैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायताः हिमवन्म-
हाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरवर्षताः ॥ ११ ॥ हेमार्जु-
नतपनीयवैद्युररजतहैममयाः ॥ १२ ॥ मणिविचित्रपाश्वो उपरि मूले
च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मतिगिच्छकेसरिमहापुण्डरीक
पुण्डरीका हृदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदद्द-
विष्कम्भो हृदः ॥ १५ ॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं
पुष्करम् ॥ १७ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणा हृदाः पुष्कराणि च ॥ १८ ॥
तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमास्थितयः
ससामानिकपरिषत्काः ॥ १९ ॥ गंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरि
कान्तासीतासीतोदानारीनरकांतासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदासरित-
स्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः
॥ २२ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृत्ता गंगासिन्धवादयो नद्यः ॥ २३ ॥
भरतः षड्विंशतिपंचयोजनशताविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा
योजनस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणाविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहांता ॥ २५ ॥
उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिद्वासौ षट्समयाभ्यामु-
त्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा मूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥
एकाद्वित्रिपल्योपमास्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुलवकाः ॥ २९ ॥
तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३१ ॥ भरतस्य विष्कम्भो
जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥ द्विर्द्वितीयाखण्डे ॥ ३३ ॥
पुष्करार्द्धं च ॥ ३४ ॥ प्राज्यानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आयम्नि-
च्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तरकु-

रुम्यः ॥ ३० ॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तमुद्धर्ते ॥ ३८ ॥
तिर्यग्भोजिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥
दशाष्टपंचद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥ ४ ॥ इन्द्रसामानिक-
त्रायस्त्रिंशपरिपदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिंस्विधिका-
श्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्याव्यन्तरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥
पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः
स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥ ८ ॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥ भवन-
वासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवास्तनितीदधिद्वीपादिद्रकुमाराः ॥ १० ॥
व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥ ११ ॥
ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२ ॥
मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालविभागः
॥ १४ ॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥ कल्पो-
पपन्नाः कल्पातीताश्च ॥ १७ ॥ उपर्युपरि ॥ १८ ॥ सौषर्मेयानसा
नत्कुमारमोहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्रमहाशुक्रशतारसदृश-
रेष्णानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुर्गवेयकेषु विजयवैजयन्तव्यन्ता-
पराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्या-
विशुद्धीन्द्रियादविबिषयनोऽधिकाः ॥ २० ॥ गतिश्चरीरपरिग्रहाऽभि-
मानतोहीनाः ॥ २१ ॥ पीतपद्मशुक्ललेद्याद्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥
प्राग्भैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥ २३ ॥ ब्रह्मलोकालयालौकान्तिकाः ॥ २४ ॥
सारस्वतादित्यवह्न्यरुपागर्दतीयतुषिताव्यावाधारिष्ठाश्च ॥ २५ ॥

विजयादिषु द्विचरमाः ॥ १६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्ति-
 र्योग्योनयः ॥ १७ ॥ स्थितिरसुरनागसुपर्णादीपशेषाणां सांगरोपम-
 त्रिपल्योपमांर्द्धहीनमितः ॥ १८ ॥ सौवर्मेष्टानयोः सांगरोपमे अधिकं
 ॥ १९ ॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ २० ॥ त्रिसप्तनवैकादश-
 त्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानि तु ॥ २१ ॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन
 नवसु ग्रैवेयवेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ २२ ॥ अपरा
 पल्योपममधिकम् ॥ २३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥ २४ ॥
 नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ २५ ॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम्
 ॥ २६ ॥ भवन्तेषु च ॥ २७ ॥ व्यन्तराणां च ॥ २८ ॥ परा
 पल्योपममधिकम् ॥ २९ ॥ ज्योतिष्काणां च ॥ ३० ॥ तदष्टभा-
 गोऽपरा ॥ ३१ ॥ लौकान्तिकानामष्टौ सांगरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ३२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अजीवकाया धर्माधर्मकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥
 जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रूपिणः पुद्गलाः
 ॥ ५ ॥ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निस्कियाणि च ॥ ७ ॥
 असंख्येयाः प्रदेशाः धर्मधर्मैकजीवानाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्थानन्ताः
 ॥ ९ ॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥
 लोकाकाशोऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः वृत्तने ॥ १३ ॥ एकप्रदे-
 शादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असंख्येयभागादिषु जीवानाम्
 ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहारविसर्गिभ्यां प्रक्षीपदत् ॥ १६ ॥ गतिस्थित्यु-
 पग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥
 शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुखदुःखजीवितमर-
 णोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परोपग्रहौ जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्तनापरिणा-

उमड़ रहे वाहर । बनमोर पपीहा कोयल बोलें दादुर ॥ भति मच्छर
 भिन ९ करैं, सर्व फुंहरैं, फुंहरैं थलचर । बहु सिंह स्याल गन
 घूमैं बनके अंदर ॥ मुनिराज ध्यानगुन पूरे, तब काटें कर्म अंकूरे ।
 तन लिपटत कानखजूरे, मधुमच्छि ततहयें गूरे ॥ चिथियोने बिल
 तनारे, आपमुनि खरे हाथ लटकाके । जिन अथिर लखा संसार
 बसे बन जाके ॥६॥ आश्विनमें वर्षा गई, समय नई रही दशहरा
 आया । नहीं रही वृष्टि अरु कामदेव लहराया ॥ कामी नर करैं
 किलोल बनावैं ढोल, करैं मन भाया । हैं धन्य साधु जिन आतम-
 ध्यान लगाया । वसुधायाम योगमें भीने, पुनि अष्टकर्म छय कीने ।
 उपदेश सबनको दीने, भविजनको नित्य नवीने ॥ हैं धन्य धन्य
 मुनिराज, ज्ञानके ताज, नमूं शिरनाके । जिन अथिर लखा संसार
 बसे बन जाके ॥७॥ कातिकमें आया शीत भई विपरीति अधिक
 शरदाई । संसारी खेलें जुवा कर्म दुखदाई ॥ जग नर नारीका
 मेल, मिथुन सुख केल करैं मन भाई । शीतल ऋतु कामी जनको
 है सुखदाई ॥ जब कामी काम कमावैं । मुनिराज ध्यान शुभ
 ध्यावैं । सरवर तट ध्यान लगावैं, सो मोक्ष भवन सुख पावैं ॥
 मुनि महिमा अपरम्पार, न पावै पार, कोई नर गाके । जिन
 अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ८ ॥ अगहनमें ठपके शीत
 यही जगरीति सेज मन भावै । अति शीतल चले समीर देह
 थरवै ॥ श्रृंगार करे कामिनी रूपरस ठनी साम्हने आवै । उस
 समय कुमति बस सबका मन ललचावै ॥ योगीश्वर ध्यान घरे
 हैं, सरिताके निकट खरे हैं । जहां ओले अधिक परैं हैं, मुनि
 कर्मका नाश करैं हैं ॥ जब पड़े बर्फ बनघोर, करैं नहीं शोर नयी

दृढ़ताके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ९ ॥ यह पौष महीना भला, शीतमें घुला कांपती काया । वे धन्य गुरु जिन इसऋतु ध्यान लगाया ॥ घर बारी घरमें छिपें बस्त्रतन लिएं रहैं जड़ियाया । तजि वस्त्र दिगम्बर हो मुनि कर्म खिपाया ॥ जलके तट जग सुखदाई, महिमा सागर मुनिगई । घरधीर खड़े हैं भाई, निज आत्मसे लबकाई ॥ १० ॥ यह संसार असार वे तारणहार सकल बधुधाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ १० ॥ ऋतु आई माघ वसंत नारि अरु कंत युगल सुख पाते । वे पहिने वस्त्र बसन्त फिरें मदमाते ॥ जब चढ़ै मैनकी सैन पड़े नहीं चैन कुमति उपजाते । हैं बड़े धीर जन बहुधा वे डिंग जाते ॥ तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी, जिन काया लखी पयानी । भवि डूबत बोधे प्रानो, जिन ये वसंत जियजानी ॥ चेतनसे खेलें होरी ज्ञानरंगधोरी, जोग जल लाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ११ ॥ जब लगा महीना फाग, करें अतुराग सभी नरनारी । ले फिरें कुमकुम फेंट हाथ बिचकारी ॥ जब श्री मुनिवर गुणखान, अचल धरध्यान करें तप भारी । कर शीलसुधारस कर्मन ऊपर डारी ॥ कीरति कुमकुमे बनावैं, कर्मोषे फांग रचावैं । जो बारहमासा गावैं, सो अजर अमर पद पावैं ॥ यह भाखैं नीयालाल, धरम गुणमाल, योग दरशाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ १२ ॥

सिद्धाः सुप्रभातं दिने दिने ॥ ११ ॥ सुप्रभतं तवैकस्य वृषभस्य
महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥ ११ ॥ सुप्र-
भातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् । अज्ञानतिमिरान्धानां
नित्यमस्तमितो रविः ॥ १४ ॥ सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य वीरः कमलकोचनः
येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥ १५ ॥ सुप्रभातं सुन-
क्षत्रं सुस्वपाणं सुमंगलम् । त्रैलोक्यहितकर्तृणां जिनानामेव
शासनम् ॥ २६ ॥ इति सुप्रभातस्तोत्रं समाप्तम् ॥

(८) दृष्टाष्टकस्तोत्रम् ।

दृष्टं जिनेन्द्रमवनं भवतापहारि भव्यात्मनां विभवसम्भवभूरि
हेतुः । दुग्धाब्धिफेनघवलोज्ज्वलकूटकोटीनद्धध्वजप्रकरानिविराज-
मानम् ॥ १ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रमवनं भुवनैकलक्ष्मीधामर्द्धिवर्द्धितमहामु-
निसेव्यमानम् । विद्याधरामरवधूजनमुक्तदिव्यपुष्पांजलिप्रहरशोभि-
तभूमिभागम् ॥ २ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रमवनं भवनादिवासविरूपातनाकग-
णिकागणगीयमानम् । नानामणिप्रचयभासुरग्निपञ्चालव्यालीढनिर्मल
विशालगवाक्षनालम् ॥ ३ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रमवनं सुरसिद्धयक्षगन्धर्व
किन्नरकरार्पितवेणुवीणा । सङ्गीतमिश्रितनमस्कृतधोरनादैरापूरिताम्बर-
तलोरुदिगन्तरालम् ॥ ४ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रमवनं विकसद्विकोलमालाकु-
लालिललितालकविभ्रमाणम् ॥ माधुर्यवाद्यलयनृत्यविरासिनीनां
लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यम् ॥ ५ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रमवनं मणिरत्नहेम-
सरोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणैः । सन्मङ्गलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्वि-
भ्रजितं विमलमोक्तिकदामशोभम् ॥ ६ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रमवनं वरदेव-

मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अथाहं सुकृती भूतो
निर्धूतशेषकल्मषः भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥१०॥
अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः । तस्य सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र
तव दर्शनात् ॥ ११ ॥

इति अद्याष्टकं स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

(१०) सूतक निर्णय ।

सूतकमें देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादि तथा मंदिरजीके
वस्त्रामृषणादिके स्पर्शनकी मना है तथा पात्रदान भी वर्जित है ।
सूतक पूर्ण होनेके बाद प्रथम दिन पूजन प्रक्षाल तथा पात्रदान
करके पवित्र होवे । सूतकका विवरण इस प्रकार है । १ जन्मका
सूतक दश दिनका, तथा २. स्त्रीका गर्भ जितने माहका पतन
हुवा हो, उतने दिनका सूतक मानना चाहिये । विशेष यह है कि
यदि तीन माहसे कमका हो तो तीन दिनका सूतक मानना चाहिये ।
३. प्रसूती स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है, उसके परिवार-
वालोंको नहीं, इसके पश्चात् वह स्नान दर्शन करके पवित्र होवे ।
कहीं २ चालीस दिनका भी माना जाता है । ४. प्रसूतिस्थान एक
माह तक अशुद्ध है समस्त घर नहीं । ५. रजस्वला स्त्री पांचवें दिन
शुद्ध होती है । ६. व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता
है, कभी भी शुद्ध नहीं होती ॥ ७. मृत्युका सूतक १२ दिनका
माना जाता है । तीन पीढ़ी तक १२ दिन, चौथी पीढ़ी ६
दिन, छठी पीढ़ीमें ४ दिन, सातवीं पीढ़ीमें ३ दिन, आठवीं
पीढ़ीमें एक दिन रात, नववीं पीढ़ीमें दो पहर, और दशवीं

पीड़ीमें स्नान मात्रसे शुद्धता कही है । ८. जन्म तथा मृत्युका सूतक कुटुम्बी मनुष्योंको जो न्यारे रहते हैं ५ दिनोंका होता है । १०. आठ वर्ष तकके बालककी मृत्युका १ दिनका और तीन दिनके बालकका सूतक १ दिनका जानो । ११. अपने कुलका कोई गृह त्यागी हो, उसका सन्यासमरण अथवा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय, तो १ दिनका सूतक होता है । यदि अपने कुलका देशांतरमें मरण करे और १२ दिन पूरे होनेके पहले मादम हो तो शेष दिनोंका सूतक मानना चाहिये । यदि दिन पूरे हो गये हों, तो स्नान मात्र सूतक जानो । १२. घेड़ों, भैंस, गौ आदि पशु तथा दासी अपने गृहमें जने अथवा आंगनमें जने तो १ दिनका सूतक होता है । गृह बाहर जने तो सूतक नहीं होता । १३. दासी दास तथा पुत्रीके अपने घरमें प्रसूति होय या मरे, तो १ दिनका सूतक होता है । यदि गृह बाहर हो तो सूतक नहीं । यहाँपर मृत्युकी मुख्यतासे १ दिनका कहा है । प्रसूताका १ ही दिनका जानो । १४. अपनेको अग्निमें जलाकर (सती हो कर) मरे तिसका छह माहका तथा और १ इत्याओंका यथायोग्य पाप जानना । १५. जने पीछे भैंसका दूध १५ दिन तक, गायका दूध १० दिन तक और बकरीका दूध आठ दिन तक अशुद्ध है । पश्चात् खानेयोग्य है । प्रगट रहे कि कहीं देशभेदसे सूतकविधानमें भी भेद होता है इसलिये देशपद्धति तथा शास्त्रपद्धतिका मिलानकर पालन करना चाहिये । (श्रावकधर्मसंग्रहसे उद्धृत)।

{ ११ } विनती संग्रह ।

गुरुविनती ।

वन्दौ दिगम्बरगुरुचरन, जग तरन तारन जान । भे भरम भारी
 रोगको, हैं राजवैद्य महान ॥ जिनके अनुग्रह विन कभी, नहिं
 कटें कर्म जंजीर । ते साधु मेरे उर वसौ, मेरी हरौ पातक पीर
 ॥ १ ॥ यह तन अपावन अशुचि है, संसार सकल असार । ये
 भोग विषपक्वानसे इस भांति सोच विचार ॥ तप विरचि
 श्रीमुनि वन वसे, सब त्याग, परिग्रहभीर । ते साधु मेरे उर
 वसौ मेरी हरौ पातक पीर ॥ १ ॥ जे काच कंचन सम गिनै,
 अरि मित्र एकविरूप निंदा बढाई सारिखी, वनखंड शङ्ख
 अनूय । सुख दुःख जीवन मरनमें, नहिं खुशी नहिं दिलगीर
 ते साधु मेरे उर वसौ, मेरी हरौ पातक पीर ॥ २ ॥ जे बरु
 परवत वन वसै, गिरि गुहा महल मनोग । सिल सेन समता
 सहचरी, शशिकिरण दीपकजाग ॥ मृग मित्र भोजन तप मई,
 विज्ञान निरमल नीर । ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ पातक
 पीर ॥ ३ ॥ सूख सरावर जल भरे, सूखें तरंगनि तोय । बांट बटोही
 ना चलै, जहं घाम गरमी होय । तिस काल मुनिवर तप तपै,
 गिरिशिखर छाड़े धीर । ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ पातक
 पीर ॥ ४ ॥ घनघोर गरजें घनघटा, जल पै पावसकाल । चहुंआर
 चमकै बीजुरी, अति चलै शीतल व्याक (र) । तरुहेट तिष्ठें तब
 जती, एकांत अचल शरार । ते साधु मेरे मन वसौ, मेरी हरौ
 पातक पीर ॥ ५ ॥ जब शतमस तुारतौ, दाहै सकल वनराय ।

जब जमै पानी पे खरां थरहरै सबकी काय । तब नगन निवसैं
 चौहटै अथवा नदीके तीर । ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरौं
 पातक पीर ॥७॥ कर जोर भूधर' वीनवै कव मिलैं वे मुनिरान ।
 यह आस मनकी कव फलैं, अरु सरैं सगरे काज । ससार विषम
 विदेशमें जे विनाकारण वार । ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरौं
 पातक पीर ॥ ८ ॥

(२)

त्रिभुवनगुरु स्वामी जी, कर्त्तानिधि नामी जी । सुनि अंत-
 रजामी मेरी वीनती जी ॥ १ ॥ मैं दास तुम्हारा जी, दुखिया
 अति भाराजी । दुख भेटनहारा, नुम जादौपती जी ॥ २ ॥ अम्यो
 संसारा जी, चिरविपति-मण्डारा जी । कहिं सारा न सार चहुंगति
 डोलिया जी ॥ ३ ॥ दुख मेरु समाना जी, सुख सरसा दाना जी,
 अब जान धर ज्ञान, तराजू तोलिया जी ॥ ४ ॥ आवर तन पाया
 जी, ब्रसनाम धराया जी ॥ कृनि कुन्धु कहाया, मरि भंजरा भया
 जी ॥ ५ ॥ पशुकाया सारी जी, नाना विधि धारी जी । जलचारी
 अलचारी, उड़न पखेरुवा जी ॥ ६ ॥ नरकनकेमाही जी, दुखघोर
 जहां है जी । पुनि और जहां है, सरिता स्तारकी जी ॥ ७ ॥ जहां
 असुर संघारैं जी, निज बैर विचारैं जी । मिठ बांघैं अरु मारैं,
 निर्दयी नारकी जी ॥ ८ ॥ मानुष अवतारै जी, रछो गर्भमंझारै जी
 रूढ़ि-रोयौ जहां जनमत, वारैं मैं धनों जी ॥ ९ ॥ मोवन तन रोगी
 जी, भयो विरहवियोगी जी । फिर भोगी बहु वृद्धापनकी वेदना
 जी ॥ १० ॥ सुरपदवी पाईजी, रन्भा उर लाई जी । तहां देखि
 पराई, संपति झूरियौ जी ॥ ११ ॥ माला सुरज्ञानी जी, जब आरति

ठानी जी । थिति पूरन जानी, मरन विसूरियौ जी ॥ ११ ॥ यौ
दुख भवकेरा जी, भुगतो बहुतेरा जी । प्रभु ! मेरा कुछ कहत, पार
न पाह्ये जी ॥ १२ ॥ मिथ्यामदमाताजी, चाही नित साता जी ।
सुखदाता जगत्राता, तुम जानै नहीं जी ॥ १३ ॥ प्रभु भागनि
पायें जी, गुन श्रवण सुहाये जी, तट आयौ सेवककी विपदा हरौ
जी ॥ १५ ॥ भववास वसेरा जी, कब होय निवेराजी । सुख पावै
जन तेरा, स्वामी । सो करौ जी ॥ १६ ॥ तुम शरनसहाईजी, तुम
सज्जन भाई जी । तुम भाई तुम बाप, दया मुझ लीजिये जी
॥ १७ ॥ 'भूषण' कर जोरै जी, ठाढ़ो प्रभु ओरै जी । निनदास
निहारौ, निरमय कीजिये जी ॥ १८ ॥

(१)

ढाल-परमादी ।

अहो ! जगत गुरु देव, सुनिये अरज हमारी । तुम हो
दीनदयाल, मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भव वनमें वादि, काक
अनादि गमायौ । भ्रमत चहंगतिमाहिं, सुख नहिं दुख बहु पायौ
॥ २ ॥ कर्म महांरिपु जोर, एक न कान करै जी । मनमाने दुख
देहिं, काहूसौं न डरै जी ॥ ३ ॥ कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक
दिखावैं । सुर नर पशुगतिमाहिं, बहुविधि नाच नचावैं ॥ ४ ॥ प्रभु !
इनके परसंग, भव भवमाहिं बुरोजी । जे दुख देखे देव !, तुमसौं
नाहिं दुरे जी । एक जन्मकी बात, कहि न सकौं सुनिं स्वामी ।
तुम अनन्त गर्जाय, जानत अंतरजामी ॥ ५ ॥ मैं तो एक अनाथ,
ये मिलि दुष्ट धनेरे । किथौ बहुत बेहाल, सुनियौ साहिब मेरे
॥ ६ ॥ ज्ञान महानिधि छंदि, रंक निकल करि डारयो । इनही तुम

मुसमांहि, हे जिन ! अंतर पारयो ॥८॥ पाप पुन्यकी दोय, पायँति
 प्रेरी डारी । तनकाराग्रहमाहि, मोहि दियो दुख मारी ॥ ९ ॥
 इनको नेक विगार, मैं कछु नाहिं कियो जी । विनकारन जगबंध !,
 दहुविधि वैर लियो बी ॥ १० ॥ अब आयौ तुम पास, मुन कर
 मुजस तिहारो । नीति निपुन जगराय ! काने न्याव हमारो
 ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकास, साधुनको रक्षि लीजै । विनवै
 'भूषरदास,' हे प्रभु दील न काने ॥ १२ ॥

(४)

दोहा (राग-भरधरी) ।

ते गुरु मेरे उरु बसौ, जे भव-जलधि-जिहान । आप तिरैं
 पर तारही, ऐमे श्री ऋषिराज ॥ ते गुरु० ॥ १ ॥ रोगउरग-बिल
 वपु गिण्यौ, भोग भुजंग समान । कदलीतरु संसार हें, त्यागौ
 सब यह जान ॥ ते गुरु० ॥ २ ॥ रतनत्रय निधि उर धरैं, अरु
 निरग्रंथ त्रिकाल । मारयो काम स्ववीसको, स्वाप्नी परम दयाल
 ॥ ते गुरु० ॥ ३ ॥ पंच महात्रन आदर्श, पांजौ मुमति-समेत ।
 तीन गुपति पालैं सदा, अजरअमर पदहेत ॥ ते गु० ॥ ४ ॥ धर्म
 धरैं दशलक्षगी, भावै भावना सार । सहै परसिह बीस ह, चारित-
 रतन भंडार ॥ ते गु० ॥ ५ ॥ जेठ तप रवि आकरौ, सूखै सरवर
 नो । शैल-शिखर मुनि तप तपै, दाक्षै नगन शरीर ॥ ते गु०
 ॥ ६ ॥ पावन रैन डरावनी, बरसै जलधर धार । तरुतल निवसैं
 साहसी, दाखै क्षणावार ॥ ते गु० ॥ ७ ॥ शीत पड़े कपि-मद
 गलै, दाहै सय बनराय । ताल तरंगानिके तटै, ठाढ़ै ध्यान लगाय
 ॥ ते गु० ॥ ८ ॥ इहि विधि दुद्धर तप तपै, तीनों कालमँझार ।

लागे सहज सरूपमें, तनसौं ममत निवार ॥ ते गु० ॥ १० ॥ पूरव
भोग न चितवै, आगम वांछा नाहिं । चहुंगतिके दुखसौं डरै,
सुरत लगी शिवमाहिं ॥ ते गु० ॥ ११ ॥ रंगमहलमें पौड़ते,
कोमल सेज बिछाय । ते पच्छिम निशि भूमिमें, सोवैं संवरि काय
॥ ते गु० ॥ १२ ॥ गज चढ़ि चलते गरवसौं, सेना सभि चतुरंग ।
निरंखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अंग ॥ ते गु० ॥ १३ ॥
वे गुरु चरण जहां धरैं, जगमें तीरथ जेह । सो रन मम मस्तक
चढ़ो, 'भूधर' मांगे तेह ॥ ते गु० ॥ १४ ॥

(२)

प्रभु पतिनपावन मैं अपावन, चरन आयौ शरनजी । यौ
विरद आप निहार स्वामी, मैट जामन मरनजी ॥ तुम ना पिछा-
न्या आन मान्या, देव विविध प्रकारजी । या बुद्धिसेती निज न
जाणया, अम गिण्या हितकारजी ॥ १ ॥ भवविकटवनमें करम
वैरी, ज्ञानधन मेरो हरयो । तब इष्ट भूल्यो अष्ट होय, अनिष्टगति
घरतौ फिरयो ॥ धन घड़ी यौ धन दिवस यौ ही, धन जनम
मेरो भयो । अब भाग मेरो उदय आयौ दरश प्रभुको लख
ल्यो ॥ २ ॥ छवि बीतरागी नगनमुद्रा दृष्टि नासापै धरै ।
बसु प्रातिहार्य अनन्तगुणयुत, कोटिरबिछविकौं हरैं ॥ मिट गयौ
तिमिर मिथ्यात मेरौ, उदय रवि आतम भयौ । मो उर हरख
ऐसो भयौ, मनु रंक चिंतामणि ल्यो ॥ ३ ॥ मैं हाथ जोड़ नवाय
मस्तक, वीनऊं तव चरणजी । सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति निन, सुनो
तारन तरनजी ॥ जांचूं नहीं सुरवास पुनि नरराज परिजन साथजी ।
'बुध' जांचहूं तुव भक्ति भव भव दीजिये शिवनाथजी ॥ ४ ॥

(६)

श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुखहरन तुम्हारा वांना है ।
 मत मेरी बार अबार करौ, मोहि देहु विमल कल्याणा है ॥टेका॥
 ॥१॥ त्रैकालिक वस्तु प्रतच्छ लखो, तुमसों कहु बात न छाना
 है । मेरे उर आरत जो वर्ते, निहचै सब तुम जाना है ॥ अव-
 लोकि विथा मत मोन गर्हा, नहीं मेरा कहीं ठिकाणा है । हो
 राजिवलोचन, सोचविमोचन, मैं तुमसों हित ठाना है ॥ श्री०
 ॥२॥ सब ग्रन्थनिर्मे निर्भयनने, निरघार वही गणधार कही ।
 जिननायक बी सब लायक हैं, सुखदायक छायकज्ञानमही ॥ यह
 बात हमारे कान परी, तब आन तुम्हारी सरन गही । क्यों
 मेरी बार विलंब करौ, जिन नाथ कहो यह बात सही ॥ श्री०
 ॥ ३ ॥ काहूको भोग मनोग करो, काहूको स्वर्ग विमाना है ।
 काहूको नाग नरेशपती, काहूको ऋद्धिनिधाना है । अव मोपर
 क्यों न कृपा करते, यह क्या अंधेर जमाना है । इन्साफ करो
 मत देर करो, सुखवृंद भरो भगवाना है श्री० ॥४॥ खल कर्म
 सुझे हैरान किया, तब तुमसों आन पुकारा है । तुम हो,
 समरत्थ, न न्याव करो, तब बंदेका क्या चारा है ॥ खलघालक
 पालक बालकका, नृप नीति यही जग सारा है । तुम नीतिनिपुण
 त्रैलोक्यपती, तुम ही लग दौर हमारा है । श्री० । ५ ॥ जबसे
 तुमसे पहिचान भई, तबसे तुमहीको माना है । तुमरे ही शास-
 नका स्वामी !, हमको शरना सरधाना है ॥ जिनको तुमरी
 शरनागत-है, तिनसों जमराज डरना है । यह सुनस तुम्हारे
 साचेका, जस गावत वेद पुराना है ॥ श्री० ॥६॥ जिसने तुमसे

दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुःख हाना है । अब छोटा मोटा नाश तुरत, सुख दिया तिन्हें मनमाना है । पावकसों शीतल नीर किया, औ चीर बढ़ा असमाना है । भोजन था जिसके पास नहीं सो किया, कुवेर समाना है ॥ श्री० ॥ ७ ॥ चिंतामणि पारस कल्पतरू सुखदायक ये परवाना है । तुव दासनके सब दास यही, हमरे मनमें ठहराना है ॥ तुव भक्तनको सुरइंद्रपदी, फिर चक्रपतीपद पाना है । क्या बात कहों विस्तार बढ़ो; वे पाव मुक्ति ठिकाना है ॥ श्री ॥ ८ ॥ गति चार चौरासी लाखविषैं चिन्मूरति मेरा भटका है । हो दीन बंधु करुणानिधान, अबलैं न मिटा वह खटका है ॥ जब जोग मिला शिवसाधनका, तब विघन कर्मने हटका है ॥ तुम विघन हमारा दूर करो, प्रभु मोकों आश तुमारा है ॥ श्री० ॥ ९ ॥ गज ग्राहग्रसित उच्चार लिया, ज्यों भंजन तस्कर तारा है । ज्यों सागर गोपदरूप किया भैनाका संकट टारा है ॥ ज्यों सुलीतैं सिंहासन औ वेड़ीको काट बिड़ारा हैं । त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकों आश तुमारा है ॥ श्री० ॥ १० ॥ ज्यों फाटत टेकत पांश खुला, औ सांप सुमन करि डारा है । ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया, बालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ विपत चक्रचूरि पूर, घर लछभी सुख विस्तारा है । त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु, मोकों आश तुमारा है ॥ ११ ॥ नदपि तुमको रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है । चिनमूरत आप अनंत गुनी, नित शुद्ध दंशा शिवथाना है । तदपि भक्तनकी भीति हरो, सुख देत तिन्हें जू सुहाना है । यह शक्ति अचित

तुम्हारीका, क्या पावे पार सयाना है । श्री० ॥१२॥ दुखखण्डन
 श्रीमुखमण्डनका, तुमरा प्रन परम प्रमाना है । वरदान दया
 जसकीरतिका तिहुंलोक धुजा फहराना है ॥ कमलाधरनी । कम-
 लाकरनी ! करिये कमला अमलाना है । अब मेरी विथा अवि-
 लोक रमाशति, रंच न बार लगाना है ॥ श्री० ॥ १३ ॥ हो दीना-
 नाथ अनाथदितू, जिन दीन अनाथ पुकारी है । उदयागत कर्म
 विपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है । ज्यों आप और भवि
 जीवनकी तत्काल विथा निरवारी है । त्यों " वृन्दावन " यह अर्म
 करे, प्रभु आज हमारी वारी है ॥ श्री० ॥ १४ ॥

(७)

शौर ।

हो दीनबंधु श्रीपति करुणानिधानजी । यह मेरी विथा क्यों
 न हरो बार क्या लगी ॥ टेक ॥ मालिक हो दो जहानके जिन-
 राज आपही । ऐवो हुनर हमारा तुमसे छिपा नहीं ॥ बेजानमें
 गुनाह मुझसे बन गया सही । ककरीके चोरको कटार मारिये
 नहीं ॥ हो दीनबंधु० ॥ दुखदर्द दिलका आपसे जिसने कहा
 सही । मुझिकल कहर बहरसे लई है भुजा गही ॥ जस वेद औ
 पुरानमें प्रमान है यही । आनंदकन्द श्रीजिनंद देव है तुही ॥
 हो दीनबंधु० ॥ हाथीप चढ़ी जाती श्री सुलोचना सती । गंगमें
 ग्राहने गह्वी गङ्गानकी गती । उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हें
 सती । मय टारके उबार लिया है कृपापती ॥ हो दीनबंधु० ॥
 पावक प्रचंड कुन्डमें उमंड जब रहा । सीतासे शपथ लेनेको तब
 रामने कहा ॥ तुम ध्यानधार जानकी पग धारती तहां । तत्काल

ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा ॥ हो दी० ॥ जब चीर
 द्रोपदीका दुशासनने था गहा । सब ही सभाके लोग कहते थे
 अहा हहा । उस वक्त भीर पीरमें तुमने करी सहा । परदा ढका
 सतीका सुजस जक्तमें रहा ॥ हो दी० ॥ श्रीपालको सांगरविषै
 जब सेठ गिराया । उनकी रमासे रमनेको आया वो बेहया ॥ उस
 वक्तके संकटमें सती तुमको जो ध्याया । दुखदंद फद भेटके
 आनंद बढ़ाया ॥ हो दीनबंधु० ॥ हरिषेनकी माताको जहां सौत
 सताया । रथ जैनका तेरा चले पीछे यों बताया ॥ उस वक्तके
 अनसनमें सती तुमको जो ध्याया । चक्रेश हो सुत उसकेने रथ
 जैन चलाया ॥ हो० ॥ सम्यक्तशुद्ध शीलवती चंदना सती ।
 जिसके नभीच लंगती थी जाहिर रती रती ॥ बेड़ीमें परी थी
 तुम्हें जब ध्यावती हंती । तब वीर धीरने हरी दुखद्वंदकी गती ।
 जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजारा । तब सासने कलंक लगा
 घरसे निकारा ॥ वन वर्गके उपसर्गमें तब तुमको चितारा ।
 प्रभुभक्त व्यक्त जानिके भय देव निवारा ॥ हो० ॥ सोमासें
 कहा जो तू सती शील विशाला । तो कुंमर्ते निकाल मला नाग
 जु काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ जु डाला ॥ तत्काल
 ही वह नाग हुआ फूलकी माला ॥ हो ॥ १० ॥ जब राजरोग था
 हुआ श्रीपालराजको । मैना सती तब आपको पूजा इलामको ॥
 तत्काल ही सुंदर किया श्रीपालराजको । वह राजभोग भोग गया
 मुक्तराजको ॥ हो० ॥ ११ ॥ जब सेठ सुदर्शनको मृषा दोष
 लगाया । रानीके कहे भूपने सुलीपै चढ़ाया ॥ उस वक्त तुम्हें
 सेठने निज ध्यानमें ध्याया । सुलीसे उतार उको सिंहासनपै बिठाया

॥ हो० ॥ १२ ॥ जब सेठ सुषन्नाजीको बापीमें गिराया । ऊपरसे दुष्ट था उसे वह मारने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपनेमें ध्याया । तत्काल ही जंजालसे तब उसको बचाया । हो० ॥ १३ ॥ एक सेठके घरमें किया दारिद्र्यने डेरा । भोजनका ठिकाना भी न था सांझ सबेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने जब ध्यानमें घेरा । घर उसकेमें तब कर दिया लक्ष्मीका बसेरा ॥ हो० ॥ १४ ॥ बलि बादमें मुनिराजसों जब पार न पाया । तब रातको तलवार ले झट मारने आया । मुनिराजने निमध्यानमें मन लीन लगाया । उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहां देव बचाया ॥ हो० ॥ १५ ॥ जब रामने हनुमंतको गढ़ लंक पठाया । सीताकी खबर लेनेको सह सैन्य सिंघाया । मग बीच दो मुनिराजकी लख आगमें काया । झट बार मुसलघारसे उपसर्ग बुझाया ॥ हो० ॥ १६ ॥ जिननाथहीको माथ निवाता था उदारा । घेरेमें पड़ा था वह कुलिशकरण बिचारा । उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें उचारा । रघुवीरने सब पीर तहां तुरत निवारा ॥ हो० ॥ १७ ॥ रणपाल कुँवरके पड़ी थी पांवमें बेरी । उस वक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सधेरी ॥ तत्काल ही सुकुमारकी सब झड़ पड़ी बैरी । तुम रायकुंवरकी सभी दुख-दन्द निवेरी ॥ हो० ॥ १८ ॥ जब सेठके नन्दनको डसा नाग जु कारा । उस वक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा ॥ तत्काल ही उस बालका विष भूर उतारा । वह जाग उठा सोके मानों सेन सकारा ॥ हो० ॥ १९ ॥ मुनि मानसुङ्गको दर्द जब भूपने पीरा ॥ तालेमें किया बन्द भरी लोह जैजीरा ॥ मुनि ईशने आदीशकी स्तुति का है गंभीरा । चक्रेश्वरी तब आनके झट दूरकी पीरा ॥

हो० ॥ २० ॥ शिवकोटने हट था किया सामंतभद्रसों । शिव-
पिंडकी बन्दन करौ शंकौ अभद्रसों ॥ उस वक्त स्वयम्भू रचा
गुरु भाव भद्रसों । जिनचन्दकी प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्रसों ॥
हो० ॥ २१ ॥ सूवेने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया । मेंढक
ले चला फूल भरा भक्तिका माया ॥ तुम दोनोंको अभिराम
स्वर्गधाम बसाया । हम आपसे दातारको लख आज ही पाया ॥
हो० ॥ २२ ॥ कपि स्थान सिंह नकुल अना बैल विचारे ।
तिर्यच जिन्हें रंच न था बोध चितारे ॥ इत्यादिको सुरधाम दे
शिव धाममें धारे । हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे ॥
हो० ॥ २३ ॥ तुम ही अनन्त जन्तुका भय भीर निवारा ।
वेदों पुराणमें गुरू गणधरने उचारा ॥ हम आपकी शरणागतीमें
आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष करुणवृक्ष इच्छिताकारा ॥ हो०
॥ २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भक्त मुक्तके दानी । आनन्द-
कन्द वृन्दको हों मुक्तके दानी ॥ मोह दीन जान दीनबन्धु पातक-
मानी । संसार विषम खार तार अन्तरजामी ॥ हो० । २५ ॥
करुणानिधानवानको अब क्यों न निहारो । दानी अनन्तदानके
दाता हो सँभारो ॥ वृषचन्दनन्द वृन्दका उपसर्ग निवारो । संसार
विषम खारसे प्रभु पार उतारो । हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा-
निधानजी । अब मेरी व्यथा क्यों न हरौ बार क्या लगी ॥ ६ ॥

दोहा ।

जासु धर्म परभावसों, संकट कटत अनंत । मंगलमूरति देव-
सो, जवंता अरहन्त ॥ १ ॥ हे करुणानिधि सुजनको, कष्टविषैं लखि
लेत । तजि विलंब दुख नष्ट किय, अब विलंब किंहें हेत ॥ २ ॥

षट्पद ।

तब विलंब नहिं कियो, दियो नमिको रजताचल । तब विलंब नहिं कियो, मेघवाहन लंकाथल ॥ तब विलंब नहिं कियो शेट सुत दारिद भंजे । तब विलंब नहिं कियो, नाग जुज सुरपद रंजे ॥ इमि चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिवतिय रमन । प्रभु मोर दुःखनाशनविषै, अब विलंबकारन कवन ॥ १ ॥ तब विलंब नहिं कियो, सिया पावक जल कीन्हौ । तब विलंब नहिं कियो, चंदना शृंखल छीन्हौ । तब विलंब नहिं कियो, चीर द्रुपदीको बाढ़्यौ । तब विलंब नहिं कियो, सुलोचन गंगा काढ़्यौ । इमि चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिवतियरवन । प्रभु मोर दुःख नाशनविषै अब विलंब कारन कवन ॥ ४ ॥ तब विलंब नहिं कियो सांप किय कुसुम सु माला । तब विलंब नहिं कियो, उर्मिला सुरथ निकाला । तब विलंब नहिं कियो, शीलवल फाटक खुल्ले । तब विलंब नहिं कियो, अंजना वन मन फुल्ले ॥ चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिवतियरवन । प्रभु मोर दुःखनाशनविषै, अब विलंब कारन कवन ॥ ५ ॥ तब विलंब नहिं कियो, शेट सिंहासन दीन्हौ । तब विलंब नहिं कियो, सिंधु श्रीपाल ऋद्धीन्हौ ॥ तब विलंब नहिं कियो, प्रतिज्ञा वज्रऋण पल । तब विलंब नहिं कियो, सुधन्वा काढ़ि वापि थल ॥ इम चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिवतियरवन । प्रभु मोर दुःखनाशनविषै, अब विलंब कारन कवन ॥ ६ ॥ तब विलंब नहिं कियो, कंस भय त्रिजुग उतारे । तब विलंब नहिं कियो, कृष्णसुत शिला उतारे । तब विलंब नहिं कियो खड्ग मुनिराज बचायो । तब विलंब नहिं कियो,

नौरमातंग उचायो ॥ इमि० ॥ टेक ॥ ७ ॥ तब विलंब नहि
कियो, शेठ सुत निरविष कीन्हौ । तब विलंब नहि कियो, मान-
तुंगबंध हरीन्हौ ॥ तब विलंब नहि कियो, वादिमुनिकोढ़ भिटायो ।
तब विलंब नहि कियो कुमुद निन पास मिटायौ ॥ इमि० ॥
टेक । ८ ॥ तब विलंब नहि कियो, अंजनाचोर उवारे । तब
विलंब नहि कियो, पुरखा भील सुघारे ॥ तब विलंब नहि कियो,
गृद्धपक्षी सुंदर तन । तब विलंब नहि कियो, भेक दिय सुर
अद्भुत तन ॥ इमि० ॥ टेक ॥ ९ ॥ इहविधि दुखनिवारन, सार-
सुख प्रापति कीन्हौ अपनो दास निहारि भक्तवत्सल गुन चीन्हौ ॥
अब विलंब किहि हेत, कृपा कर इहां लगाई । कहा सुनो
अरदास नाहि, त्रिभुवनके राई ॥ जनवृंद सुमनवचन अबै,
गही नाथ तब प्रद शरण । हो दयाल मम हारै, कर मंगल
मंगलकरन ॥ १० ॥

(९)

जिनवचनस्तुति ।

हो करुणासागर देव तुमी निर्दोष तुमारा वाचा है । तुमरे
वांचामें हे स्वामी, मेरा मन सांचा राचा है ॥ टेक ॥ १ ॥ बुधि
केवल अप्रतिछेदविषै, सब लोकालोक समाना है । मनु ज्ञेय
गरास विकास अटंक, झलाझल जोत जगाना है ॥ सर्वज्ञ तुमी
सब व्यापक हो निरदोष दशा अमलाना है । यह लच्छन श्री
अरहंत विना, नहि और कही ठहराना है ॥ हो करु० ॥ १ ॥
धर्मादिक पंच वसै जहँ लौं, वह लोकाकाश कहावै है । तिस
आगैं केवल एक अनंत, अलोकाकाश रहावै है ॥ अवकाश

अकाशविषै गति औ, यिति धर्म अघर्म सुभावै है । परिवर्तन लच्छन काल घेर, गुणद्रव्य निनागम गावै है ॥ हो करु ॥ ॥
 इक जीव अरु धर्म, धर्म, दरव ये मध्य असंख्यप्रदेशो है । आकाश अनंतप्रदेशी है, ब्रह्ममंड अखंड अलेशी है ॥ पुगलकी एक प्रमाणू सो यद्यपि वह एकप्रदेशी है । मिलनेकी सकृति वमावीसों होता बहु संघ सुलेशी है ॥ हो करु ॥ ४॥ कालाण भिन्न असंख अणू मिलनेकी शाकि न धारा है ॥ तिसैं कायाकी गिनतीमें, नहि काल दरवको धारा है ॥ हैं स्वयंसिद्ध षट्द्रव्य यही इनहीका सर्व पसारा है । निर्वाध जगारथ लच्छन इनका, जिनशासनमें सारा है ॥ हो करु ॥ ५॥ सब जीव अनंत प्रमान कहे, गुन लच्छन ज्ञायकवंता है । तिसैं अड़ पुगल मूरतकी, हैं वर्णरास अनन्ता है ॥ तिसैं सब भावियकाल समयकी, रास अनन्त मनंता है । यह भेद सुभेदविज्ञान बिना क्या और—न को दरसंता है ॥ हो ॥ ६ । इक पुगलकी अविभाग अणू मिलने नभमें यिति कीना जी । तितनेमहें पुगल जीव अनंत वसैं धर्मादि अछीना जी ॥ अवगाहन शक्ति विचित्र यही, नभकी बरनी परबीनाजी । इसही विधिसों सब द्रव्यनिमें गुन शक्ति वसैं अनकीना जी ॥ हो ॥ ७ ॥ इक काल अणूपरतें दुस्तिगेपर नाति जवै गत मंदी है । इक पुगलकी अविभाग अणू, सो समय कही निरहंदी है ॥ इसैं नहि सूक्ष्मकाल कोई, निरअंश समय यह छंदी है । यातें सब कालप्रमान वैधा, बरनी श्रुति जैति जिनेदी हैं ॥ हो ॥ ८॥ जव पुगलकी अविभाग अणू, अतिशीघ्र उताल चलानी । इक समयमांहि सो

चौदह राजू, जात चली परमानी है । परसै तहँ सर्वपदारथको, क्रमसौं यह भेद विधानी है ॥ नहि अंश समयका होत तहाँ, यह गतिकी शक्ति बखानी है ॥ हो० ॥ ९ ॥ गुण द्रव्यानक आधार रहें, गुणमें गुण आर न राज ह । न किसी गुणसों गुण और मिलें, यह और बिलच्छन ताजै ह । ध्रुव व उनपाद सुभाव लिये, तिरकाल अबाधित छाजै है । षट हानिरु वृद्धि सदीव करै, जिनवेन सुनै भ्रम भाजै है ॥ हो० ॥ १० ॥ निम सागरश्रीच कलोल उठी सो सागरमाहि समानो है । परजै करि सर्व पदार्थमें तिमि हानिरु वृद्धि उठानी है ॥ जब शुद्ध दरबार दृष्टि धरै तब भेदविकर नशानी है । नयन्यासनतैं बहु भेद सु तो परमान लियें परमानी है ॥ हो० ॥ ११ ॥ नितने निजवेनके मारग हैं, तितने नयभेद विमाखा है । एकांतकी पच्छ मिथ्यात वही, अनेकांत गहैं सुखसाखा है ॥ परमागम है सर्वग पदारथ, नय इकदेशी भाषा है । यह नय परमान निनागम साधित, सिद्ध करै अभिलाषा है ॥ हो० ॥ १२ ॥ चिन्मूरतके परदेशप्रती, गुण हं सु अनंत अनंतानी । न मिल गुण आपुसमें कबहूँ सत्ता नि न भिन्न धरंता जी ॥ सत्ता चिन्मूरतकी सबमें सब काल सदा वरतंता जी । यह वस्तु सुभाव जथारथको, नित्य सम्यकवंत लखंता जी । हो० ॥ १३ ॥ सविरोध विरोधविवर्जित धर्म, धर सब वस्तु विरोध है । बह भाव तहां सु अभाव वसै इन आदि अनंत सु छाजै है ॥ निरपेक्षित सो न सधे कबहूँ, सापेक्षा सिद्ध समाजै है । यह अनेकांतसों कथन मथन करी, स्यादवाद धुनि गाजै है ॥ हो० ॥ १४ ॥ जिस काल कथंचित अस्ति कही, तिस काल कथंचित

गहीं हैं । उभयातमरूप कथंचित सो, निरवाच कथंचित ताहीं
हैं ॥ पुनि अस्ति अवाच्य कथंचित त्यों, वह नास्ति अवाच्य
कथा ही है । उभयातमरूप अकथ्य कथंचित, एक ही काल
सुमाही है ॥ हो० ॥ १९ ॥ यह सात सुभंग सुभाव मथी, सब
क्षु अमंग सुसाधा है । परवादिविजय करिवे कहँ श्रीगुरु.
स्यादहिवाद अराधा है ॥ सर्वज्ञप्रतच्छ परोच्छ यही, इतना इत
मेद अवाधा है । ' वृन्दावन ' सेवत स्यादहिवाद घटे जिसै
भववाधा है ॥ हो करुणामागर देव तुमी, निर्दोष तुमारा वाचा है ।
तुमे वाचामे हे स्वामी, मेरा मन सांचा राचा है ॥ हो० ॥ १९ ॥

(१२) सम्मर्षिदशक मन्त्र ।

(लाला गुमानीलालजी कृत)

दाहा-श्री आदीश्वर चरणयुग, प्रथम नमो भित ल्याय ।
प्रगट कियो युग आदि वृष, भजत सुमंगल याय ॥ १ ॥ सन्मति
प्रसुसन्मति करण, बन्दत विन्न विलात । पुनः पंच परमेष्ठिको,
नमो त्रिजग विख्यात ॥ २ ॥ गौतम गुरु फिर शारदा, स्याद्वाद
जिस चिन्ह । मंगल कारण तासको, नमो कुमति हो भिन्न ॥ ३ ॥
मंगलहित नमि देव श्री, अरिहंत गुरु निर्ग्रथ । दयारूप वृष
पोत भव, वारिधि शिवदुर पंथ ॥ ४ ॥ इस विधि मंगल करनसे,
रहत उदगत्र दूर । विन्न कोटि तत्क्षण टर, तम नाशत ज्यों सूर
॥ ५ ॥ श्री सर्वज्ञ सहाय मम, सुबुद्धि प्रकाशो आनि । तो
कवित दोहानमें, रचो समाधि चखानि ॥ ६ ॥ मरण समाधि

करे सु जो, सो नर जग गुण खान । इन्द्र चक्रंगति हो पुनः
 अनुक्रम लें निर्वाण ॥ ७ ॥ देख गुमानीरामका, बचन रूप सुप्र-
 बन्ध । लघुमति ता संकोचिके, रचै सु दोहा छंद ॥ ८ ॥ पिंगल
 व्याकरणादि कुछ, लखो नहीं मति बाल । कंठ राखनेके लिये,
 रचौ बालवंत ख्याल ॥ ९ ॥ लघु धी तथा प्रमादसे, शब्द अर्थ
 लख हीन । बुधनन सोधि उचारियो, हंसो न लख मतिक्षीण ॥ १० ॥
 मंद कषायोंसे जु हों, शान्ति रूप परणाम । तब समाधिविधि
 आदरे, मरण समाधिसु नाम ॥ ११ ॥ सो मैं अब दृष्टान्तयुत,
 कइौ त्रियोग सम्हार । भवि अहिनिशि पढियो सु यह, कर परणाम
 उदार ॥ १२ ॥ छप्पय छंद । सुता ज्यों गृह सिंहाताहि इक
 पुरुष विचक्षण । जात किं ललकार सिंह उठ देख तत्क्षण ।
 हतन वृन्द रिपु तोड़ि निकट आयो यह तेरे ॥ सावधान हो चेत
 करो पुरुषारथनेरे । जबलों रिपु कुछ दूर हैं, कर सम्हार जीतो
 तिन्हें ॥ यह महत्पुरुषकी रीति है, ढोल किये आवत कमें ॥ १३ ॥
 बवन सुनत यों सिंह गुफासे बाहर आयो । गर्ने वन जमि सुनो
 शत्रु हिय थिर न रहायो ॥ जीवनको असमर्थ लान हस्ती सब
 कांये । निर्भय हरि पौरुष सम्हार नहीं सके जो नाये ॥ त्यों सम्य-
 ज्ञानी नर सुधी मरणसमय विधिसेन लख । तिहि जीतन निनपौरुष
 जे सकलउपाधिक भावनख ॥ १४ ॥ आवतकाल तटस्थ देख तब
 साहस ठाने ॥ कर्म संयोग संदेह इती धिति पूरण जाने ॥ ताही-
 से मम योग्य कार्य अब ढोल न कीजे । जो चूकौ यह दाव घोर
 संसार पड़ीजे ॥ अतिकठिन काकतालीय ज्यों मनुजजन्म शुभवश लहा ।
 सो वृथा गमाया घर्मविन दौड़दौड़ चहुंगतिवहा ॥ १५ ॥ कर कषाय

अति मन्द क्षमादिक दशवृष ध्यावे । अन्तर आतम मांदि शुद्ध
 उपयोग रमावे ॥ करे राग रूप मोह शिथिल अति हो सो ज्ञानी ।
 तिराङ्ग चित्रूप ध्यान घर बहु गुण खानी । तब रत्न रम स्वाद
 आवे धनो अवलुल भिल पांचों दरब । इय निश्रयदृष्टि विलोकता लहै
 सुखल जो अकथ अब ॥ १६ ॥ आनंद रत्न नित रहै ज्ञान मय ज्योति
 ठनारी । पुरुषाकार अमूर्ति चेतना बहु गुण घारी ॥ ऐमा आतम-
 देव आप भानन बुधि प.गो । पर द्रव्योसे किसी भांति ना होवे
 रागी ॥ निज वीतराग ज्ञाता सुथिर अविनाशी परमज्ञ लखा ।
 वपु पूगन गलन अमात्स्यता इम लख तिन निजरस चख ॥ १७ ॥ समदृष्टी
 नर सश मणका मय ना माने । आयु अंत जब लखे स्वहित तब
 याविधि ठाने ॥ आयु अल्प इम देह तनी अत्र रही दिखावे । अब
 करना मम चेत सावधानी यह दावे ॥ निम रणभेरीके सुनतही
 सुमट जय रिपुपर झुके । त्यों कालवलीके जीतने ॥ इम ठाने
 अब चुके ॥ १८ ॥ सब जिय सोच विचार लखो पुद्गल परमायी ।
 देखत उत्पनि यह देखने अब खिर जायी ॥ मैं स्वरूप इस लखो
 विनाशिय पहिले याको । सो अब अवसर पाय बिले जाती यह
 ताको ॥ मम-ज्ञायक दृष्टारूप निज ताहि सबैविधि आदरों ।
 अब किसविधि देह नशे जू यह मैं तमाशगोरी करों ॥ १९ ॥
 मम स्वरूप द्रव ज्ञान सुखल वीरन अनन्त मय । नर नारक पर्याय
 भेद बहु भये मृषानय ॥ जो पदार्थ त्रलोकमें सुते तिन ही के कर्ता ।
 मैं बित्त अमल अड़ोल नहीं तिन कर्ता हर्ता ॥ वे आपहिं बिछुडे
 मिलें पूरे गऊँ अचित सदा । तो देह रखाया क्यों रहे मूल भर्म
 न पड़ों कदा ॥ २० ॥ सधैया ॥ २१ ॥ काल अनादि भरो दुःख मैं

पर द्रव्योंसे एकहि जानो । कालबली दृढगढ़ असौ कहि जन्म
जरामरण फिर ठानो ॥ खेद लहो वश मोहतने सु विचार सजें
अब मूल दिखानो । मैं निज ज्ञायक भावनको कर्ता अरु मुक्त
सदा थिर जानो ॥२१॥ मो सत्संगसे देहपुजे जग मो निकसे, तनको
सज जाँरे । मानत देह रु जीव एकत्र नशे यह तो शठ रोय
पुकारें ॥ हाय पिता त्रिय पुत्र कलत्र सुमात हितू कहां जाय पधारें ।
और अनेक विलाप करें अति खेद कलेश वियोग पसारें ॥२२॥
एम विचार करें सु विचक्षण अक्षण देख चलो जग जाई । कौन
पिता त्रिय पुत्र हितू सो कलत्र यहां किन कौनकी माई ॥ को गृह
माल कहा धन भूषण जात चली किनकी ठकुराई । ये सब वस्तु
विनस्वर ज्यों स्वप्नेमें राज्य करे नर भाई ॥२३॥ देखत इष्ट लगे
यह वस्तु विचारत ही कुछ नाहिं दिखावे । सो इम जान ममत्व
सुमान त्रिलोकमें पुटल जो दृढ़ आवे ॥ देह स्नेह तजो तिस ही
विधि रञ्जक खेद न मो चित्त पावे ॥ जा उर हो यह देह प्रतक्ष
विगार सुधार न मोह लखावे ॥२४॥ देखहु मोहतनी महिमा पर
द्रव्य प्रत्यक्ष विनाशिक डेरी । है दुख मूल उभय भवमें जगजीव
सबे इसमाहिं फंसेरी ॥ मूरख प्रीतिकरे अतिही अपना तन जान
रखावन हेरी । मैं इकज्ञायक भाव धरें सो लखों इस काल शरी-
रको बेरी ॥२५॥ दोहा । माखी बैठे खांड पर, अग्नि देख भगजाय ।
काल देहको त्यों भखे, मो लख थिर न रहाव ॥२६॥ मरण योग्य
पहिले मुआ, जीया मृतक न होय । मरण दिखावत नाहि मम,
अर्म गया सब खोय ॥२७॥ सधैया २३ । चेतनके मरणादिक व्याधि
लखी न त्रिलोक त्रिकाल मंझारे । तो अब सोच करो किस कान,

अनंत दृगादिक भावको धारे ॥ ता अवलोकित दुःख नशे ममज्ञाऽ-
 पियूषसु पुरितसारे । ज्ञायक ज्ञेयनको यह जीव पै ज्ञेयसे भिन्न
 अनाकुल न्यारे ॥ १८ ॥ व्यापक चेतन ठौहरीठौर यथा इकलौन
 ढलीरस पागी । त्यों मैं ज्ञानका पिंडहूं पै व्यवहारसे देहप्रमाणसो
 लगी । निश्चय लोक प्रमाणाकार अनंत सुखामृतसे अनुरागी ।
 मृतमही गल मोमगयो नभ युक्त तदाकृति देखहु सागी ॥ १९ ॥
 दोहा । मैं अकलंक अवंक थिर, मिलत न काहू मांहि । नशो देह
 भावे रहो, हमें न किहि विधि चाहि ॥ २० ॥ छप्पय छन्द । कहै
 एक नर सोच देह तुम्हरी तो नाहीं । पर याके संग ध्यान शुद्ध
 उपयोग कहाहीं । एता वपु उपकार कहो सुन थिर चित भाई ॥
 रत्न द्वीप नर आय एक झोंपड़ी बनाई । बहुरत्न एकठाकरे अग्नि-
 लगी बुझावे तब सुवर । जब बुझत न जाने झोंपड़ी रत्न लेख भागे
 सुनर ॥ २१ ॥ दोहा । त्यों मम संयम गुण सहित, रहो देह ना बेर ।
 नशत उभय तो जानिये, संयम राखो घेर ॥ २२ ॥ संयम रहता
 देह बहु, क्षेत्र विदेहा जाय । तप कर चक्री इंद्र हो, अनुक्रम
 शिव थल पाय ॥ २३ ॥ मोह गयो आकुल गई, ध्यान दिगावे
 कौन । इन्द्र चक्र धरेन्द्रसुर, दिष्णु महेश्वर जौन ॥ २४ ॥
 सवैया—देह स्नेह करी किस कारण यह वपु ज्यों चपला चमकाई ।
 नाहिं उपाय रखावनको कहु, औषधि मंत्र रु तंत्र बनाई । जो थि-
 तिपुण होई तवे सुर इन्द्र नरन्द्र हरा मृत्व आई । दाव बनो
 हितसाधनको बहुलोग चिगावहि मैं न चिगाई ॥ २५ ॥

(कुटुम्भादि भ्रमत्व त्याग)

छप्पय छन्द । अब कुटुम्भके लोग सुनो हित सीख

हमारी । एताही सम्बन्ध देह तुम्हरो अवधारी । तुम राखत ना रहे सोच अपना कर भाई । यह गति सबकी होई चेत देखो पित्त भाई । मो करुणा आवत तुम तनी खेद धार क्यों दुःखभजो । वृषधार योग नित सुथिर हो ममत्वनसो भवतजो ॥१६॥ सवैया—
जो दृढ़ व्याधि ग्रसे तन अन्त सु वेदना दुर्जय आवत तेरी । कारण तास तने परणाम चिगे लख साहससे बुद्धि फेरी । पूरव संचित कर्म उदय फल आय लगो गद ने वपु घेरी । भिन्न सदा मम रूप निराकुल है शरणा निज आत्मकेरी ॥१७॥ छप्पय छन्द । शरण पंच परमेष्टि बाह्य जिन वृष जिनवाणी । रत्नत्रय दशधर्म शरण सुनहो चिद ज्ञानी । और शरण कोई नाहिं नेम हमने यह धारो । इस विधिसे उपयोग थाम कर एम विचारो । अरिहन्त देवगुरुद्रव्य गुण, पर्यायन निर्णय करें । तब निज सुरूपमें आवकर साहससे दृढ़यिति धरें ॥१८॥ सवैया १३ । वपु मातपिता तुम एम सुनो ममदेह स्नेह वृथा तुम धारो । को तुम को मैं हाटतनी गति प्राप्त पयानकरें जन सारो । रीति भरें घटराईत तनी तुम अन्तरके दृढखोल विचारो । आपतनो दृढ़ सोच करो तुम आत्म द्रव्य अनाकुल न्यारो ॥१९॥ छप्पय छन्द । यह सब मक्षी काल कालसे बचे न कोई । देव इन्द्र यिति पूर्णदेख मुख रहे जु सोई ॥ यम किंकर ले जाय आपनी कथा कौन है । तन धारे सो भरे वृथा कर खेद जो न है ॥ यह आजकाल मुवा मनुज सुन प्रति जिनवृष आदरो यह निरोपाय जगरीति है जिनवृषभज साहस धरो ॥

(स्त्री ममत्व त्याग ।)

सवैया २३ । हे त्रिय देहतनी सुनसीख स्नेह तजो वपुसे

अब प्यारी । देहरुतो सम्बंध इतो अब पूर्ण हुआ नहीं खेद
 पसारी । कार्यसरे नहीं या तनसे तुम राखहु नाहिं रहै तन नारी ।
 पुद्गलकी पर्याय त्रिया नर सोच लखो दृग खोक निहारी ॥४१॥
 छप्पय छंद । भोग बुरे भव रोग बढ़ावत बैरीजीके । होवे विरस
 विपाक समय लगै सेवत नीके ॥ एकेंद्री वश होई विपति अतिसे
 दुख पायो । कुंजर झलझलि सलम हिरण इन प्राण गमायो ॥ पंच
 करन वश होई जो जुगति घोर दुःखपावहि । इन त्याग त्रिया
 संतोष भज, जो मम नार कहावही ॥ ४२ ॥ भोग किये चिरकाल
 घने त्रियकार्य सरो न कछु सुख पायो । इष्ट वियोग अनिष्ट
 संयोग निरन्तर आकुलताप तपायो ॥ दुर्लभ जन्म सु बीत गयो
 अब कालके गालहिमें वपु आयो । सो त्रिय राखन कौन समर्थ
 वृथा कर खेद सो जन्म नशायो ॥४३॥ छप्पय छंद । जो प्यारी
 मम नारि सीख हित चित्त घरीजो । शीकरत्न दृढ़ राख तत्व
 श्रद्धान सु कीजो ॥ धर्म विना भव भ्रमे काल बहु हम तुम सबही ।
 गति चारों दुःखरूप घरी वृष गहो न कबही । अब मम सुख
 वांछे नार तु, वृष दृढ़ाव तज आसतैं । तुम भावनको फलभोग
 ही, शीघ्र जाहु मो पासतैं ॥४४॥ दोहा । नारि बुलाय सम्बोधि
 हम सीख दई हितसाज । अब निज पुत्र बुलाइयो, ममत्व निवारण
 कान ॥ ४५ ॥

पुत्रादि ममत्व त्याग ।

छप्पय छंद । पुत्र विचक्षण सुनो आयु पुरण अब म्हारी ।
 तुम ममत्व बुद्धि तनो खेद दुखको करतारी । श्री जिनवर कर
 धर्म मलीविधि पालन कीजो । पूजा जप तप दान शीलसम्यक्त्व

गहीनो । फिर लोक निंद्य कारज तनो, साधर्मिनसे हित करो ।
 तुमयुग भव सुख हो है सु सुत, सीख हमारी उर धरो ॥४६॥
 सर्वैया २३ । देह अशवन वस्तु जगत्रयकी या संगसे मैली ।
 कर्म गढ़ी घन अस्थि जड़ी चर्म मढ़ी मल मूत्रकी थैली ! नव
 मल द्वार खर्वे वस्तु जाम कुवाँ घिनावनकी वपु गेली । पोषत
 हो दुःखदोष ५ रे सुत सोखत याहि मिले शिव सेली ॥४७॥
 दोहा । जो तुम राखें देह यह, रहै तो राखे धीर । मैं बरजो
 ना तोहि सुत, करो सोच निज वीर ॥४८॥ सुन अनुक्रमसे गति
 सबनि, यही होयगी भीत । निज वृष नवका बैठके, भव जल
 तर तन भीति ॥ ४७ ॥ दया बुद्धिसे सीख मैं देई तोहि लख
 पीर । होनहार तुम होइनो, रुचे सो कीजो धीर ॥ ५० ॥ यों
 कह सब परिवार त्रिय, सुत मित्रादिक भूर । मरण विगाड़न लख
 तिन्हें किये पाससे दूर ॥ ५१ ॥ जो आता सुत आदि गृह-
 भार चलावन योग । सोंप ताहि हित सीख दे, तजै जगतका रोग
 ॥ ५२ ॥ और मनुष्योंसे कछु, बतलानेको होई । ते बुलाय
 बतलाय कुछ, सत्य न रखे कोई ॥ ५३ ॥ दया दान अरु
 पुण्यको, जो कुछ मनमें होई । सो अपने कर से करे, करे विलंब
 न कोई ॥ ५४ ॥ साधर्मी पंडित निकट, राखे इम बतलाय । मो
 परणाम लखो चिगे, तुम दृढ़ कीजो भाय ॥५५॥ छप्पय छंद ।
 अब समदृष्टी पुरुष काल निज निकट सुजाने । तब सम्हाल
 पुरुष र्थ सत्य तन साहस ठाने ॥ शक्ति सार धर नेम एम मर्यादा
 कीजे । कर परिग्रह परिणाम रूप निज अनुभव कीजे । यह संशय
 मन होई जो, पुरण आयु न हो कदा । तो निज शक्ति प्रमाण

यह जीव भ्रमे भवयोग चलाचलसे उपजेंगे । दुःख लहो चिरकाल
घनोरचि जो बुधिवन्त तिन्हें सु तजेंगे । पुण्य रु पाप दुहू तनके
निज आतमकी अनुभूति सजेंगे । आवत कर्मनको वरजें तव संवर
भाव सुधी सु भजेंगे । ॥६१॥ कर्म झड़े निजकालहि पायन कार्य
सरे तिनसे जिय केरो । जो तपसे विधि हानि करें कर निजरासे
शिवमांदि बसेरो । जो पट्द्रव्य मई यह लोक अनादिको है न
करो किहि केरो । एक जिया भ्रम तो चिरको दुःख भोगत नांदि
तजे भव फेरो ॥६४॥ अंतिम ग्रीवक हइ लहो पद सम्यक्ज्ञान
नहीं कहुं पायो । आतमबोध लइो न कभी अति दुर्लभ जो जगमें
मुनि गायो । मोहसे भाव जुदे लखके दृगज्ञान व्रतादिक भाव
बतायो । धर्म वही कहिए परमारथ या विधि द्वादश भावना भायो
॥६९॥ दारुण वेदना आशुके अंतमें देहसरूप अनित्य विचारो ।
दुःख रु सुख तो कर्मनकी गति देह बधो विधिके संग सारो ।
निश्चयसे ममरूप दृगादिक देह रु कर्मनसे नित न्यारो । तो मुझे
दुःख कहा वपुके संग पुरव कर्म विपाक चितारो ॥६९॥ देहनशी
बहुवार जो अग्र इसी विधि अन्त सुकष्ट लहायो । पै न लखो
निज आतमरूप नहीं कहुं जन्म समाधिहिं पायो । या भवमें सब
योग बनो निज कार्य सुधारनको मुनि गायो । कर्म अरी हरि मोक्ष-
त्रिया वर पूरण सुख लहो सु सवायो ॥६७॥ काल अनादि भ्रमें
जिय एकहि पंच परावर्तन कर फेरी । द्रव्य रु क्षेत्र सुकाल तथा
भवभाव कथा तिनकी बहुतेरी । वार अनंत किये तहां पूरण
अन्त लहो भवका न कदेरी । को वरने दुःखकी जु कथा गुण
राज थके बुधि अल्पजू मेरी ॥६८॥॥ नित्य निगोद सुभौन जिया

तज जो कहूं राशि व्यवहारमें आयो । माग्य उदय असकाय घरी
 विकत्रयमें रूढ़ खेद कहायो । वा पंचेन्द्रिय होई पशु सबलान
 हतो निवृत्ता हत लायो । मूल तृषा डिमताप तपो अतिभार बहो
 दृढ़ बन्धन पायो ॥ ६९ ॥ देह तनी अति संकट भावनसे तब
 सुभ्रतनी गति धायो । मृमि तहां दु खरूप इसी मनुकोटिन विच्छु-
 नने डप लायो । देह तहां कर्मरोगन पुरित कंटक सेजनसे दु
 घिसायो । घातकरे दल सेंमलके निज बैर मनो असुगन भिड़ायो
 ॥ ७० ॥ मेरु प्रमाण गले तहां लोह हिमा तप याविधिको मुनि
 गायो । नान भल्ले सब लोक तनो न मिटे गद एक कणा न कहायो ।
 सागर नीर पिये न बुझे तृषा जल ब्रूद न दृष्टि लखायो । को
 वरणे थिति सागरकी कहूं भाग्यउदय नरकी गति आयो । वास
 क्रियो नव मास अधोमुख मात जने दुःखसे जु घनेरो । बालपने
 गददन्त पलादिक ज्ञान बिना न मने बचनेरो । यौवन भामिन संग
 रचे जु कषाय जली गृह भार बड़ेरो । पुत्र उछाह सु हर्ष बड़ो सु
 वियोगसे आकुल ताप तपेरो ॥ ७१ ॥ द्रव्य उपार्जन कष्ट सहे
 अब यो करनो यह तो हम कीनो । संतत जोग न तो दुःख भोग
 कुपुत्र कुनार तने दुःख भीनो । पीड़ित रोग दरिद्र फंसे अति
 आकुलसे कर बंध नवीनो । आरति ठान मली सिख भान सो
 मूढ़ कमी सत्संग न कीनो ॥ ७२ ॥ वृद्ध भयो तृष्णा जु दहो सुख
 कार बहै तन हालत सारो । बस्त्र सग्हाल नहीं तनकी वृषकी जु
 कथा तहां कौन उचारो । काल अचानक वंठ दवे तब लाय बिना
 वृष यो तन प्यारो । चेतन कूब क्रियो तनसे सुकुटुम्बके इन्धनसे
 वपु नरो ॥ निर्मला कीन अकाम कमी कहि स्वर्ग तनी गति सुःख

सुमानो । हो विषया रस भक्त तहां अति आतुर भोग न चाह
 दहानो । देख विभव पर झूर डसो जम माल लखी चयते बिलकानो
 आरतिसे मर कर्म ठगो जिय फेर भवार्णवमें भरमानो ॥७५॥ यो
 जु भ्रमो चिरकाल जिया बिन सम्यक सुख समाज न पायो ।
 जन्म जरा मरणादिक रोग कलेश तनो कहूं अंत न आयो । आप
 स्वरूप विसार रचे पर दुःख चितारत फाटत कायो । तो अब यो
 दुःख नहिं ६ छू लख सम्यक्की दृढ़ चेतनरायो ॥७६॥ दोहा ।
 इम चिंतन कर वेदना, सर्व निवारे सूर । फिर निर्मय नरसिंहवत
 कहा करै हितपूर ॥७७॥ छप्पयछंद । शक्ति बचनकी रहै जैन-
 श्रुत सुखसे गावे । या बिन बचन न कहै नेम घर ममत्त नशावे ॥
 निकट आयु लख पहर चार द्वे इक दिनकेरी । चउ विधि तज
 आहार परिग्रह द्वे विधिटेरी । पुन शक्ति देख तज जीव बहु जुदी जुदी
 शक्तिः धरें । इम नेम जाव जिय त्यागहित, न साधनमें अंत परे
 ॥७८॥ अंत सल्लेखना मांड आराधन चउ विधि ध्यावे । क्षण २
 करे सम्हाल भाव कहूं डिगन न पावे ॥ कर दृढ़ तत्व प्रतीति धार
 सम्यक निरखेदे । वेदन तीक्ष्ण निपट ताहि अन्तर नहीं वेदे ॥ जब
 बचन बंद होता लखे, तब सुबचनसे यो कहव । तुम जिनवानी
 पढ़ियो जु बहु, असत काल यह देह अब ॥७९॥ दोहा । परमेष्ठी
 पांचोनको, रूप सु उर में धार । नमस्कार हित युत करे, फिर
 फिर कर शिरधार ॥ ८० ॥ जैनधर्म जिन विंव भरु, जिन वाणी
 जिनधाम । शुद्ध भावसे देव नव, तिनको करे प्रणाम ॥ ८१ ॥
 कृत्याकृत्यम जिन भवन, सिद्धक्षेत्र भवतार । तिनको बंदो भावसे,
 युगल पान शिरधार ॥ ८२ ॥ उत्तम क्षमा समस्तसे, कर हित-

मित बतलाय । आप क्षमा करवायके, वैर न राखे भाय ॥ ८३ ॥
 मौन लहै तब धीर सो, अन्तरके दृग खोल । तजे राग रूप
 मोह सब, कर परणाम अडोल ॥ ८४ ॥ जवहीं शिथिल न होई
 तन, इंद्रिय बल मन दौर । तबलौ अनुभव कीजिये, प्रभु आतम
 गुण औ ॥ ८५ ॥ शिथिल पड़ी जव जानिये, इंद्रिय तन मन
 द्वार । तब नवकार उचारिये, महामंत्र जग सार ॥ ८६ ॥ सर्वैया
 ॥ ८७ ॥ ज्ञानविना नर नारि पशु है योग मिले बड़ भाग संहारे ।
 प्राण तजे नवकार उचारत तो गति नीच तनी नहिं धारे । अंजन-
 चोर करी मृगराज अजासुत आदि जपे नवकारे । स्वर्ग तनो सुख
 वेग लयो शुभ बीजसे वृक्ष यथा शुभसारे ॥ ८७ ॥ दोहा ॥ मरण
 समय औषधि निपुण, दुःख नाशक सुखमूल । बार बार मंत्रहिं
 जपे, तजे जगति दुःख शूल ॥ ८८ ॥ मैटे बांछा सकल पुन,
 धरे न बन्ध निदान । रत्नछोड़ कांच न ग्रहे, त्यों समाधि फल
 जान ॥ ८९ ॥ सर्वैया २३ । जीव प्रवेश खिंच तनसे दुःखसे
 नहीं अकुल ताप तपेंगे । जीति परीपह हो सुखरूप निरंतर
 सो नवकार जपेंगे । आसन जो शुचि होइ निया शुभ ध्यान धरें
 वसु कर्म छिपेंगे । कंठ लगे कफ आन जवे शुभ भूलसे वे दश
 प्राण चपेंगे ॥ ९० ॥ दोहा । या विधि अधिक संहारसे, तजे
 देह सुख मौन । शुभगति सन्मुख होइ कर, जीव करें गति गौन
 ॥ ९१ ॥ छप्पयछंद । जो समाधि आदरे तासु बांक्षा मन
 चावे । कर सदार परमाण ताहि निशिदिन ही ध्यावे ॥ कव आवे
 वह घड़ी समाधि सु मरण करोंगो । अंत सछेखण माइ कर्मरिपुसे
 सु लड़ोंगो ॥ यह चाह रहै निशिदिन जवे, कुगति बन्ध नाहीं

करे । सम्यक्त्ववान जग पूज्य हो, निश्चयसे शिवत्रिय बरे ॥९१॥
 पंचमकाल करालमें न संयम जो गाई । पर समाधि आदरे तास
 महिमा अधिकारी ॥ ताफल सुर गति लई इन्द्र चक्रो नर राई ।
 हो सब जग भोग विदेहां जन्म कहाई ॥ सुखभोगघार तपकर्महर,
 शिव सुन्दरि परणे सुजन । मुख एक थकी वरणों सुकिम, धन्य
 समाधि महिमा सुभन ॥ ९१ ॥ दोहा । देह अशुचि शुचिको
 यहां, कुछ न विचार करेह । पढ़े पाठ मंत्रहि जपे, अशुचि सदा
 यह देह ॥९४॥ श्री काश्यप क्रम यमलको, नम विक्रम आन ।
 द्वादशग दोषा सुधर, मूर्धन क्षनद विहान ॥ ९५ ॥ नरक कला
 अत तास रुच, रस्मिन उदय रहंत । शतक समाधि सु विस्तरों ।
 तव लग जय जयवन्त ॥ ९६ ॥ सवैया १३ । मंगलसे बहु
 विघ्न-नशे यह पाठ सुपूरण मंगल कीने । है निमित्त बह वीर-वई
 शिख श्रावक भेर उदासिय भीने । राखन कंठ सुहेत रचे सब जीव
 पढ़े सु समाधिहि चीन्हे । तास प्रमाण श्लोकनका युगसे जु पचास
 कहै जु नवीने ॥ ९७ ॥ नाम समाधि शतक यथा इकसे इक
 छन्द कवित्त सु कीने । कर्ता मूल जिनेश गणी क्रमसे सो राम
 गुमानीकीने । ता अनुसार सो प्राण पुरामह छंद रचे रघु धी
 बदलीने । लक्ष्मणदास सो आत बड़े तिनने यह सोधि समापति
 कीने ॥९८॥ दोहा । इक नव युग पर युग घरे, शुभ सम्बत्सर
 जान भाद्रव धवल सु तीज गुरु पूरण किया विधान ॥ ९९ ॥
 यामे छंद रचे इते, दोहा पैंतालीस । पुन छप्पय इकवीस हैं, कवित
 रचे पैंतीस ॥ १०० ॥ संख्या सब श्लोक मिल, युगशत और
 पचास । अल्प बुद्धि वरणो सु यह, बुधजन सोधो नासु ॥१०१॥
 ॥ इति समाधिशातक छन्दबद्ध संपूर्णम् ॥

पांचवां खंड ।

(१) एकीभावस्तोत्रम् ।

(श्रीवादिराजप्रणीतम्)

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो घोरं दुःखं भव-
भवगतो दुर्निवारः करोति । तस्याप्यस्य त्वयि जिनवरे भक्तिर-
न्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तथा कोऽपरस्तापहेतुः ॥ १ ॥
ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं, त्वामेवाहुर्जिनवर चिरं
तत्त्वविद्याभियुक्ताः । चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्रासमानस्त-
स्मिन्नहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥ २ ॥ आनन्दाश्रुत्त-
पितवदनं गद्गदं चामिजल्पन्यश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्र-
मन्त्रैर्भवन्तम् । तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्माग्निष्का-
स्यन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥ ३ ॥ प्रागेवेह त्रिदिग्भव-
नादेष्ट्यता मव्यपुण्यात्पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम् ।
ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्वान्तगोहं प्रविष्टस्तरिं शित्रं जिन वपुरिदं
यस्तुवर्णी करोषि ॥ ४ ॥ लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निर्मितेन बंधु-
स्त्वय्येवाप्तौ सकलविषया शक्तिरप्रत्यनीका । भक्तिस्तीतां चिरमधि-
वसन्नामिहां चित्तशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेशयुगं सहेयाः
॥ ५ ॥ जन्माटव्यां कथमपि मया देव दीर्घं भ्रमित्वा प्राप्तैवेयं तव
नयकथा स्फारपीयूषवापी । तस्या मध्ये हिमकरहिमव्यूहशीते
नितान्तं निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःखदावोपतापाः ॥ ६ ॥ पाद-
न्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं हेमाभासो भवति सुरभिः

श्रीनिवासश्च पद्मः । सर्वाङ्गेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे
 श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यत्नमामभ्युपैति ॥ ७ ॥ पश्यन्तं त्वद्वचनम-
 मृतं भक्तिपात्रा पिबन्तं कर्मरण्यात्पुरुषसमानंदधाम प्रविष्टम् ।
 त्वां दुर्वारस्मरमदहरं त्वत्प्रसादैकमूर्ध्नि क्रूराकाराः कथमिव रुजा-
 कण्टका निलुठन्ति ॥ ८ ॥ पाषाणात्मा तदितरममः केवलं रत्नमूर्तिं
 र्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः । दृष्टिपातो हरति स
 कथं मानरोगं नराणां प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्त्वस्य तच्छक्तिहेतुः
 ॥ ९ ॥ हृद्यः पातो मरुदपि भवन्मूर्तिशैलोपवाही सद्यः पुंसां निरव-
 धिरुनाधूलिबंधं धुनोति ध्यानाहृतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं प्रविष्ट-
 स्तस्याश्वयः क इह भुवने देवलोकोपकारः ॥ १० ॥ जानासि त्वं
 मम भवभवे यच्च यादृक्च दुःखं जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रव-
 क्षिप्तिर्नष्ट । त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या यत्
 कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ॥ ११ ॥ पापदैवं तव नुतिपदै
 र्जीवकेनोपदिष्टैः पापाचारी मरणसमये सारमेयोऽपे सौख्यम् । कः
 संदेहो यदुपलभते वासवश्रीपभुत्वं जरुपञ्जाप्यैर्मणिभिरमग्रेस्त्वन्नम-
 स्कारचक्रम् ॥ १२ ॥ शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्य-
 नीचा भक्तिर्नो चेदनवधिसुखा वञ्चिका कुञ्चिकेयम् । शक्योद्घाटं
 भवति हि कथं मुक्तिकामस्म पुंसो मुक्तिद्वारं परिदृढमहामोहमुदा-
 कवाटम् ॥ १३ ॥ प्रच्छन्नः खल्वयमयैरन्वक्तौः समन्तात् प-
 न्था मुक्तेः स्थपुटितपदः श्लेशगर्तैरगावैः । तत्कस्तेन व्रजति
 सुखतो देव तत्त्रावभासी यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारतीरत्नदीपः
 ॥ १४ ॥ आत्मज्योतिर्निधिरनवधिर्दण्डुरानन्दहेतुः कर्मक्षोणीपटल-
 पिहितो याऽनवाप्यः परेषाम् । हस्ते कुर्वन्त्यनति चिरत्तस्तं भवंद्भ

क्तिभाजः स्तोत्रैर्बन्धप्रकृतिपुरुषोद्दामघात्री खनित्रैः ॥ १९ ॥
 प्रत्युत्पन्नानयहिमगिरेरायता चामृताब्धेर्या देव त्वत्पदकमलयोः
 सज्जता भक्तिगङ्गा । चेतस्तस्यां मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालितांशः
 क्लृप्तार्थं यद्भवति किमियं देव संदेहभूमिः ॥ १३ ॥ पादुर्मृत स्थिरप-
 दसुख त्वामनुध्यायतो मे तस्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्धि-
 वरूपा । मिथ्यैवेयं तदपि तनुने तृप्तिमन्त्रैश्चरुणां दोष त्मानोऽप्यभि-
 मतफलास्त्वत्प्रसादाद्भवन्ति ॥ १७ ॥ मिथ्यावादं मलमपनुदःसप्तभं-
 गोतरगैर्वागम्भोर्धिसुवनमखिलं देव पर्येति यस्ते । तस्यावृत्तिं सपदि
 विबुधप्वेत्तसैवाचलेन व्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति
 ॥ १८ ॥ आहार्यैर्मयः स्पृश्यति परं यः स्वभावादहृद्यः शस्त्रग्राही
 भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः । सर्वाङ्गेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न
 शक्यः परेषां तत किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैरुदरैः ॥ १९ ॥
 इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां न तथा श्लाघनं ते तस्यैवेयं भवत्यकरी
 श्लाघ्यतामातनोति । त्वं निस्तरि जननमलयेः सिद्धिघ्नान्ताप-
 त्तिरत्वं त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ॥ २० ॥
 वृत्तिर्वाचमररसदृशी न त्वमन्ये न तुर्यस्तुत्युद्धारः कथमिव तत-
 र्त्तद्व्यमी नः क्रमन्ते । मैवं भूवंस्तपि भगवन्मक्तिर्पूवशुष्टास्ते
 अव्यानामभिमतफलाः पारिजाता भवन्ति ॥ २१ ॥ कोपावेशो न तव
 न तव कारि देवप्रसादो व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्ष्यैवानपेक्षम् ।
 आज्ञादशं तदपि भुवनं संनिधिर्देवहारी केवं भूतं भुवनतिलक ।
 प्रामर्शं त्वत्परेषु ॥ २२ ॥ देव स्तोतुं त्रिदिवगणिकामण्डलीगीतकीर्तिं
 तोतुं त्वां सकलमिषयज्ञानमूर्तिं जनो यः । तस्य क्षेमं न पदमटतो
 जातु जोहति पन्थास्तत्त्वग्रन्थस्मरणविषये नैव मोमूर्तिं मर्त्यः ॥ २३ ॥

चित्ते कुर्वन्निरवधिमुखज्ञानदृग्वीर्य रूपं देव त्वां यः समयनियमा-
दादरेण स्तवीति । श्रेयोमाग स खलु मुकृति तावता पूरयित्वा
कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम् ॥ २४ ॥ भक्तिप्रद्वम-
हेन्द्रपूजितपद त्वत्कीर्तने न क्षमाः, सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि संयमभृतः
के हन्त मन्दा वयम् । अस्माभिः स्तवनच्छलेन तु परस्त्वय्यादर-
स्तन्यते स्वात्माधीनमुखेषिणां स खलु नः कल्याणकल्पद्रुमः ॥ २५ ॥
वादिराजमनु शब्दिकलोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः । वादि-
राजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्यसहायः ॥ २६ ॥

इति श्रीवादिराजकृतमकीभावस्तोत्रम् ।

[२] स्वयंभूस्तोत्रभाष्यः ।

राजविषे जुगलनि सुख किया । राज त्याज भवि शिवपद लिया ॥
स्वयंबोध स्वंभू भगवान् । वंदौ आदिनाथ गुणखान ॥ १ ॥
इन्द्र क्षीरसागरमल लाय । मेरु न्हुवाये गाय वनाय ।
मदन विनाशक सुख करंतार । वंदौ अनित अनितपदकार ॥ २ ॥
शुक्लध्यानकरि करम विनाशि । घात अघाति सकल दुखराशि ॥
लहो मुक्तिपद सुख अविकार । वंदौ शंभव भवदुख टार ॥ ३ ॥
माता पच्छिम रयनमंझार । सुपने सोलह देखे सार ॥
भूप पूछि फल सुनि हरषाय । वंदौ अभिनंदन मनलाय ॥ ४ ॥
सब कुवादबादी सरदार । जीते स्यादवाद धुनिघार ॥
जैनधरम परकाशक स्वाम् । सुमतिदेवपद करहुं प्रनाम ॥ ५ ॥
गर्भअगाल धनपति आय । करी नगरशोभा अधिकाय ॥
वर्षे रतन पंचदश मास । नमौ पदमप्रभु सुखकी रास ॥ ६ ॥

जाकी निजथुति कवहुं न होय । वंदौ अरजिनवर पद होय ॥ १८ ॥
 परभव रतनत्रय अनुराग । इस भव व्याहसमय बैराग ॥
 बालब्रह्म पूरन व्रत धार । वंदौ मल्लिनाथ जिनसार ॥ १९ ॥
 विन उपदेश स्वयं बैराग । थुति लौकांत करै पग लाग ॥
 नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहि । वंदौ मुनिसुव्रत व्रत देहि ॥ २० ॥
 श्रावक विद्यावंत निहार । भगतिभावसौं दियो अहार ॥
 वरसे रतनराशि ततकाल । वंदौ नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥
 सब जीवनकी वंदी छोर । रागदोष दो वंदन तोर ॥
 रज मति तज शिवतियसौं मिले । नेमिनाथ वंदौ सुखनिले ॥ २२ ॥
 दैत्य कियो उपसर्ग अपार । ध्यान देख आयो फणिधार ॥
 गयो कमठ शठ मुखकर श्याम । नमौ मेरुसम पारसस्वाम ॥ २३ ॥
 भवसागरतैं जीव अपार । धरमगोतमें बरे निहार ॥
 झुनत काढ़े दया विचार । वर्द्धमान वंदौ बहुवार ॥ २४ ॥
 दोहा—चौबीसौं पदकमलजुग, वंदौ मनबचनकाय ।
 'धानत' पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सुहाय ॥ २५ ॥

(३) बृहत्स्वयंभूतस्तोत्र ।

(श्रीमद्भगवद्वादिगजकेसरी स्वामी समन्तभद्राचार्य विरचित)

स्वयंभुवा भूतहितेन भूतले समस्तसज्जनविभूतिचक्षुषा ।
 विराजितं येन विधुन्वतां तमः क्षपाकरेणैव गुणात्करैः करैः ॥ १ ॥
 प्रभापतिर्यः प्रथमं जिनीविषुः शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।
 प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो ममत्वतो निर्दिविदे विदांवरः ॥ २ ॥
 विहाय यः सागरचारिवांससं बधूभिर्वेमां वसुधाबंधूं संतीम् ।

बंधश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतुः बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।

स्याद्वादिनो नाथ ! तवैव युक्तं नैकान्तदृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ॥ १४

शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तिः स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशोऽज्ञः ।

तथापि भक्त्या स्तुतपादपद्मो ममार्य ! देयाः शिवतातिमुच्चैः ॥ १५ ॥

इति संभवजिनस्तोत्रम् ।

गुणाभिनन्दादभिनन्दनो भवान् दयावधूं क्षांतिसखीमशिश्नयत् ।

समाधितन्त्रस्तदुपोपपत्तये द्वयेन नैर्ग्रन्थ्यगुणेन चायुजत् ॥ १६ ॥

अचेतने तत्कृतबन्धनेऽपि च ममेदमित्याभिनिवेशकग्रहात् ।

प्रभंगुरे स्थावरनिश्चयेन च क्षतं जगत्तत्त्वमजिग्रहद्ववान् ॥ १७ ॥

क्षुद्रादिदुःखप्रातिकारतः स्थितिर्न चेन्द्रियार्थप्रमवाल्लसौख्यतः ।

ततो गुणो नास्ति च देह देहिनोरितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ॥ १८

जनोऽतिलोलोऽप्यनुबन्धदोषतो भयादकार्योऽपि न प्रवर्तते ।

इहाप्यमुत्राप्यनुबन्धदोषवित्कथं सुखे संसृजतीति चाब्रवीत् ॥ १९ ॥

स चानुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृतृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः

इति प्रभो ! लोकाहितं यतो मतं ततो भवानेव गतिः सतां मतः २०

इत्यभिनन्दनजिनस्तोत्रम् ।

अन्वर्थसंज्ञः सुमतिर्मुनिस्त्वं स्वयं मतं येन सुयुक्तिनीतम् ।

यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति सर्वक्रियाकारकतत्त्वभिद्धिः ॥ २१ ॥

अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं भेदान्वयज्ञानमिदं हि सत्यम् ।

मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे तच्छेषलोपोऽपि ततोऽनुपाख्यम् ॥ २२

सतः कथाश्चित्तदसत्त्वशक्तिः खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।

सर्वस्वभावच्युतमप्रमाणं स्ववाग्विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ॥ २३ ॥

न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति न च क्रियाकारकमत्र युक्तम् ।

नैवासतो जन्म सतो न नाशो दीपस्तमःपुद्गलभावतोऽस्ति ॥ २४ ॥

विधिनिषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ विवक्षया मुख्यगुणव्यवस्था ।

इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं मतिप्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ! ॥१९॥

इति सुमतिजिनस्तोत्रम् ।

पद्मप्रमः पद्मपलाशलेख्यः पद्मालयांलिङ्गितचारुमूर्तिः ।

वभौ भवान् मव्यपयोरुहाणां पद्माकराणांमिव पद्मवंधुः ॥२६॥

वभार पद्मां च सरस्वतीं च भवान्पुरस्तात्प्रतिमुक्तिलक्ष्म्याः ।

सरस्वतीमेव समग्रशोभां सर्वज्ञलक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ॥२७॥

शरीरराशिप्रसरः प्रभोस्ते बालार्करश्मिच्छविरालिलेप ।

नरामराकीर्णसभां प्रभावच्छैलस्य पद्माममणेः स्वसानुम् ॥२८॥

नमस्तलं पल्लवयन्निव त्वं सहस्रपत्राम्बुजगर्भचौरः ।

पादान्बुजैः पातितमारदर्पो भूमौ प्रज्ञानां विजहर्ष भूत्यै ॥२९॥

गुणाम्बुर्धेर्बिम्बुषमप्यञ्जलं नाखण्डलात्तोतुमलं तवर्षेः ।

प्रागेव माहकिमु तातिमक्तिर्मा बालमालापयतीदमित्यम् ॥३०॥

इति पद्मप्रमस्तोत्रम् ।

स्वास्थ्यं यदात्यान्तिकमेष पुंसां स्वार्थो न भोगः परिमंगुरात्मा ।

तृषोऽनुवाङ्मान्न च तापशांतिरितीदमाख्यद्वगवान् सुपार्श्वः ॥३१॥

अजङ्गमं जङ्गमनेययन्त्रं यथा तथा जीवधृतं शरीरम् ।

बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च स्नेहो वृथात्रेति हितं त्वमाख्यः ॥३२॥

अलंघ्यशक्तिर्भवितव्यतेयं हेतुद्वयाविष्कृतकार्यलिङ्गा ।

अनीश्वरो जन्तुरहं क्रियार्तः संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ॥३३॥

विभोति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो नित्यं शिवं वाञ्छति नास्य लाभः ।

तथापि बालो भयकामवश्यो वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ॥३४॥

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान्प्रमाता मातेव बालस्य हितानुशाखा ।

गुणावलोकस्य जनस्य नेता मयापि भक्त्या परिणयसेऽद्य ॥३५॥

इति सुपार्श्वजिनस्तोत्रम् ।

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं चन्द्र द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
 वंदेऽभिवन्धं महतामृषीन्द्रं जिनं जितत्वान्तकषायबन्धम् ॥ ३६ ॥
 यस्याङ्गलक्ष्मीपरिवेषमिन्नं तमस्तमोरोरेव रश्मिभिन्नम् ।
 ननाश बाह्यं बहुमानसं च ध्यानप्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥ ३७ ॥
 स्वपक्षसौस्थित्यमदावलिता वाक्क्षिंहनादैर्विमदा बभूवुः ।
 प्रवादिनो यस्य मदार्यगण्डा गजा यथा केशरिणो निनादैः ॥ ३८ ॥
 यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवादभुतकर्मतेनाः ।
 अनन्तधामाक्षरविश्वचक्षुः समेतदुःखक्षयशासनश्च ॥ ३९ ॥
 स चन्द्रमा मव्यकुमुद्वतीनां विपन्नदोषाभ्रकलङ्कलेपः ।
 व्याकोशवाङ्मयायमयूखमालः पूयात्पवित्रो भगवान्मनो मे ॥ ४० ॥

इति चंद्रप्रभजिनस्तोत्रम् ।

एकान्तदृष्टिप्रतिषेधि तत्त्वं प्रमाणसिद्धं तदतत्स्वभावम् ।
 त्वया प्रणीतं सुविधे स्वधाम्ना नैतत्समालीढपदं त्वदन्यैः ॥ ४१ ॥
 तदेव च स्यान्न तदेव च स्यात्तथा प्रतीतेस्तव तत्कथञ्चित् ।
 नात्यन्तमन्यत्वमनन्यता च विधेर्निषेधस्य च शून्यदोषात् ॥ ४२ ॥
 नित्यं तदेवदमिति प्रतीतेर्न नित्यमन्यत्प्रतिपत्तिसिद्धेः ।
 न तद्विरुद्धं वहिरन्तरङ्गनिमित्तनैमित्तिकयोगतस्ते ॥ ४३ ॥
 अनेकमेकं च पदस्य वाच्यं वृक्षा इति प्रत्ययवत्प्रकृत्या ।
 आकाङ्क्षिणः स्यादिति वै निपातो गुणानपेक्षे नियमेऽपवादः ॥ ४४ ॥
 गुणप्रधानार्थमिदं हि वाक्यं जिनस्य ते तद्द्विषतामपथ्यम् ।
 ततोऽभिवन्धं जगदीश्वराणां ममापि साधोस्तव पादपद्मम् ॥ ४५ ॥

इति सुविधिजिनस्तोत्रम् ।

इति निरुपमशुक्तिशासनः प्रियहितयोगगुणानुशासनः ।

अरजिनदमतीर्थनायकस्त्वमिव सतां प्रतिबोधनायकः ॥ १०४ ॥

मतिगुणविभवानुरूपतस्त्वयि वरदागमः षट्छिरूपतः ।

गुणकृशमपि किञ्चनोदितं मम भवता दुरिताशनोदितम् ॥ १०५ ॥

इत्यरजिनस्तोत्रम् ।

यस्य महर्षेः सकल्पदार्थप्रत्यवबोधः समजनि साक्षात् ।

सामरमर्त्यं जगदपि सर्वं प्राञ्जलिभूत्वा प्राणिपतति स्म ॥ १०६ ॥

यस्य च मूर्तिः कनकमयीव स्वस्फुरदामाकृतपरिवेया ।

वागपि तत्त्वं कथयितुकामा स्यात्पदपूर्वा रमयति साधून् ॥ १०७ ॥

यस्य पुरस्ताद्विगलितमाना न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते ।

भूरपि रम्या प्रतिपदमासीज्जातविकोशाम्बुजमृदुहासा ॥ १०८ ॥

यस्य समन्ताज्जिनशिशिरांशोः शिष्यकसाधुग्रहविभवोऽमृतः ।

तीर्थमपि स्वं जननसमुद्रत्रासितसत्त्वोत्तरणपथोऽग्रम् ॥ १०९ ॥

यस्य च शुद्धं परमतोऽग्निर्ध्यानमनन्तं दुरितमघाक्षीत् ।

तं जिनसिंहं कृतकरणीयं महिमशाल्यं शरणमितोऽभि ॥ ११० ॥

इति मल्लिजिनस्तोत्रम् ।

अविगतमुनिमुन्नतस्थितिर्मुनिवृषभो मुनिमुन्नतोऽनघः ।

मुनिपरिषदि निर्वर्भौ भवानुडुपरिपत्परिवीतसोमवत् ॥ १११ ॥

परिणतशिखिकण्ठरागया कृतमदानिग्रहविग्रहाभया ।

भवजिनतपसः प्रसूतया ग्रहपरिवेपरुचेव शोभितम् ॥ ११२ ॥

शशिरुचिशुचिशुक्लोहितं सुरभितरं विरजो निजं वपुः ।

तव जिवमतिविस्मयं यते यदपि चं वाञ्छनसोऽयमीहितम् ॥ ११३ ॥

स्थितिजनननिरोधलक्षणं चरमचरं च जगत्प्रतिक्षणम् ।

इति जिनसकलज्ञलाञ्छनं वचनभिदं वदतां वरस्य ते ॥ ११४ ॥

दुरितमलकलङ्कमष्टकं निरुपमयोगबलेन निर्देहन् ।

अभवदभवसौख्यवान् भवान् भवतु ममपि भवोपशान्तये ॥ ११५ ॥

इति मुनिपुत्रतजिनस्तोत्रम् ।

स्तुतिस्तोत्रः साधोः कुशलपरिणामाय स तदा

भवेन्मा वा स्तुत्यः फलमपि ततस्तस्य च सतः ।

किमेवं स्वाधीनाज्जगति सुलभे श्रायसपथे.

स्तुयान्नत्वा विद्वान्सततमपि पूज्यं नमिजिनम् ॥ ११६ ॥

त्वया धमिन् ब्रह्मप्राणिधिमनसा जन्मनिगलं

समूलं निर्भिन्नं त्वमासि बिंदुषां मोक्षपदनी ।

त्वयि ज्ञानज्योतिर्विभवकिरणैर्भाति भगव-

न्नभूवन् खद्योता इव शुचिरवावन्यमतयः ॥ ११७ ॥

विधेयं वार्यं चानुभयमुभयं मिश्रमपि तत्

विशेषैः प्रत्येकं तनयमविषयैश्चापरिमितैः ।

सदान्योन्यापेक्षैः सकलमुवनज्येष्ठगुरुणा

त्वया गीतं तत्त्वं बहुनयविवक्षेतरवशात् ॥ ११८ ॥

आर्हिसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमं

नसांतत्रारम्भोस्त्यगुरपि च यत्राश्रमविधौ ।

ततस्तत्सिद्ध्यर्थं परमकरुणो ग्रन्थमुभयं

भवानेवात्याक्षीन्न च विकृतवेषोपधिरतः ॥ ११९ ॥

वपुर्भूषावेषव्यवधिरहितं शान्तिकरणं

यतस्ते संचष्टे स्मरशराविषातङ्कविजयम् ।

विना भीमैः शस्त्रैरदयहृदयामर्षविलयं ।

ततस्त्वं निर्मोहः शरणमसि नः शान्तिनिलयः ॥ १२० ॥

इति नमिजिनस्तोत्रम् ।

भगवानृषिः परमयोगदहनद्रुतकल्मषेन्धनम् ।
 ज्ञानविपुलकिरणः सकलं प्रतिबुध्य बुद्धः कमलायतेक्षणः ॥ १११ ॥
 हरिवंशकेतुरनवद्यविनयदमतीर्थनायकः ।
 शीलजलधिरभवो विभवस्त्वमरिष्टनेमिजिनकुंजरोऽमरः ॥ ११२ ॥
 त्रिदशेन्द्रमोलिमगिरत्नकिरणनिसरोपचुम्बितम् ।
 पादयुगलममलं भवतो विकसतकुशेक्षयदलारुणोदरम् ॥ ११३ ॥
 नखचन्द्ररश्मिकवचातिरुचिरागित्वराङ्गुलिस्थलम् ।
 स्वार्थनियतमनसः सुधियः प्रममन्ति मन्त्रमुखरा महर्षयः ॥ ११४ ॥
 श्रुतिमद्रथाङ्गरनिविम्बाकिरणजालिशुमण्डलः ।
 नीलजलजदलाशिवपु सहबन्धुभिर्गुरुडकेतुरीश्वरः ॥ ११५ ॥
 हलभृच्च ते स्वजनमक्तिमुदितहृदयौ जिनेश्वरौ ।
 धर्मविनयरसिकौ सुतरां चरणारविन्दयुगलं प्रणेमतुः ॥ ११६ ॥
 ककुदं भुवः खचरयोपिदुपितशिखरैरलङ्कृतः ।
 मेघपटलशरिवीततटस्तत्र लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा ॥ ११७ ॥
 वहतीति तीर्थमृषिभिश्च सततमभिगम्यतेऽद्य च ।
 प्रीतिविततहृदयैः परितो भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः ॥ ११८ ॥
 बहिरन्तरप्युभयथा च करणमविधाति नार्थक्यम् ।
 नाथ युगपदखिलं च सदा त्वामिदं तलामलकवाह्विवेदिथ ॥ ११९ ॥
 अतएव ते बुधनुत्तस्य चरितगुणमद्भुतोदयम् ।
 न्यायविहितमवधार्यजिने त्वयि सुप्रसन्नमनसःस्थिता वयं ॥ १२० ॥
 इत्यरिष्टनेमिजिनस्तोत्रम् ।
 तमालनीलैः सधनुस्तडिद्गुणः प्रकीर्णभीमाशनिवायुशृष्टिभिः ।
 बलाहकैर्वैरिविशैरुपद्रुतो महामना यो न चचाल योगतः ॥ १२१ ॥

बृहत्फणामण्डलमण्डपेन यं स्फुरत्तडितिरङ्गरुचोपसर्गिणाम् ।
 जुगुह नागो धरणो धराधरं विरागसन्ध्यातडिदम्बुशे यथा ॥ १३२ ॥
 स्वयोगनिस्त्रिंशनिशातधारया निशात्य यो दुर्जयमोहविद्विषम् ।
 अवापदार्ढन्त्यमचिन्त्यमद्भुतं त्रिलोकपूजातिशयास्पदं पदम् ॥ १३३ ॥
 यमीश्वरं वीक्ष्य विधूतकरुषं तपोधनास्तेऽपि तथा बुभुषवः ।
 वनौकसः स्वश्रमवन्ध्यबुद्ध्यः शमोपदेशं शरणं प्रपेदिरे ॥ १३४ ॥
 स सत्यविद्यातपसां प्रणायकः समग्रधीरुग्रकुलाम्बरांशुमान् ।
 मया सदा पार्श्वजिनः प्रणम्यते विलीनमिथ्यापथदृष्टिविभ्रमः ॥ १३५ ॥
 इति पार्श्वजिनस्तोत्रम् ।

कीर्त्या भुवि भासितया वीर त्वं गुणसमुच्छ्रया भाभितया ।
 भासोद्भुसभासितया सोम इव व्योम्नि कुन्दशोभासितया ॥ १३६ ॥
 तव जिनशासनविभवो जयति कलावपि गुणानुशासनविभवः ।
 दोषकशासनविभवः स्तुवंति चैनं प्रभाकृशासनविभवः ॥ १३७ ॥
 अनवद्यः स्याद्वादस्तव दृष्टेष्टाविरोधतः स्याद्वादः ।
 इतरो न स्याद्वादो सद्द्वितयविरोधान्मुनीश्वराऽस्याद्वादः ॥ १३८ ॥
 त्वमसि सुरासुरमहितो ग्रंथिकसत्त्वाशयप्रणामामहितः ।
 लोकत्रयपरमहितोऽनावरणज्योतिरुज्ज्वलद्वामहितः ॥ १३९ ॥
 सम्भ्योनामभिरुचितं ददासि गुणभूषणं श्रिया चारुचितम् ।
 मग्नं स्वयां रुचिरं जयति च मृगकञ्चनं स्वकान्त्या रुचितम् ॥ १४० ॥
 त्वं जिन ! गतमदमायस्तव भावानां मुमुक्षुकाममदमायः ।
 श्रेयान् श्रीमदमायस्त्वया समादेशि सप्रयामदमायः ॥ १४१ ॥
 गिरिमित्यवदानवतः श्रीमत इव दन्तिनः श्रवदानवतः ।
 तव शमवादानवतो गतमूर्ध्नि तमपगतमवादानवतः ॥ १४२ ॥

बहुगुणसंपदसकलं परमतमपि मधुरवचनविन्यासकलेम् ।

नयमत्तयवतंसकलं तव देव ! मतं समन्तमदं सकलम् ॥ १४१ ॥

यो निःशेषजिनोक्तधर्मविषयः श्रीगौतमः यैः कृतः

सुक्तार्थैरमलैः स्तवोयमसमः स्वल्पैः प्रसन्नैः पदैः ।

तद्वचस्पृशानमदो यथाह्यवगतः किञ्चित्कृतं लेखतः

स्थेयैश्चन्द्रदिवाकरावधि बुधप्रहादचेतस्यकम् ॥

(४) ब्रह्मसंघम् ।

(श्रीमन्नेमिचन्द्र सि० चक्रवर्ती विरचित)

जीवमजीवं दद्वं निणवरवसहेण जेण णिदिद्वं ।

देविद्विद्वद्वं दं दे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥

जीवो उवओगमओ अमुत्ति अत्ता सदेहपरिमाणो ।

ओत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोद्वंगई ॥ २ ॥

तिकाले चवुपणा इंदिय चळमाठ आणणणो य ।

ववहारा सो जीवो णिच्चयणयदो दु चेदणा मंस्स ॥ ३ ॥

उवओगो दुवियप्पो दसणं णाणं च दंमणं चटुंवां ।

चक्खु अजक्खु ओही दंसणमव केवलं जेयं ॥ ४ ॥

णाणं अट्टवियप्पं मदिसुदओही अणाणजाणि ।

मणपंजय केवलमवि पच्चक्खंपरोक्खमेयं च ॥ ५ ॥

अट्टचटुणाणदंसणं सामणं जीवलंक्खणं मणिमं ।

ववहारा सुदणया सुदं पुण दंसणं णं, णं ॥ ६ ॥

वण्ण रस पंच गंधा दो फासा अट्ट णिच्चया जीवे ।
 णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति वंधादो ॥ ७ ॥
 पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्चयदो ।
 चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥
 ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फकं पमुंजे दे ।
 आदा णिच्चयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ॥ ९ ॥
 अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा ।
 अससुहदो ववहारा णिच्चयणयदो असंखदेसो वा ॥ १० ॥
 पुढविज्जकतेउवाऊवणप्फदी विविहयावरेइंदी ।
 विगतिगचदुपंचक्खा तसुजीवा होति संखादी ॥ ११ ॥
 समणा अमणा णेया पंचेदिय णिम्मणां परे सव्वे ।
 चादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥ १२ ॥
 मग्गणगुणठाणेहिं य चउंदसहिं हवंति तह असुद्धणया ।
 विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा दु सुद्धणया ॥ १३ ॥
 णिकम्मा अट्टगुणा किंचूणां चरमदेहदो सिद्धा ।
 कोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयेहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥
 अज्जीवो पुण णेओ पुग्गलं भम्मो अबम्म आयासं ।
 कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥ १५ ॥
 सहो वंधो सुहुमो थूलो संठाणमेदतमछाया ।
 उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जायां ॥ १६ ॥
 गइपरिणयाण भम्मो पुग्गलजीवाण गमणसंहयारी ।
 तोयं अह मच्छाणं अचछंता णेवं सी णेई ॥ १७ ॥
 ठाणजुदाण अबम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी ।

वर्तयितुं प्रभवन्ति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ॥ ३८ ॥

अमरामुरारपतिभिर्यमघरपतिभिश्च नृत्तगदाम्भोजाः ।

दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः ॥ ३९ ॥

शिवमजरमरुनमक्षयमव्याबाधं विशोकमयशङ्कम् ।

काठागतसुखविद्याधिभवं विमलं भजंति दर्शनशरणाः ॥ ४० ॥

देवेन्द्रचक्रमदिमानममेयमानम्

राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्रशिरोर्चनीयम् ।

धमेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकम् ।

लब्ध्वा शिवं च भिनभक्तिरूपैति भव्यः ॥ ४१ ॥

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात् ।

निःसंदेहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥ ४२ ॥

प्रथमानुयोगमर्याख्यानं चरितं पुगाणमपि पुण्यम् ।

बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः ॥ ४३ ॥

लोकालोकविमर्त्तेयुगपरिवृत्तेश्रुतगतीनां च ।

आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षांगम् ।

चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विनानाति ॥ ४५ ॥

जीवाजीवसुतत्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च ।

द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥ ४६ ॥

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः ।

रागद्वेषनिवृत्त्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥

रागद्वेषनिवृत्तेर्हिमादिनिवर्त्तना कृता भवति ।

अनपेक्षितार्थवृत्तिः क्रः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥

हिंसानृतचौम्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च ।
 पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्र्यम् ॥ ४९ ॥
 सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानाम् ।
 जनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानाम् ॥ ५० ॥
 गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणशिक्षाव्रतात्मकं चरणम् ।
 पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासङ्ख्यमाख्यातम् ॥ ५१ ॥
 प्राणातिपातवित्तव्याहारस्तेयकाममूच्छेभ्यः ।
 स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥
 संकल्पाकृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्त्वान् ।
 न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥
 छेदनबन्धनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः ।
 आहारवारणापि च स्थूलवधादव्युपरतेः पञ्च ॥ ५४ ॥
 स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विषदे ।
 यत्तद्वदन्ति सन्तः स्थूलमृषावादवैरमणम् ॥ ५५ ॥
 परिवादरहोम्याख्या पैशून्यं कूटलेखकरणं च ।
 न्यासापहारितापि च व्यतिक्रमाः पञ्च सत्यस्य ॥ ५६ ॥
 निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं ।
 न हरति यत्नं च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणम् ॥ ५७ ॥
 चौरप्रयोगचौरार्थादानविलोपसदृशसन्मिश्राः ।
 हीनाधिकविनिमानं पञ्चास्ते ये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥
 सा तु परदारान् गच्छति न परान् गमयति न प्रापभीतेर्यत् ।
 सा परदारनिवृत्तिः स्वदारसन्तोषनामापि ॥ ५९ ॥
 अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडावित्त्वविपुलतृषाः ।

इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पञ्च व्यतीचाराः ॥ ६० ॥
 घनघान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निरुद्धता ।
 परिमितपरिग्रहः स्पादिच्छापरिमाणनामापि ॥ ६१ ॥
 अतिबाह्यतातिसंग्रहविस्मयलोभातिमारवहनानि ।
 परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पञ्च कक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥
 पञ्चाणुव्रतनिर्घयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं ।
 यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥
 मातंगो घनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः ।
 नीली जयश्च संप्राप्ता पूजातिशयमुत्तमम् ॥ ६४ ॥
 घनश्रोतस्यघोषौ च तापसा रक्षकावपि ।
 उपाख्येयास्तथा स्मश्रुनवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥
 मध्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकम् ।
 अष्टौ मूलमूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥ ६६ ॥
 दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणम् ।
 अनुवृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ६७ ॥
 दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्मामि ।
 इति सङ्कल्पो दिग्व्रतमामृत्युणुपापविनिवृत्तैः ॥ ६८ ॥
 मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः ।
 प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥
 अवधेर्वहिरणुं पापप्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम् ।
 पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥
 प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः ।
 सत्त्वेन दुरवधारा महाव्रताथ प्रकल्प्यन्ते ॥ ७१ ॥

पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःक्रयैः ।
 कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महताम् ॥ ७२ ॥
 ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनाम् ।
 विस्मरणं दिग्विस्मरणं रत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥ ७३ ॥
 अम्यन्तरं दिग्विस्मरणं पार्थिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः ।
 विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्ब्रतधराप्रणयः ।
 पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पञ्च ।
 ग्राह्यः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥ ७५ ॥
 तिर्यक्कलेशवाणिज्याहिंसारम्भप्रकम्भनादीनाम् ।
 कथापसङ्गप्रसवः स्मर्त्तव्यः पापउपदेशः ॥ ७६ ॥
 परशुकृपाणस्तनित्रज्वरनायुषशृङ्गशृङ्गकादीनाम् ।
 बधहेतूनां दानं हिंसादानं द्युबन्ति दुष्ठाः ॥ ७७ ॥
 बन्धवधच्छेदादेर्हेषाद्रागाश्च परकलत्रादेः ।
 आध्यानमपध्यानं क्षासति मिनक्षासने विशदाः ॥ ७८ ॥
 आरम्भसङ्गसाहसमिथ्यात्वेद्वेषरागमदमदनैः ।
 चेतःकलुषयतां श्रुतिविरधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥ ७९ ॥
 क्षितिसकलिकदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं ।
 सरणं सारणमपि च प्रमादचर्या प्रमादन्ते ॥ ८० ॥
 क्रन्दर्पं क्रीत्कुच्यं मौल्यमतिप्रसाधनं पञ्च ।
 असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्भिरतेः ॥ ८१ ॥
 अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् ।
 अनर्थवतामध्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥ ८२ ॥
 सुक्त्वा परिहातव्यो भोगो मुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः ।

उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ८१ ॥
 त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये ।
 मद्यं च वर्जनीयं निजचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८४ ॥
 अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि ।
 नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥ ८५ ॥
 यदनिष्टं तदव्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात् ।
 अभिसंधिकृता विरतिर्विषयाद्योग्यादव्रतं भवति ॥ ८६ ॥
 नियमो यमश्च विहितौ द्वेषा भोगोपभोगसंहारात् ।
 नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८७ ॥
 भोजनवाहनशयनस्नानपवित्रांगरागकुसुमेषु ।
 ताम्बूलवसनमूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥
 अथ दिवा रजनी वा पक्षौ मासस्तथर्तुरयनं वा ।
 इति कालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ८९ ॥
 विषयविषयानुपेक्षानुस्मृतिरतिलौक्यमतिवृषाऽनुभवौ ।
 भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमाः पंच कथ्यन्ते ॥ ९० ॥
 देशावकाशिकं वा सामायिकं प्रोषधोपवासो वा ।
 वैयावृत्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ९१ ॥
 देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य ।
 प्रत्यहमणुव्रतानां प्रतिसंहारो विशालस्य ॥ ९२ ॥
 गृहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदारयोजनानां च ।
 देशावकाशिकस्य स्मरन्ति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥ ९३ ॥
 संवत्सरमृत्तुरयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च ।
 देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ ९४ ॥

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपंचपापसत्यागात् ।
 देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥ ९९ ॥
 प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ ।
 देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पंच ॥ ९९ ॥
 आसमयमुक्तिमुक्तं पंचाषानामशेषभावेन ।
 सर्वत्र च सामयिकाः सामयिकं नाम शंसति ॥ ९७ ॥
 मूर्धरुहमुष्टिवासोबंध पर्यकबंधनं चापि ।
 स्थानमुपवेशनं वा ममयं जानंति समयज्ञाः ॥ ९८ ॥
 एकंति सामयिकं निर्व्याक्षेपे बनेषु वास्तुषु च ।
 चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥ ९९ ॥
 व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्त्यामंतरात्मविनिवृत्त्या ।
 सामायिकं वध्नीयादुपवासे चैकमुक्ते वा ॥ १०० ॥
 सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेत्तव्यं ।
 व्रतपचक्रपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ १०१ ॥
 सामायिके सारम्भाः परिग्रहा नैव संति सर्वेऽपि ।
 चेलोपसृष्टमुचिरिव गृही तदा याति यतिमावं ॥ १०२ ॥
 शीतोष्णदंशमशकपरीषहमुपसर्गमपि च मौनधराः ।
 सामयिकं प्रतिपन्ना अधिक्नुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ १०३ ॥
 अशरणमशुभमनित्यं दुःस्वमनात्मानमावसामि भवम् ।
 मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥
 बाकायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे ।
 सामायिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पंचभावेन ॥ १०५ ॥
 पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु ।

चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदेच्छाभिः ॥ १०६ ॥
 पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणाम् ।
 खानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ १०७ ॥
 धर्माभृतं सत्पुण्यः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्धान्यान् ।
 ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालु ॥ १०८ ॥
 चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः ।
 स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥
 ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे ।
 यत्प्रोषधोपवासव्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदम् ॥ ११० ॥
 दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये ।
 अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥
 व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात् ।
 वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम् ॥ ११२ ॥
 नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन ।
 अपसूनारम्भाणामायाणामिष्यते दानम् ॥ ११३ ॥
 गृहकर्मणापि निश्चितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम् ।
 अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥
 उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा ।
 भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥
 क्षितिगन्तमिव वटवीमं पात्रगतं दानमरूपमपि काले ।
 फलतिच्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृतां ॥ ११६ ॥
 आहारोषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन ।
 वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्ताः ॥ ११७ ॥

श्रीषेणवृषभसेनौ कौण्डेशः शुंकरश्च दृष्टान्तौ ।
 वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्यै मन्तव्याः ॥ ११८ ॥
 देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणम् ।
 कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृष्टौ नित्यं ॥ ११९ ॥
 अर्हचरणसपर्यामहोनुभावं महात्मनामिवदत् ।
 मेकः प्रमोदमत्तः कुंसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥
 हरतिपिधाननिधाने क्षनादरोस्मरणमेत्सरत्वा नि
 वैयावृत्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥
 उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुगायां च निष्पत्तीकारे ।
 धर्माय तनुविमोचनभाहुः सल्लेखनामार्याः ॥ १२२ ॥
 अन्तःक्रियाधिकरणं तपःफलं सकलदर्शिनः स्तुवते ।
 तस्माच्चावद्विभवं समाधिमरणे प्रयतितव्यं ॥ १२३ ॥
 स्नेहं वैरं सङ्गं परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः ।
 स्वजनं परिजनमपि च क्षान्त्वा क्षमयेत्स्मियैवचने ॥ १२४ ॥
 आलोच्य सर्वमेन कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजं ।
 आरोपयेन्महाव्रतमामरणस्थायि निश्शेषं ॥ १२५ ॥
 शोकं मयमवसादं स्नेहं कालुष्यमरुप्रिमापि हित्वा ।
 सत्त्वोत्साहमुदीर्य च मनः प्रसाद्य श्रुतैरमृतैः ॥ १२६ ॥
 आहारं परिहाप्य क्रमशः क्षिप्तं विवर्द्धयेत्पानम् ।
 क्षिप्तं च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥ १२७ ॥
 खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
 पञ्चनमस्कारमनांस्तनुं त्यजेत्सर्वयत्नेन ॥ १२८ ॥
 जीवितमरणाशंसाभयमिन्द्रस्मृतितिनिदाननामानः ।

सल्लेखनातिचारो पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः ॥ ११९ ॥
 निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तोरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् ।
 निःष्पिवातिं पातधर्मा सर्वदुःखैरनालोदः ॥ १२० ॥
 जन्मजरामयमरणैः शोकदुःखैर्मयैश्च परिमुक्तम् ।
 निर्वाणं शुद्धसुखं निःश्रेयसमिष्यते नित्यम् ॥ १२१ ॥
 विद्यादर्शनशक्तिस्वास्थ्यप्रह्लादतृप्तिशुद्धियुक्तः ।
 निरातिशयो निरवधयो निःश्रेयसमावसन्ति सुखं ॥ १२२ ॥
 कालं कल्पशतेऽपि न गते शिवानां न विक्रियां लक्ष्या ।
 उत्पातोऽपि यदि स्यात् त्रिलोकसंप्रान्तिकरणपटुः ॥ १२३ ॥
 निःश्रेयसमधिपन्नाल्लोक्यशिखामाणिश्रियं दधते ।
 निष्कट्टिकालिकाच्छविचोभीकरमासुरात्मानः ॥ १२४ ॥
 पूजार्थज्ञैश्चैर्बलपरिजनकाममोगिमूयिष्ठैः ।
 अतिशयितं मुवनमद्भुतमभ्युदयं फलति सद्धर्मैः ॥ १२५ ॥
 श्रावकपदानि देवैरेकादशं देशितानि येषु खलु ।
 स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥ १२६ ॥
 सम्यग्दर्शनशुद्धः संसारशरीरमोगानिर्वर्णः ।
 पञ्चगुरुचरणशरणो दर्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः ॥ १२७ ॥
 निरतिक्रमणमणुव्रतपञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि ।
 धारयते निःशल्या योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः ॥ १२८ ॥
 चतुरावर्तत्रितयश्चतुःप्रणामस्थितो यथाजातः ।
 सामयिको द्विनिषयास्त्रियोगशुद्धस्त्रिसन्ध्यमभिवन्द्य ॥ १२९ ॥
 पर्वदिनेषु चतुर्ध्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगुह्य ।
 प्रोषधानियमविधायी प्रणाधिपः प्रोषधानशनः ॥ १३० ॥

मूलफलशाकशास्त्राकरीरकन्दप्रसूनबीजानि ।
 नामानि योऽसिसोऽयं सचिच्चिरतो दयामूर्तिः ॥ १४१ ॥
 अन्नं पानं स्नाथं लेखं नाश्नाति यो विभावयाम् ।
 स च रात्रिभुक्तिविरतः सत्त्वेष्वनुकम्पमानमनाः ॥ १४२ ॥
 मलयीजं मलयोर्नि गलन्मलं पूतगान्धिवीमत्सम् ।
 पश्यन्नङ्गमनङ्गादिरमति यो ब्रह्मचारी सः ॥ १४३ ॥
 सेवाकृषिवाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपारमति ।
 प्राणातिपातहेतोर्योऽसाधारम्भविनिवृत्तः ॥ १४४ ॥
 बाह्येषु दशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्ममत्वव्रतः ।
 स्वस्वः सन्तोषपरः परिचित्तपंरिमहादिरतः ॥ १४५ ॥
 अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहिकेषु कर्मसु वा ।
 नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स भंतव्यः ॥ १४६ ॥
 गृहतो मुनिवनमित्वा गुरुपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य ।
 भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्रेलखण्डधरः ॥ १४७ ॥
 पापमरातिर्धर्मा बन्धुर्जविस्य चेति निश्चिन्वन् ।
 समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता भुवं भवति ॥ १४८ ॥
 येन स्वयं वीतकलङ्कविद्या दृष्टिः क्रियारत्नकरण्डभावं ।
 नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिद्विषु विष्टपेषु ॥ १४९ ॥
 सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव ।
 सुतमिव जननी मां शुद्धशोभा मुनंस्तु ॥
 कुलमिव गुणमूषा कन्यका संपुनीता—
 जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ॥ १५० ॥

(६) आलापपद्धतिः

(श्रीमद्देवमेनविरचिता)

गुणानां विस्तरं वक्ष्ये स्वभावानां तथैव च ।

पर्यायाणां विशेषेण नत्वा वीरं जिनेश्वरम् ॥ १ ॥

आलापपद्धतिर्वचनरचनाऽनुक्रमेण नयचक्रस्योपरि उच्यते ।
सा च किमर्थम् ? द्रव्यलक्षणसिद्धयर्थं स्वभावसिद्धयर्थञ्च । द्रव्याणि
कानि ? जीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालद्रव्याणि । सद्रव्यलक्षणम्,
उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् इति द्रव्याधिकारः ॥

लक्षणानि कानि ? आस्तित्वं, वस्तुत्वं, द्रव्यत्वं, प्रमेयत्वं,
अगुरुलघुत्वं, प्रदेशित्वं चेतनत्वमचेतनत्वं मूर्तत्वममूर्तत्वं द्रव्याणां
दश सामान्यगुणाः प्रत्येकमष्टावष्टौ सर्वेषाम् ।

(एकैकद्रव्ये अष्टौ अष्टौ गुणा भवन्ति । जीवद्रव्ये अचेतनत्वं
मूर्तत्वं च नास्ति, पुद्गलद्रव्ये चेतनत्वममूर्तत्वं च नास्ति, धर्माधर्मा-
काशकालद्रव्येषु चेतनत्वं मूर्तत्वं च नास्ति । एवं द्विद्विगुणवर्जिते
अष्टौ अष्टौ गुणाः प्रत्येकद्रव्ये भवन्ति ।)

ज्ञानदर्शनसुखवीर्याणि स्पर्शरसगन्धवर्णाः गतिहेतुत्वं स्थिति-
हेतुत्वमवगाहनहेतुत्वं वर्तनाहेतुत्वं चेतनत्वमचेतनत्वं मूर्तत्वममूर्तत्वं
द्रव्याणां षोडश विशेषगुणाः । षोडशविशेषगुणेषु जीवपुद्गलयोः
षडिति । जीवस्य ज्ञानदर्शनसुखवीर्याणि चेतनत्वममूर्तत्वमिति
षट् । पुद्गलस्य स्पर्शरसगन्धवर्णाः मूर्तत्वमचेतनत्वमिति षट् ।

१ सूक्ष्मा अवःश्लोचरा प्रतिकर्षणं वर्तमाना आगमप्रामाण्यदभ्युत्थान्या
अगुरुलघुगुणाः । २ क्षेत्रत्वम् अविभाज्यं पुद्गलपरमाणुनावष्टम्बम् । ३ इति
अपुस्तकेऽधिकपाठः ।

इतरेषां धर्माधर्माकाशकालानां प्रत्येकं त्रयो गुणाः । धर्मद्रव्ये गतिहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमेते त्रयो गुणः । अधर्मद्रव्ये स्थितिहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमिति । आकाशद्रव्ये अवगाहनहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमिति । कालद्रव्ये वर्तनाहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमिति विशेषगुणाः । अन्तस्थाश्चत्वारो गुणाः स्वजात्यपेक्षया सामान्यगुणा, विजात्यपेक्षया त एव विशेषगुणाः । इति गुणाधिकारः ।

गुणविकाराः पर्यायास्ते द्वेषा, स्वभावविभावपर्यायभेदात् । अगुल्लघुविकाराः स्वभावपर्यायास्ते द्वादशधा षड्वृद्धिरूपाः षड्वृद्धिः-निरूपाः । अनन्तभागवृद्धिः, असंख्यातभागवृद्धिः, संख्यातभागवृद्धिः, संख्यातगुणवृद्धिः, असंख्यातगुणवृद्धिः, अनन्तगुणवृद्धिः, एवं षड्वृद्धिरूपास्तथा अनन्तभागहानिः, असंख्यातभागहानिः, संख्यातभागहानिः, संख्यातगुणहानिः, असंख्यातगुणहानिः, अनन्तगुणहानिः, एवं षड्वृद्धिः त्रयोविधाः । विभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायाश्चतुर्विधा नरनारकादिपर्यायाः अथवा चतुरशीतिलक्षा योनयः । विभावगुणव्यञ्जनपर्याया मत्यादयः । स्वभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायाश्चरमशरीरात्किञ्चिन्न्यूनसिद्धपर्यायाः । स्वभावगुणव्यञ्जनपर्याया अनन्तचतुष्टयस्वरूपा जीवस्य । पुद्गलस्य तु व्यणुकादयो विभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायाः । रसरसान्तरगन्धगन्धान्तरादिविभावगुणव्यञ्जनपर्यायाः । अविभागीपुद्गलपरमाणुः स्वभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायः । वर्णगन्धरसैकैकाविरुद्धस्पर्शद्वयं स्वभावगुणव्यञ्जनपर्यायाः ।

अनौघनिघने द्रव्ये स्वपर्यायाः प्रतीक्षणम् ।

१ द्रव्यक्षेत्रकालमापेक्षया । २ स्वभावपर्यायाः सर्वद्रव्येषु विभावपर्याया जीवपुद्गलयोश्च ३ आद्यन्तरहिते ।

उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति जलकल्लोलवज्जले ॥ ॥

धर्माधर्मनभःकाला अर्थपर्यायगोचराः ।

व्यञ्जनेन तु संबद्धौ द्वाचन्यौ जीवपुद्गलौ ॥२॥

इति पर्यायाधिकारः । गुणपर्ययवद्भव्यम् ।

स्वभावाः कथ्यन्ते । अस्तिस्वभावः, नास्तिस्वभावः, नित्य-
स्वभावः, अनित्यस्वभावः, एकस्वभावः, अनेकस्वभावः, भेदस्वभावः,
अभेदस्वभावः, भव्यस्वभावः, अभव्यस्वभावः, परमस्वभावः, द्रव्या-
णामेकादश सामान्यस्वभावाः, चेतनस्वभावः, अचेतनस्वभावः,
मूर्तस्वभावः, अमूर्तस्वभावः, एकप्रदेशस्वभावः, अनेकप्रदेशस्वभावः
विभावस्वभावः, शुद्धस्वभावः, अशुद्धस्वभावः, उपचरितस्वभाव
एते द्रव्याणां दश विशेषस्वभावाः । जीवपुद्गलयोरेकविंशतिः चेत-
नस्वभावः, मूर्तस्वभावः, विभावस्वभावः, एकप्रदेशस्वभावः, अशुद्ध-
स्वभाव एतैः पञ्चभिः स्वभावैर्विना धर्मादित्रयाणां षोडश स्वभावाः
सन्ति । तत्र बहुप्रदेशं विना कालस्य पञ्चदश स्वभावाः ।

एकाविंशतिभावाः स्युर्जीवपुद्गलयोर्मताः ।

धर्मादीनां षोडश स्युः काले पञ्चदश स्मृताः ॥१॥

१ स्वभावलाभादच्युतत्वादिग्निराहवदस्तिस्वभावः । २ परस्वरूपेणा-
भावान्नास्तिस्वभावः ३ निज निज नानावर्ग्येषु तदेवेदमिति द्व्यस्योपल-
म्भान्नित्यस्वभावः । ४ तस्याप्यनेकपर्यायपरिणामित्वादनित्यस्वभावः । ५
स्वभावानामेकाधारत्वादेकस्वभावः । ६ गुणगुण्यादिसंज्ञाभेदाद्भेदस्वभावः ।
७ परिणामिकभावप्रधानत्वेन परमस्वभावः । ८ असद्भूतव्यवहारेण कर्मनो-
कर्मणोरपि चेतनस्वभावः । ९ जीवस्याप्यसद्भूतव्यवहारेणाचेतनस्वभावः ।
१० जीवस्याप्यसद्भूतव्यवहारेण मूर्तस्वभावः । ११ “तत्कालपर्यायाक्रान्तं
वस्तुभावो विधीयते” १२ तस्य एकप्रदेशव्यवस्थात् ।

ते कुतो ज्ञेयाः ? प्रमाणनयविवक्षातः । सम्यग्ज्ञानं प्रमाणम् ।
तद्व्याप्तिप्रत्यक्षेतरभेदात् । अवधिमनःपर्ययावेकदेशप्रत्यक्षौ । केवलं
सकलप्रत्यक्षम् । मतिश्रुते परोक्षे । प्रमाणमुक्तं । तद्वयवा नयाः ।

नयभेदा उच्यन्ते,—

णिच्छयव्यवहारणया मूलमभेयाण याण सव्वाणं ।

णिच्छय साहणहेओ दव्वयपज्जात्थिया मुणइ ॥ ४ ॥

द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिकः नैगमः, संग्रहः व्यवहारः, ऋजु-
सूत्रः, शब्दः, समभिरूढः एवंभूत इति नव नयाः स्मृताः ।
उपनयाश्च कथ्यन्ते । नयानां समीपा उपनयाः । सद्भूतव्यवहारः
असद्भूतव्यवहारः उपचरितासद्भूतव्यवहारश्चेत्युपनयास्त्रेधा ।

इदानीमेतेषां भेदा उच्यन्ते । द्रव्यार्थिकस्य दश भेदाः ।

कर्मोपाधिनिरपेक्षाः शुद्धद्रव्यार्थिको यथा मंसारी जीवः सिद्ध-
सद्वत् शुद्धात्मा । उत्पादव्ययगौणत्वेन सत्ताग्राहकः शुद्धद्रव्यार्थिको
यथा द्रव्यं नित्यम् । भेदकल्पनानिरपेक्षः शुद्धो द्रव्यार्थिको यथा
निजगुः पर्यायस्वभावाद्द्रव्यमभिन्नम् ।

कर्मोपाधिसापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथा क्रोधादिकर्मजभाव
आत्मा उत्पादव्यय-निरपेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथैकास्मिन् समये
द्रव्यमुत्पादव्ययग्राह्यात्मकम् भेदकल्पनासापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको
यथात्मनो दर्शनज्ञानादयो गुणाः अन्वयद्रव्यार्थिको यथा-गुणप-
र्यायस्वभावं द्रव्यम् स्वद्रव्यादिग्राहकद्रव्यार्थिको यथा-स्वद्रव्या-

१ निश्चयनः । द्रव्यस्थिताः व्यवहारनयाः गतिस्थिताः । २ नयादं
गृहीत्वा वस्तुनोऽनेकविकल्पत्वेन कथनमुपनयः । ३ आदिशब्देन स्वज्ञेय-
स्वकालस्वभावा प्राक्षाः ।

दिचतुष्टयापेक्षया द्रव्यमस्ति । परद्रव्यादिग्राहकद्रव्यार्थिको यथा-
परद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया द्रव्यं नास्ति । परमभावग्राहकद्रव्यार्थिको
यथा-ज्ञानस्वरूप आत्मा । अत्रानेकस्वभावानां मध्ये ज्ञानाख्यः
परमस्वभावो गृहीतः ।

इति द्रव्यार्थिकस्य दश भेदाः ।

अथ पर्यायार्थिकस्य षड्भेदा उच्यन्ते,—

अनादि नित्यपर्यायार्थिको यथा पुद्गलपर्यायो नित्यो मेवादिः
सादिनित्यपर्यायार्थिको यथा—सिद्धपर्यायो नित्यः । सत्तागौणत्वे-
नोत्पादव्ययग्राहकस्वभावो ऽ नित्यशुद्धपर्यायार्थिको यथा—समयं
समयं प्रति पर्याया विनाशिनः । सत्तासापेक्षस्वभावो ऽ नित्यशु-
द्धपर्यायार्थिको यथा—एकस्मिन् समये त्रयात्मैकः पर्यायः । कर्मो-
पाधिनिरपेक्षस्वभावो ऽ नित्यशुद्धपर्यायार्थिको यथा—सिद्धपर्या-
यसंज्ञाः शुद्धाः संसारिणां पर्यायाः । कर्मोपाधिसापेक्षस्वभावो ऽ-
नित्याशुद्धपर्यायार्थिको यथा—संसारिणामुत्पत्तिमरणे स्तः । इति
पर्यायार्थिकस्य षड्भेदाः ।

नैगमक्षेपा भूतभाविवर्तमानकालभेदात् । अतीते वर्तमानारोपणं
यत्र स भूतनैगमो यथा—अद्य दीपोत्सवदिने श्रीवर्द्धमानस्वामी
मोक्षं गतः साविनि भूतवत्कथनं यत्र स भाविनैगमो यथा—
अहंन् सिद्ध ए१ । कर्तुमारब्धमीपक्षिष्पन्नमनिष्पन्नं वा वस्तु
निष्पन्नवत्कथ्यते यत्र स वर्तमाननैगमो यथा—आदनः पच्यते
इति नैगमक्षेपा ।

१ सुवर्णं हि रजसादिरुक्तं नास्ति रजतक्षेत्रेण रजतकालेन
रजतपर्यायेण च नास्ति । २ पूर्वपर्यायस्य विनाशः, उत्तरपर्यायस्योत्पादः,
द्रव्यत्वेन ध्रुवत्वम् ।

संग्रहो द्विविधः । सामान्यसंग्रहो यथा सर्वाणि द्रव्याणि परस्परमविरोधीनि । विशेषसंग्रहो यथा—सर्वे जीवाः परस्परमविरोधिनः इति संग्रहोऽपि द्विधा ।

व्यवहारोऽपि द्वेधा । सामान्यसंग्रहभेदको व्यवहारो यथा—द्रव्याणि जीवाजीवाः । विशेषसंग्रहभेदको व्यवहारो यथा—जीवाः संसारिणो मुक्ताश्च इति व्यवहारोऽपि द्वेधा ।

ऋजुसूत्रो द्विविधः । सूक्ष्मर्जुसूत्रो यथा—एकसमयावस्थायी पर्यायः । स्थूलर्जुसूत्रो यथा—मनुष्यादिपर्यायास्तदायुःप्रमाणकालं तिष्ठन्ति इति ऋजुसूत्रोऽपि द्वेधा ।

शब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः प्रत्येकमेकैका नयाः । शब्दनयो यथा दारा भार्या कलत्रं जलं आपः । समभिरूढनयो यथा गौः पशुः । एवंभूतनयो यथा—इन्दतीति इन्द्रः । उक्ता अष्टाविंशति-
नैवभेदाः ॥

उपनयभेदा उच्यन्ते—सद्रभूतव्यवहारो द्विधा । शुद्धसद्रभूतव्यवहारो यथा—शुद्धगुणशुद्धगुणिनोः शुद्धपर्यायशुद्धपर्यायिणोर्भेदकथनम् । अशुद्धसद्रभूतव्यवहारो यथाऽशुद्धगुणाऽशुद्धगुणिनोरशुद्धपर्यायाऽशुद्धपर्यायिणोर्भेदकथनम् इति सद्रभूतव्यवहारोऽपि द्वेधा ।

असद्रभूतव्यवहारस्त्रेधा । स्वभावसद्रभूतव्यवहारो यथा—परमाणुर्बहुप्रदेशीति कथनमित्यादि । विजात्यसद्रभूतव्यवहारो यथा—मूर्च्छमतिज्ञानं यतोमूर्च्छद्रव्येण जनितम् । स्वजातिविजात्यसद्रभूतव्यवहारो यथा ज्ञेये जीवेऽजीवे ज्ञानमिति कथनं ज्ञानस्य विषयात् । इत्यसद्रभूतव्यवहारस्त्रेधा ।

उपचरितासद्भूतव्यवहारस्त्रेधा । स्वजात्युपचरितासद्भूतव्यवहारो
यथा-पुत्रशारादि मम । विजात्युपचरितासद्भूतव्यवहारो यथा-
वस्त्राभरणभेदमरत्नादि मम । स्वजातिविजात्युपचरितासद्भूतव्यवहारो
यथा-देशराज्यदुर्गादि मम इत्युपचरितासद्भूतव्यवहारस्त्रेधा ।

सद्भावा गुणाः, क्रमवर्तिनः पर्यायाः गुण्यन्ते पृथक्क्रिय-
न्ते द्रव्यं द्रव्याद्यैस्ते गुणाः । अस्तित्वे तस्य भावोऽस्तित्वं सद्रूप-
त्वम् । वस्तुनो भावो वस्तुत्वम्, सामान्यविशेषात्मकं वस्तु द्रव्य-
स्वभावो द्रव्यत्वम् निजनिजप्रदेशसमूहैरखण्डवृत्त्या स्वभावविभाव-
पर्यायात् द्रवति द्रोष्यति अदुद्रवदिति द्रव्यम् । सद्रव्यलक्षणम्,
सीदति स्वकीयान् गुणपर्यायान् व्याप्नोतीति सत् उत्पादव्यय-
द्रव्ययुक्तं सत् । प्रमेयस्य भावः प्रमेयत्वम् प्रमाणेन स्वपरस्वरूप-
प्रपरिच्छेदं प्रमेयम् । अगुरुलघोर्भावोऽगुरुलघुत्वम् सूक्ष्मा वाग-
गोचराः प्रतिक्षणं वर्तमाना आगमप्रमाणादभ्युपगम्या अगुरुलघुगुणाः ।

“सूक्ष्मं जितोदितं तत्त्वं हेतुभिर्नैव हन्यते ।

आज्ञासिद्धं तु तद्व्याख्यं नान्यथावादिनो जिनाः” ॥ ५ ॥

प्रदेशस्य भावः प्रदेशत्वं क्षेत्रत्वं अविभागिपुद्गलपरमाणुना-
वैष्टव्यम् । चेतनस्य भावश्चेतनत्वम् चैतन्यमनुभवनम् ।

चैतन्यमनुभूतिः स्यात् सा क्रियारूपमेव च ।

क्रिया मनोवचःकायेष्वन्विता वर्तते ध्रुवम् ॥ ६ ॥

अचेतनस्य भावोऽचेतनत्वम् चैतन्यमनुभवनम् । मूर्तस्य
भावो मूर्तत्वं रूपादिमत्त्वम् । अमूर्तस्य भावोऽमूर्तत्वं रूपादिरहित-

१ अन्वयिनः । २ प्राप्नोति । ३ ज्ञातुं योग्यम् । ४ व्याप्तं । ५ अनु-
भूतिर्जीवाजीवादिपदार्थानां चेतनमात्रम् । ६ रूपरसगन्धस्पर्शवत्त्वम् ।

त्वम् इति गुणानां व्युत्पत्तिः । स्वभावविभावरूपतया याति पर्येति परिणमतीति पर्याय इति पर्यायस्य व्युत्पत्तिः । स्वभावलाभादच्युतत्वादस्तिस्वभावः परस्वरूपेणाभावात्तास्तिस्वभावः । निज-निज-नानापर्यायेषु तदेवेदमिति द्रव्यस्योपलम्भान्नित्यस्वभावः । तस्याप्यनेकपर्यायपरिणामितत्वादित्यस्वभावः । स्वभावानामेकाधारत्वादेकत्वभावः । एकस्याप्यनेकस्वभावोपलम्भादनेकस्वभावः । गुणगुण्यादिसंज्ञाभेदाद् भेदस्वभावः । (संज्ञासंख्यालक्षणप्रयोजनानि) गुणगुण्याद्येकमन्वभावादभेदस्वभावः । भाविकाः परस्वरूपाकारमभवाद् भग्नस्वभावः । कालत्रयेऽपि परस्वरूपाकारमभवाद् भग्नस्वभावः । उक्तञ्च,—

‘‘ अण्णोणं पविसंता दिंता उग्गसमण्णमण्णस्स ।

मेळंतावि य णिच्चं सगसगमावं ण विजहंति ’’ ॥ ७ ॥

पारिणामिकभावप्रधानत्वेन परमस्वभावः । इति सामान्यस्वभावानां व्युत्पत्तिः । प्रदेशादिगुणानां व्युत्पत्तिश्चेतनादिविशेषस्वभावानां च व्युत्पत्तिर्निगदिता ।

धर्मपेक्षया स्वभावा गुणा न भवंति । स्वद्रव्यचतुष्टयापेक्षया परस्परं गुणाः स्वभावा भवंति । द्रव्याण्यपि भवंति । स्वभावादन्वयामभवन विभावः । शुद्धं केवलभावमशुद्धं तस्यापि विपरीतम् । स्वभावस्याप्यन्यत्रोपचारादुपचरितस्वभावः । स द्वेषा कर्मजस्वाभावि कपेदात् यथा जीवस्य मूर्तत्वमचेतनत्वं यथा सिद्धानां परज्ञता परदशकत्वं च । एवमितरेषां द्रव्याणामुपचारो यथासंभवो ज्ञेयः ।

१ गुणगुणीति संज्ञा नाम । गुणा अनेके गुणी त्वेक इति संख्या भेदः । सद्रव्यलक्षणं । द्रव्याभया निर्गुणा गुणाः । २ स्वभावापेक्षया ।

“ दुर्नयैकान्तमारूढा भावानां स्वार्थिका हि ते ॥

स्वार्थिकाश्च विपर्यस्ताः सकलङ्का नया यतः ” ॥ ८ ॥

तत्कथं तथाहि—सर्वथैकान्तेन सद्रूपस्य न नियतार्थव्यवस्था-
संकरादिदोषत्वात् तथा—सद्रूपस्य, सकलशून्यताप्रसङ्गात्, नित्यस्यै-
करूपत्वादेकरूपस्यार्थक्रियाकारित्वाभावः; अर्थक्रियाकारित्वाभावे
द्रव्यस्याप्यभावः । अनित्यपक्षेऽपि अनित्यरूपत्वादर्थक्रियाकारि-
त्वाभावः, अर्थक्रियाकारित्वभावे द्रव्यस्याप्यभावः । एकस्वरूपस्यै-
कातेन विशेषाभावः, सर्वथैकरूपत्वात् विशेषाभावे सामान्यस्या-
प्यभावः ।

“ निर्विशेषं हि सामान्यं भवेत्स्वरविषाणवत् ।

सामान्यरहितत्वाच्च विशेषस्तद्वदेव हि ” ॥ ९ ॥

इति ज्ञेयः ।

अनेकपक्षेऽपि तथा द्रव्याभावो निराधारत्वात् आधाराधेया-
भावाच्च । भेदपक्षेऽपि विशेषस्वभावानां निराधारत्वादर्थक्रियाका-
रित्वाभावः, अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः । अमेदपक्षे-
ऽपि सर्वेषामेकत्वम् सर्वेषामेकत्वेऽर्थक्रियाकारित्वाभावः अर्थक्रियाका-
रित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः । अव्यस्यैकातेन पारिणामिकत्वात्
द्रव्यस्य द्रव्यांतरत्वप्रसङ्गात् । सङ्करादिदोषसम्भवात् सङ्करव्यति-
करविरोधवैषिकरण्यानवस्थासंशयाप्रतिपत्त्यभावाच्चेति । सर्वथाऽभ-
व्यस्यैकान्तेऽपि तथा शून्यताप्रसङ्गात् स्वभावस्वरूपस्यैकान्तेन
संसाराभावः । विभावपक्षेऽपि मोक्षस्याप्यभावः । सर्वथा चैतन्य-

१ यथा विहो माणवकः (माणवको मज्जरिः) ।

२ निरन्वयत्वादित्यपि पाठः । ३ भव्याभव्यजीवत्वानि ।

मेवेत्युक्ते सर्वेषां शुद्धज्ञानवैतन्त्यावाप्तिः स्यात्, तथा सति ध्यानं
 ध्येयं ज्ञानं ज्ञेयं गुरुशिष्याधर्मावः । सर्वथाशब्दः सर्वप्रकारवाची
 अथवा सर्वकालवाची, अथवा नियमवाची, अपवां अनेकान्तसा-
 पेक्षी वा ? यदि सर्वप्रकारवाची सर्वकालवाची अनेकान्तवाची वा
 सर्वादिगणे पठनात् सर्वशब्द एवंविधश्चेत्तर्हि सिद्धं नः समोदितम् ।
 अथवा नियमवाची चेत्तर्हि संकलार्थानां तत्र प्रतीतिः कथं स्यात् ?
 नित्यः, अनित्यः, एकः, अनेकः, भेदः, अभेदः कथं प्रतीतिः स्यात्
 नित्यमितेपक्षत्वात् । तथाऽचेतन्यपक्षेऽपि संकलचेतन्योच्छेदः स्यात्
 मूर्तस्यैकान्तेनात्मनो मोक्षस्यावाप्तिः स्यात् । सर्वथाऽमूर्तस्यापि
 तथात्मनः संसारविलोपः स्यात् । एकप्रदेशस्यैकान्तेनाखण्डपरिपूर्ण
 स्यात्मनोऽनेककार्यकारित्वं एवं हानिः स्यात् । सर्वथाऽनेकप्रदेश-
 त्वेऽपि तथा तस्यानर्थकार्यकारित्वं स्वस्वभावशून्यताप्रसङ्गात् ।
 शुद्धस्यैकान्तेनात्मनो न कर्ममलकलङ्कावलेपः सर्वथा निरक्षरतत्वात् ।
 सर्वथाऽशुद्धैकान्तेऽपि तथात्मनो न कदापि शुद्धस्वभावप्रसङ्गः
 स्यात् तन्मयत्वात् । उपचरितैकान्तपक्षेऽपि नात्मज्ञता सम्भवति
 नियमितपक्षत्वात् । तथात्मनोऽनुपचरितपक्षेऽपि परज्ञतादीनां
 विरोधः स्यात् ।

“ नानास्वभावसंयुक्तं द्रव्यं ज्ञात्वा प्रमाणतः ।

तच्च सापेक्षसिद्धयर्थं स्यान्नयामैश्वर्यं कुरु ” ॥ १० ॥

स्वद्रव्यादिग्राहकैणास्तिस्वभावः । परद्रव्यादिग्राहकेण नास्ति-
 स्वभावः । उत्पादव्ययगौणत्वेन सत्ताग्राहकेण नित्यस्वभावः ।

१ अशुद्धस्वभावमयत्वात् । २ मुक्त्याभावे सति प्रयोजने निमित्ते
 चोपचारः प्रवर्तते ।

केनाचित्पयाथिकेनानित्यस्वभावः । भेदकल्पनानिरपेक्षेणैकस्व-
भावः । अन्वयद्रव्याथिकेनैकस्याप्यनेकद्रव्यस्वभावत्वम् । समुत्-
व्यवहारेण गुणगुण्यादिभिर्भेदस्वभावः । भेदकल्पनानिरपेक्षेण गुण-
गुण्यादिभिरभेदस्वभावः । परमभावग्राहकेण मन्व्यामव्यपारिणामिक-
स्वभावः । शुद्धाशुद्धपरमभावग्राहकेण चेतनस्वभावो जीवस्य ।
असद्वृत्तव्यवहारेण कर्मनोकर्मणोरपि चेतनस्वभावः । परमभाव-
ग्राहकेण कर्मनोकर्मणोरचेतनस्वभावः ।

जीवस्याप्यसद्वृत्तव्यवहारेणाचेतनस्वभावः । परमभावग्राहकेण
कर्मनोकर्मणोर्मूर्तस्वभावः । जीवस्याप्यसद्वृत्तव्यवहारेण मूर्तस्वभावः ।
परमभावग्राहकेण पुद्गलं विहाय इतरधाममूर्तस्वभावः । पुद्गलस्योप-
चारादिषु नास्त्यमूर्तत्वम् । परमभावग्राहकेण कालपुद्गलाणूनामेक
प्रदेशस्वभावत्वम् । भेदकल्पनानिरपेक्षेणैतरेषां धर्माधर्माकाशजीवानां
चाखण्डत्वादकप्रदेशत्वम् । भेदकल्पनासापेक्षेण चतुर्णामपि नाना-
प्रदेशस्वभावत्वम् । पुद्गलाणोरुपचारतो नानाप्रदेशत्वं न च कालाणौ
स्निग्धरुक्षत्वाभावात् । अरुक्षत्वाच्चाणोरमूर्त्तपुद्गलस्यैकविंशतितमो
भावो न स्यात् । परोक्षप्रमाणोपेक्षयाऽसद्वृत्तव्यवहारेणाप्युपचारेणा
मूर्तत्वं । पुद्गलस्य शुद्धाशुद्धद्रव्याथिकेन विभावस्वभावत्वम् । शुद्ध
द्रव्याथिकेन शुद्धस्वभावः । अशुद्धद्रव्याथिकेनाशुद्धस्वभावः ।
असद्वृत्तव्यवहारेणोपचरितस्वभावः ।

‘द्रव्याणां तु यथारूपं तल्लोकेऽपि व्यवस्थितम् ।

तथा ज्ञानेन संज्ञातं नयोऽपि हि तथाविधः’ ॥ ११ ॥

इति नययोजनिका ।

सकलवस्तुग्राहकं प्रमाणं, प्रमीयते परिच्छिद्यते वस्तुतत्त्वं येन ज्ञानेन तत्प्रमाणम् । तद्वेषा सविकल्पेतरभेदात् । सविकल्पं मानसं, तच्चतुर्विधम् । मतिश्रुतावधिर्मानः पर्ययरूपम् । निर्विकल्पं मनोरहितं केवलज्ञानमिति प्रमाणस्य व्युत्पत्तिः । प्रमाणेन वस्तु संगृहीतार्थ-कांशो नयः श्रुतविकल्पो वा, ज्ञातुरभिप्रायो वा नयः, नानास्वभावेभ्यो व्यावृत्य एकास्मिन्स्वभावे वस्तु नयति प्रामोदीति वा नयः । स द्वेषा सविकल्पनिर्विकल्पभेदादिति नयस्य व्युत्पत्तिः । प्रमाणनययोर्निक्षेप आरोपणं स नामस्थापनादिभेदेन चतुर्विध इति निक्षेपस्य व्युत्पत्तिः । द्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति द्रव्यार्थिकः । शुद्धद्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति शुद्धद्रव्यार्थिकः । अशुद्धद्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति अशुद्धद्रव्यार्थिकः । सामान्यगुणादयोऽन्वयरूपेण द्रव्यं, द्रव्यमिति द्रवति व्यवस्थापयतीत्यन्वयद्रव्यार्थिकः । स्वद्रव्यादिग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति स्वद्रव्यादिग्राहकः, परद्रव्याग्रहणमर्थः । प्रयोजनमस्येति परद्रव्यादिग्राहकः, परमभावग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति परमभावग्राहकः ।

इति द्रव्यार्थिकस्य व्युत्पत्तिः ।

पर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति पर्यायार्थिकः । अनादिनित्य पर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येत्यनादिनित्यपर्यायार्थिकः । सादिनित्य पर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति सादिनित्यपर्यायार्थिकः । शुद्धपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति शुद्धपर्यायार्थिकः । अशुद्धपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येत्यशुद्धपर्यायार्थिकः ।

इति पर्यायार्थिकस्य व्युत्पत्तिः ।

१ निश्चायते । २ आदिशब्देन द्रव्यभावो गृह्यते । ३ सामान्य जीवत्वादि गुणा ज्ञानादयः ।

नैकं गच्छतीति निगमः, निगमो विश्वस्तत्रभवो नैगमः ।
 अमेदरूपतया वैस्तुजातं संगृह्यतीति सङ्ग्रहः । सङ्ग्रहेण गृहीतार्थस्य
 भेदरूपतया वास्तु व्यवह्रियत इति व्यवहारः । ऋजु मानंलं सूत्र-
 यतीति ऋजुसूत्रः । शब्दात् व्याकरणत् प्रकृतिप्रत्ययद्वारेण
 सिद्धः शब्दः शब्दनयः । परस्परेणादिरूढाः समभिरूढाः ।
 शब्दभेदेऽप्यर्थभेदो नास्ति । यथा शक्र इन्द्रः पुरन्दर इत्यादयः
 समभिरूढाः । एवंक्रिया प्रधानत्वेन भूयत इत्येवंभूतः । शुद्धाशुद्ध-
 निश्चयी द्रव्यार्थिकस्य भेदौ । अमेदानुपचरितया वास्तु निश्चोयत
 इति निश्चयः । भेदोपचारात्तया वास्तु व्यवह्रियत इति व्यवहारः ।
 गुणगुणिनोः संज्ञादिभेदात् । भेदकः सङ्भूतव्यवहारः । अन्यत्र
 प्रसिद्धस्य धर्मस्थान्धैत्र समारोपणमसङ्भूतव्यवहारः । असङ्भूतव्यवहार
 एवोपचारः उपचारादप्युपचारं यः करोति स उपचरितासदभूतव्यव-
 हारः । गुणगुणिनोः पर्यायपर्यायिणोः स्वभावस्वभाविनोः कारकका-
 रकिणोर्भेदः सङ्भूतव्यवहारस्यार्थः, द्रव्ये द्रव्योपचारः, पर्याये पर्या-
 योपचारः, गुणे गुणोपचारः, द्रव्ये गुणोपचारः, द्रव्ये पर्यायोपचारः,
 गुणे द्रव्योपचारः, गुणे पर्यायोपचारः, पर्याये द्रव्योपचारः, पर्याये
 गुणोपचार इति नवविधोऽङ्गव्यवहारस्यार्थो द्रष्टव्यः ।

उपचारः पृथग् नथो नास्तीति न पृथक् कृतः । मुख्यभावे सति
 प्रयोजने निमित्ते चोपचारः प्रवर्त्तने सोऽपि सम्बन्धाविनाभावः ।
 संस्तेयः सम्बन्धः । परिणामपरिणामिसम्बन्धः, श्रद्धाश्रद्धेयसम्बन्धः,

१ वस्तुसमूहः । २ एवमित्युक्ते कोऽर्थः क्रियाप्रधानत्वेनेति विशेषणम् ।

३ पुद्गलादौ । ४ स्वभावस्य । ५ जीवादौ ।

ज्ञानज्ञेयसम्बन्धः, चारित्र्यार्थसम्बन्धश्चेत्यादिसत्यार्थः, असत्यार्थः
सत्यासत्यार्थश्चेत्युपचरिताऽप्रदमूतव्यवहारजन्यस्यार्थः ।

पुनरप्यध्यात्ममाषया जया उच्यन्ते । तावन्मूकनयी द्वी-नि-
श्रयो व्यवहारश्च । तत्र निश्रयनयोऽमेदविषयो, व्यवहारो मेद-
विषयः । तत्र निश्रयो द्विविधः शुद्धनिश्रयोऽशुद्धनिश्रयश्च । तत्र
निरुपाधिगुणगुणयोर्मेदविषयकोऽशुद्धनिश्रयो यथा—केवलज्ञानादयो
जीवै इति ।

सोपाधिकैविषयोऽशुद्धनिश्रयो यथा—मतिज्ञानादयो जीव इति ।

व्यवहारो द्विविधः सद्भूतव्यवहारोऽसद्भूतव्यवहारश्च ।
तत्रैकवस्तुविषयः सद्भूतव्यवहारः, भिन्नवस्तुविषयोऽसद्भूतव्यव-
हारस्तत्र सद्भूतव्यवहारो द्विविध उपचरितानुपचरितमेदात् । तत्र
सोपाधिगुणगुणिनोर्मेदविषयः उपचरितसद्भूतव्यवहारो यथा-
जीवस्य मतिज्ञानादयो गुणाः । निरुपाधिगुणगुणिनोर्मेदविषयोऽ
उपचरितसद्भूतव्यवहारो यथा—जीवस्य केवलज्ञानादयो गुणाः ।

असद्भूतव्यवहारो द्विविधः उपचरितानुपचरितमेदात् । तत्र
संश्लेषरहितवस्तुसम्बन्धविषय उपचरिताऽसद्भूतव्यवहारो । यथा देव-
दत्तस्य घनमिति । संश्लेषसहितवस्तुसम्बन्धविषयोऽनुचरिताऽ-
सद्भूतव्यवहारो यथा—जीवस्य शरीरमिति ।

इति सुखबोधार्थमालापपद्धतिः ।

१ मेदेन ज्ञातुं योग्यः । २ उपाधिना कर्मजनितविकारेण सह वर्तते इति
सोपाधि । ३ यथा वृक्ष एक एव तल्लग्नोऽक्षा मित्राः परन्तु वृक्ष एव
तपो सद्भूतव्यवहारो गुणगुणिनोर्मेदकल्पनम् । ४ देवदत्तस्य, इति च पाठः ।

{७} बारहमासना ।

[रत्नचंद्रजीकृत ।]

सवैया ३१ ॥

भोग उपभोग जे कहे हैं संसाररूप रमा धन पुत्र औ
 कलत्र आदि जानिये ॥ ज्यूहीं जल बुदबुद प्रत्यक्ष है लखाव तनु
 विद्युत्तचमत्कार थिर न रहानिये । त्यों ही जग अथिर विलासको
 असार जान थिर नहीं दीसे सो अनादि अनुमानिये ॥ यह जो
 विचारे सो अनित्य अनुपेक्षा कहे प्रथम ही भेद जिनराज जो
 बखानिये ॥ १ ॥ निर्जन अरण्य मांड़ि ग्रहे मृग सिंह शरण न
 दीसे अशरण ताहि कहिये ॥ हरिहरादि चक्रवर्ति पद त्यों अथिर
 गिनो जन्ममरण सो अनादि ही ते लहिये ॥ याहिको विचारियो
 असार संसार मान एक अवलंब जिनधर्म ताहि गहिये । ढढ़ हिये
 धार निज आत्मको कर विचार तजके विकार सब निश्चल हो
 रहिये ॥ २ ॥ कर्म काण्ड दाही थकी आत्मा भ्रमणकरे नट जैसो
 नाटक अनन्तकाल करे है । पिता हूते पुत्र होय जनक होय सुत
 हू ते, स्वामी हू ते दास भृत्य स्वामी पद धरे है । माता हू ते, प्रिया
 होय कामिनी ते माय होय भगवन मांड़ि जीव यूंही संसरे है ॥ ३ ॥
 मैंहुं जो एकाकी सदा देखिये अनंत काल जन्म मृत्यु बहु दुःख सहो
 है । रोगनग्रसो है एकैपाप फल मुंजे धनो एकै शोकवन्तको उदु-
 तीनाहि सहो है । स्वजन न तात मात साथी नहि कोय यह रत्नत्रय
 साथि निज ताहि नहि गहो है । एकै यह आत्मध्यावे, एकै तपसा

करावे होय शुद्ध भावे तब मुक्ति पद लही है ॥ ४ ॥ आत्म है
 अन्य और पुत्रक हूं अन्य लखो अन्य मात तात पुत्र त्रिया
 सब जानरे । जैसे निशिमांदि तरुहुपै खग मेलें होय, प्रात उठ
 जाय ठौरठौर तिमि मानरे ॥ तैसे बिनाशीक यह सकल पदार्थ हैं
 हाटमध्या जन अनेक होय मेले आनरे । इनहुतें कान कछु सैर न
 नेगो नाहिं भैया, अन्यत्त्वानुपेक्षरूप यह पहचानरे ॥ ५ ॥ स्वचा
 पक अस्तनसानाकमलमूत्र घाम शुक्रमल रुधिर कुषाद्य सप्तमई
 है, ऐसो तन अशुचि अनेक दुर्गंध भरो श्रवै नव द्वार तामें मृद
 मतिदई है ॥ ऐसी यह देह ताहि लखके उदास रहो मानो जीव
 एक शुद्ध बुद्ध परणई हैं ॥ अशुचि अनुपेक्षा यह धारे जो इसी
 ही भांति तनके विकार तिन मुक्तरमा कई है ॥ ६ ॥

चौपाई ।

आश्रवअनुपेक्षा हियधारं । सत्तावन आश्रवके द्वारं ॥ कर्मा-
 श्रव ये कैसे होय । ताको मेद कहूं अब सोय ॥ मिथ्याअविरतयोग-
 कषाय । यह सत्तावन मेद क्लाय । बंधो फिरे इनके वश जीव । मर-
 सागरमें रुले सदीव । विकल्परहित ध्यान जब होय । शुभआश्रवकी
 क्राण सोय ॥ कर्मैशत्रुको करसंहार । तब पावे पंचमंगति सार ॥ ७ ॥
 आश्रवकी निरोध जो ठान । सोईसम्बर करे बखान ॥ सम्बरकरमु-
 निरजरा होय । सोई हय परकारहि जोय ॥ इह स्वयमेव निर्म-
 रा पेख । दूनी निर्नरा तपहि विशेष ॥ ८ ॥ पूर्व सकल अवस्था-
 कही । संवर करमो निर्नरासही ॥ सोय निर्नरा दो परनार । सवि-
 पाकी अविपाकीसार ॥ सविपाकी सबजीवन होय । अविपाकी

मुनिवरके जोय ॥ तपके बलकर मुनि भोगाय । सोई भाव निर्नरा
 आय । बंधे कर्म छूटै जिह घरी । सोई द्रव्य निर्नरा खरी ॥९॥
 अघो मध्य अरु ऊरष जान । लोकत्रय यह कहे बखान ॥ चौदह
 राजू सवे उतंग । वातत्रय वेढे सरबंग ॥ घनाकार राजू गण
 ईस । कहैं तीनसै तैतालीस ॥ अधोलोक चौखुटो जान । मध्यलोक
 झालरी समान ॥ उर्ध्वलोक मृदंगाकार । पुरुषाकार त्रिलोक नि-
 हार ॥ ऐसो निजघट रखे जुकोय । सो लोकानुपेक्ष यह होय ॥१०॥
 दुर्लभ ज्ञान चतुरगतिमाहि । भ्रमतभ्रमत मानुषगति पाहि ॥ जैसे
 जन्म दरिद्री कोय । मिलो रत्ननिधिताको सोय ॥ त्यू मिलियो यह
 नर पर्याय । आर्यखंड ऊंच कुल पाय ॥ आयुपूर्ण पंचइन्द्री भोग ।
 मंदकषाय धर्मसंयोग ॥ यह दुर्लभ है या जगमाहि । इन विन मिले
 मुक्तिपद नाहि ॥ ऐसी भावना भावे सार । दुर्लभ अनुपेक्षा सु
 विचार ॥ ११ ॥ पालै धर्म यत्नकर जोय । शिव मंदिर ते कहे-
 जुसोई ॥ धर्म भेद दशविधि निरधार । उत्तमक्षमा मार्दवसार ॥
 आर्जव सत्य शौच पुन जान ॥ संयमतप त्यागहि पहिचान ॥
 आर्किचन ब्रह्मचर्य गनेवं ॥ यह दश भेद कहे जिनदेव ॥ धर्महि
 ते तीर्थकरगति । धर्महि तें होवे सुरपति । धर्महि तें चक्रेश्वर
 जान । धर्महि ते हरि प्रतिहरि मान । धर्महि ते मनोज अवतार ।
 धर्महिते हो भवदधि पार । रत्नचंद्र यह करे बखान । धर्महितें
 पावे निर्वाण ॥

(८) दश आरतियाँ ।

प्रथम आरती ।

यह विधि संगल आरती कीजै । पञ्च परमपद भजि सुख लीजै
 ॥ टेक ॥ प्रथम आरती श्रीजिनराजा । भवजल पार उतार जिहाना
 ॥ १ ॥ दुज्जी आरती सिद्धन केरी । सुमरण करत मिटै भव फेरी ॥ २ ॥
 तीजी आरती सुर मुनिन्दा । जन्म मरण दुःख दूर करिन्दा ॥ ३ ॥
 चौथी आरती श्री उवज्झाया । दर्शन देखत पाप पलाया ॥ ४ ॥
 पांचमी आरती साधु तुम्हारी । कुमति विनाशन शिव अधिकारी
 ॥ ५ ॥ छट्टी ग्यारहप्रतिमा घारी । आवक बन्दों आनन्दकारी ॥ ६ ॥
 सातमी आरती श्री जिनवाणी । दानत स्वर्ग मुक्त सुख दानी ।

द्वितीय आरती ।

आरती श्री जिनराज तुम्हारी । कर्मदहन सन्तन हितकारी
 ॥ टेक ॥ सुर नर असुर करत तव सेवा । तुम ही सब देवक
 देवा ॥ १ ॥ पंचमहाव्रत दुद्धर घारे । राग दोष परिणाम
 विहारे ॥ २ ॥ भव मयभीत शरण जे आये । ते परमारथ पन्थ
 लगाये ॥ ३ ॥ जो तुम नाम जेपे मन माहिं । जन्म मरण मय ताको
 नाहिं ॥ ४ ॥ समोशरण सम्पूरण सोभा । नीति क्रोध मान मद
 कोभा ॥ ५ ॥ तुम गुण हम कैसे कर गावैं । गणघर कहत पार
 नहिं पावैं ॥ ६ ॥ करुणासागर करुणा कीजै । दानत सेवकको
 सुख दीजै ॥ ७ ॥

तीसरी आरती ।

आरती कीजै श्रीमुनिराजकी । अवम उचारण आत्मकामकी ।

॥ टेक ॥ जा लक्ष्मीके सब अभिलाषी । सो साधनि कर्दम बत-
नाषी ॥ १ ॥ सब जग जीत लियो जिननारी । सोसाधनि नागनिव-
त छारी ॥ २ ॥ विषयनि सब जियको बसकीने । ते साधनि विषवत
तज दीने ॥ ३ ॥ भुञ्जों राज चहत संव प्राणी । जीरण तृणवत
त्यागो ध्यानी ॥ ४ ॥ शत्रुमित्र सुख दुःख सम माने । लाभ अलाभ
बराबर जाने ॥ ५ ॥ छहों काय पीहर ब्रत धोरें । सबको आप
समान निहोरें ॥ ६ ॥ यह आरती पढ़ै जो गावै । धानत मन-
वांछित फल पावै ॥ ७ ॥

चौथी आरती ।

किसविधि आरती करौं प्रभु तेरी । अगम अकथनसं बुध
नहिं मेरी ॥ टेक ॥ समुद्रविज्ञे सुत रजमतिछारी । यौं कहि थुति
नहिं होय तुम्हारी । कोटि स्तम्भ वेदी छवि सारी । समोशरण
थुति तुमसे न्यारी ॥ १ ॥ चारि ज्ञानयुत तिनकेस्वामी । सेवकके प्रभु
अन्तरायामी ॥ २ ॥ मुनिकै वचन भविक शिव जाहि । सो पुदगल
मैं तुमगुण मांहि ॥ ३ ॥ आतम जोति समान बताऊं । रविश-
शिदीपक मूढ़ कहाऊं ॥ ४ ॥ नमत त्रिनगपति शोभा उनकी ।
तुम शोभा तुममें निज गुणकी ॥ मान सिंह महाराजा गावै । तुम
महिमा तुमही बनि आवै ॥

पांचमी आरती ।

यह विधि आरती करूं प्रभु तेरी । अमल अबाधित निज
गुण केरी ॥ टेक ॥ अचल अखंड अतुल अविनाशी । लोकालोक
सकल परकाशी ॥ १ ॥ ज्ञान दरश सुख बल गुणधारी । परमात्म
अविकल अविकारी ॥ २ ॥ क्रोध आदिं रागादिक तेरे । जन्म

सो थिरता नहि चपल कहावैं ॥ ६ ॥ धानत प्रीति सहित सिर
नावैं । जनम जनम यह भक्ति कमावैं ॥ ७ ॥

अष्टम आरती ।

करो आरती वर्द्धमानकी । पावापुर निवारण थानकी ॥ टेक ॥
राग बिना सब जगजन तारे । दोष बिना सब कर्म विदारे ॥ १ ॥
सील धुरन्धर शिव तिय भोगी । मन वच काय न कहिये योगी
॥ २ ॥ रत्नत्रय निधि परिग्रहहारी । ज्ञानसुधा भोजन व्रततारी ॥ ३ ॥
लोक अलोक व्याप निजमाहीं । सुखमैं इन्द्री सुख दुःख नाहीं
॥ ४ ॥ पञ्च कर्याणक पूज्य विरागी । विमल दिगम्बर अम्बरत्यागी
॥ ५ ॥ गुणमुनि भूषण भूषण त्वामी । तीन लोकके अंतरयामी ॥ ६ ॥
कहैं कहाँ लो तुम सब जानो । धानतका अभिलाष प्रमानो ॥ ७ ॥

नवमी आरती ।

क्या ले आरती भगति करैजी । तुम लायक नहि हाथ
परैजी ॥ टेक ॥ क्षीर उदधिको नीर चढ़ायौ । कहा भयो मैं भी
जल लायो ॥ १ ॥ उज्जल मुक्ताफलसों पूजै । हमपै तन्दुल और न
दुजे ॥ २ ॥ करुणवृक्ष फलफूल तुम्हारे । सेवक क्या ले भगति
बिथारे ॥ ३ ॥ तनसु चंदन अगर न लागै । कौन सुगन्ध धरै तुम
आगे ॥ ४ ॥ नख सम कोटि चन्द रवि नाहीं । दीपक जोति
कहो किह माहीं ॥ ५ ॥ ज्ञान सुधा भोजन वृत्तधारी । नेबद कहा
करे संसारी ॥ ६ ॥ धानत शक्ति समान चढ़ावै । कृपा तुम्हारी-
से सुख पावै ॥ ७ ॥

दशम आरती ।

मंगल आरती आत्मराम । तन मंदिर मन उत्तम ठाम

जीव बचैया तुमही तो हो । अघव्याही राजुलको छोड़ी गिरके
 चढ़ैया तुमही तो हो । मात पिताकी कही न मानी तपके तपैया
 तुमही तो हो । राजुल रानी मन अकुलानी धीर्यवधैया
 तुमही तो हो ॥२॥ पार्सनाथ भगवान कमठके मान घटैया तुमही
 तो हो । जरत अगनसे नाग नागनीके उवरैया तुमही तो हो ।
 महावीर जिन धीर, वीर भव पीर हरैया तुमही तो हो । चौबीसों
 भगवान अहो भयफंद मिटैया तुमही तो हो । जैन धर्म प्रचार
 चलाया सृष्टि तरैया तुमही तो हो । अनंतानंते प्राणी भवसे पार
 करैया तुम ही तो हो ॥ मंत्र महान जहाज जगतमें या बतलैया
 तुमही तो हो । णमोकार इस जगमें स्वामीजू पचरैया तुमही तो हो
 ॥३॥ कोड़ा, कोड़ी यही मंत्रसे पार तरैया तुमही तो हो । आगे
 मोल गये जप तपकर स्वर्ग दिवैया तुमही तो हो । अब सीझत
 निरधार प्रभु आधार बढैया तुमही तो हो । देस विदेस विहार कीन
 उपदेश करैया तुम ही तो हो ॥ शिव मारग दर्शाया तुमने धर्म
 बतैया तुमही तो हो । पंथ लगाकर जग जीवनपर करुणा धरैया
 तुमही तो हो ॥ णमोकारका नोका करके मंत्र बतैया तुमही तो हो ।
 जिन उच्चारक त्रिभुवन तारक रंक रखैया तुमही तो हो ॥४॥ दोष
 अठारा त्यागके चारागुणके धरैया तुमही तो हो । अतिशय चोतिस
 दीखें न्यारे कर्म खिपैया तुमही तो हो ॥ कुमत्त रही जग छाया
 जवे तुम सुमत्त बतैया तुमही तो हो । कुमति नार पाखंड क्रिया
 परचंड हटैया तुमही तो हो ॥ जग अज्ञान मिटाया तुमने ज्ञान
 दिवैया तुमही तो हो । तीर्थकर पदवीके धारी ज्ञान उपैया तुमही
 तो हो । जब१ परी भीर भक्तनपै बांह गईया तुमही तो हो । महाधोर

उपसर्ग जिताये छिनरके रखैया तुमही तोहो ॥५॥ कपी सिखर-
 सम्भेदके ऊपर मंत्र दिवैया तुमही तोहो । चम्पापुरमें ग्वालि बालको
 सेठ करैया तुमही तोहो ॥ बैल जीव संबोध सुग्रीवने भुप बनैया
 तुमही तोहो ॥ चहलेमें हथनी फंसी ताह उबरैया तुमही तोहो ॥
 मानतुंग उपसर्ग बचाये वेड़ी कटैया तुमही तोहो । सीता प्रवर्सी
 अगनकुंडमें नीर करैया तुमही तोहो ॥ मनोरमा पर विपदा भारी
 सील रखैया तुमही तोहो । सती अंजना नृत्य करतमें स्वर्गदिवैया
 तुमही तोहो ॥१॥ अषम अंजना व्यसन कीनपर चोर तरैया
 तुमही तोहो । स्वान जीवको सेठ संबोधो पेन रखैया तुमही तो
 हो ॥ महाकुटिल बंढाल भीलकूं स्वर्ग दिवैया तुमही तोहो ।
 सती द्रोपदी घातु द्वीपमें पेन रखैया तुमही तोहो ॥ कोटीभट
 श्रीपाक सेठके कुट कटैया तुमही तोहो । धर्मचक्रके फलसे
 काया स्वर्ण करैया तुम ही तोहो ॥ सखा सातसौकी असावसब
 व्याध हटैया तुमही तोहो । जो यह मंत्र जपे तन मनसे पार
 करैया तुम ही तोहो ॥७॥ तन मनसे नर जो कोई ध्यावे तांह
 तरैया तुमही तोहो । तेरातीजहुएसब जैनी धोर्य बंधैया तुमही तो
 हो । पांचों मेरे सोय अज्ञानी इन्है जगैया तुमही तोहो । धोरघटा मि-
 थ्यात छाव रव ताह हटैया तुमही तोहो । भूलत भटकत फिरत
 भुगानों राह लगैया तुमही तोहो ॥ आजहिं बारी नाथ हमारी-
 विनय सुनैया तुमही तोहो ॥ याजगमें नहिं कोई सुनैया बांह
 गहैया तुमही तोहो । फूलचंद जिन रंक धर्मका बंक दिवैया तुमही
 तोहो ॥८॥ चौबीसों मिनरान प्रभुजी अरज सुनैया तुमही तो
 हो । भव सागर बिच नरकी नैया पार लगैया तुमही तोहो ॥

(१०) भोजनकी प्रार्थनाएं ।

(सबेरेके भोजन समयकी इष्ट प्रार्थना)

परमेष्ठी सुमरण कर हम सब बालकगण नित उठा करें ।
स्वस्थ होय फिर देव धर्म गुरुकी स्तुति सब किया करें ॥
करना हमें आज क्या क्या है यह विचार निज काज करें ।
कायिक शुद्धि किया करके फिर जिन दर्शन स्वाध्याय करें ॥ १ ॥
मौन धारकर तोषित मनसे क्षुधा वेदना उपशम हित ।
विघ्नकर्मके क्षयोपशमसे भोजन प्राप्त करें परमित ॥
हे जिन हो हित कर यह भोजन तनमन हमरे स्वस्थ रहें ।
आलस तनकर "दीप" उमंगसे निज परहितमें मगन रहें ॥ २ ॥

(सांझके भोजन समयकी इष्ट प्रार्थना)

जय श्री महावीर प्रभुकी कह अरु निज कर्तव्य पूरण कर ।
संध्या प्रथम मौन धारणकर भोजन करें शांत मनकर ॥
परमित भोजन करें ताकि नहिं आलस अरु दुःस्वप्न दिखें ।
"दीप" समयपर प्रभु सुमरण कर सोवें जगें स्वकार्य लखें ॥

(११) नरकोंके दोहे ।

जनम थान सब नरकमें, अन्ध अंधोमुख जौन ।
घंटाकार योनावनी, दुसहवासदुख मौन ॥ १ ॥
तिनमें उपजै नारकी, तल सिर ऊपर पांव ।
विषमवज्र कंटकमई, परे मूमिपर आय ॥ २ ॥
जो विषैल वीछूसहस, लगे देह दुख होय ।

नरकधराके परसत्ते, सरस वेदना सोय ॥ ३ ॥

तहां परम पर वान भति, हाहा करते एम ।

ऊंचे उछलें नारकी, तपे तवा तिल जैन ॥ ४ ॥

सोरठा-नरक सातवें मांहि, उछलत योजन पांचसै ।

और जिनागम मांहि, यथायोग सब जानिये ॥ ५ ॥

दोहा-फेर जान भूपर परे, और कहां उड़ि जाहि ।

छिन्नमिन्न तन भति दुखित, लोट लोट बिलकाहि ॥ ६ ॥

सब दिश देख अपूर्व थक, चक्रित चित्त भगवान ।

मन सोचे मैं कौन हूं, परो कहां मैं जान ॥ ७ ॥

कौन भयानक भूमि यह, सब दुख भयानक निन्द ।

रुद्र रूप ये कौन हैं, निरुर नारकी वृन्द ॥ ८ ॥

काले वरण कराल मुख, गुंजालोचन धार ।

हुंढक डीक डरावने, करें मार ही मार ॥ ९ ॥

सुजन न कोई दिठिपरे, शरण न सेवक कोब ।

ऐसो कछु सूझे नहीं, जासों छिन मुख होय ॥ १० ॥

होत बिभंगा अबधि तब, निज परको दुखकार ।

नरक कूपमें आपको, परोजान निरधार ॥ ११ ॥

पूरब पाप कलाप सब, आप जाप कर लेय ।

तब बिलापकी ताप तब, पश्चाताप करेय ॥ १२ ॥

मैं मानुष पर्याय धरि, घन यौवन मदलीन ।

अधम काम ऐसे किये, नरकवास जिन कीन ॥ १३ ॥

सरसों सम मुख हेतु, तब भयो कंपटी जान ।

ताहीको अब फल लगो, यह दुख मेरु समान ॥ १४ ॥

कंदमूलः मद्मांसं मधु, और अमक्ष्य अनेक ।
 अक्षनवश मक्षन क्रिये, अटक न मानी एक ॥ १९ ॥
 जल थल नभ निलचर विविध, विलवासी बहु जीव ।
 मैं पापी अपराध विन, मारो दीन अतीव ॥ १६ ॥
 नगर दाह कीनो निठुर, गांव जलाये जान ।
 अठवीमें दीनी अगिन, हिंसाकर सुख मान ॥ १७ ॥
 अपनी इन्द्रो लोभकों, बोली मृषा मलीन ।
 कलपित ग्रन्थ बनायकें, वहकाये बहु दीन ॥ १८ ॥
 दांव घात परपंच सों, पर लक्ष्मी हरि लीन ।
 छलबल हठबल द्रव्यबल, पर वनिता वश कीन ॥ १९ ॥
 बड़त परिग्रह पोट सिर, घटो न धनकी चाह ।
 ज्यों ईधनके योगसे, अगिन करे अति दाह ॥ २० ॥
 विन छानो पानी पियो, निशि भुंजी अविचार ।
 देवद्रव्य खायो सही, रुद्र ध्यान उरधार ॥ २१ ॥
 कीनी सेव कुदेवकी, कुगुरुनिको गुरु मान ।
 तिनहीके उपदेश सों, पशु-हो मोहित जान ॥ २२ ॥
 दियो न उत्तम दान मैं, श्रियो न संयम मार ।
 पियो मूढ मिथ्यात मद, क्रियो न तप जग सार ॥ २३ ॥
 जो घरनी जन दयाकरि, दीनी सखी निहोर ।
 मैं तिनसों रिस करि अधम, भाषे वचन कठोर ॥ २४ ॥
 करी कमाई पर जनम, सो आई मुझ तीर ।
 हा हा अब कैसे घरों नरक घरामें घोर ॥ २५ ॥
 दुर्लभ नरभव पायके कोई पुरुष प्रधान ।

सब कोधी कलही सकल, सबके नत्र फुलिंग ।
 दुख देनेको अधि निपुण, निठुर नपुंसक लिंग ॥ ३८ ॥
 कुंत कृपाण कमान शर, शकती मुगदर दंड ।
 इत्यादिकं आयुष विविध, लिये हाथ परचंड ॥ ३९ ॥
 कहि कठोर दुरवचन बहु, तिलखंडे काय ।
 सो तबही ततकाल तनु, पारावत मिल जाय ॥ ४० ॥
 काटे कर छेदें चरण, भेदें परम बिचार ।
 अस्थि जाल चूरण करें, कुचलें चाम उपार ॥ ४१ ॥
 चीरें करवत काठ ज्यों, फोरें पकरि कुठार ।
 तोड़ें अन्तरमालिका, अन्तर उदर विदार ॥ ४२ ॥
 पेरें कल्ल मेलकें, पीसैं घंटी घाल ।
 तावें ताने तेलमें, दहे दहन पर जाल ॥ ४३ ॥
 पकरि पाप पटके पुइमि, झटक परस्पर लेहि ।
 झटक सेन मुवावहिं, सुलीपै घर नहि ॥ ४४ ॥
 घिसैं मकण्टक रूखसो, वैतरणी ले जाहिं ।
 घायल घेर वसीटिये, किंचित करुणा नाहिं ॥ ४५ ॥
 केई मत्त चुचात तन, विह्वल भाजें ताम ।
 परवत अन्तर जायके, करो बैठि विश्राम ॥ ४६ ॥
 तहां अशानक नारकी, धारि विक्रिया भेष ।
 बाघ सिंह अहि रूपसों, दारे देह विशेष ॥ ४७ ॥
 कहे सो गाय गहि, गिरिसों देहि गिराय ।
 परे अनि दुर्भूमिपै, खण्ड २ खण्ड हो जाय ॥ ४८ ॥
 दुख नों कायर चित्त कर, दुहैं शरण सहाय ।

वे अति निर्दय घात ही, यह अति दीनघिषाय ॥ ४९ ॥
 त्रण वेदननीकी करें, ऐसे कर विश्वास ।
 सींचे खारे क्षार सों, ज्यों अति उपजे त्रास ॥ ५० ॥
 केई जकड़ मंजीर सों, खेंचि खंभतें बांधि ।
 सुधि कराय अघ मारिये, ताना आयुष साधि ॥ ५१ ॥
 जिन उद्धत अभिमान सों, कीने परभव पाप ।
 तपत लोह आसन विंधें, त्रास दिखावें थाप ॥ ५२ ॥
 तात्ती पुतली लोहकी, लाय लगावें अंग ।
 प्रीति करी जिन पूर्व भव, परकामिनके संग ॥ ५३ ॥
 लोचन दोषी जानिकें, लोचन लेहिं निशाल ।
 मदिरा पानी पुरुषकों, प्यावे तांबो गाल ॥ ५४ ॥
 जिन अंगन सों अघ क्रिये, तेई छेदे जाहिं ।
 पल भक्षणके पाप सें, तोड़ २ कर खाहिं ॥ ५५ ॥
 केई पुत्र वरकों, याद दिवावे नाम ।
 कहि दुर्वचन अनेक विधि कर कोय संग्राम ॥ ५६ ॥
 भये विक्रिया देह सों, बहु विधि आयुष जात ।
 तिनही सों अतिरिस भरे, करें परस्पर घात ॥ ५७ ॥
 सिथिल होय चिर युद्धतें, दीन नारकी जामि ।
 हिंसानंदी असुर दुठ, आन करावें ताम ॥ ५८ ॥
 सोरठा-त्रितिय नरक पर्यंत, असुरो दीरघ दुःख है ।
 भ.षो जैन सिद्धान्त, असुर गमन आगे नहीं ॥ ५९ ॥
 दोहा-इहि विधि नरक निवासमें, जैन एक पल नाहिं ।
 तपै निरन्तर नारकी, दुख दावानल माहिं ॥ ६० ॥

मार २ सुनिये सदा; क्षेत्र महां दुर्गम ।

वहै व्याप अमुहावनी, अशुभ क्षेत्र सम्बन्ध ॥ ६१ ॥

तीन लोकको नाज सब, जो मक्षण कर लेय ।

तो भी भूख न उपशमे, कौन एक कण देय ॥ ६२ ॥

सागरके जलसों जहां, पीवत प्यास न जाय ।

लहे न पानी बूंद सम, दहे निरंतर काय ॥ ६३ ॥

वात पित्त कफ जनित जे, रोग जात या वन्त ।

तिनके सदा शरीरमें, उदै आयु पर यंत्र ॥ ६४ ॥

कटु तुंभीसों कटुक रस, करवतकी सम फांस ।

जिनकी मृतक मझार सो, अधिक देह दुर्वास ॥ ६५ ॥

योजन लाख प्रमाण जहं, लोह पिंढ गल जाय ।

ऐसी है अति उष्णता, ऐसी शीत सुभाय ॥ ६६ ॥

अडिल्ल-पंक प्रभा पर्यंत उष्णता अतिकही,

धूम प्रभामें शीत उष्ण दोनों सही ॥

छटी सातवीं भूमिनि केवल शीत है,

ताकी उपमा नाहिं महाविषरीत है ॥ ६७ ॥

दोहा-स्वान स्थार मंजारकी, परी कलेवर रास ।

मासनसा अरु रूधिरकी, कदौ जहां कुवास ॥ ६८ ॥

ठाम २ अमुहावने, सैवल सेतरु मुर ।

पैने दुख देने कठिन, कंटक कलि तक शूर ॥ ६९ ॥

और जहां असि पत्रवन, भीम तरोवर खेत ।

जिनके दल तरवारसे, लगत घावकर देत ॥ ७० ॥

वैतरणी सरिता समल, लोहित लहर भयान ।

वहै क्षार ओणित भरी, मांस कीच घिन थान ॥७१॥
 पक्षी वायस गीघ गण, लोहवुंड सोजेह ।
 मरम विदारे दुख करें, चौथे चहुंदिश देह ॥७२॥
 पंचेन्द्री मनको महा, जो दुखदायक जोग ।
 ते सब नर्क निकेतमें, एक निन्द अमनोग ॥ ७३ ॥
 कथा अपार कलेशकी, कहै कहाँलौ कोय ।
 कोटि जीभसे बरनिये, तऊ न पूरी होय ॥ ७४ ॥
 सागरबन्ध प्रमाण थिति, क्षण क्षण तीक्ष्ण त्रास ।
 ए दुख देखे नारकी, परवश परो निरास ॥ ७५ ॥
 जसी परवश वेदना, सहे जोय बहु भाय ।
 सुवश सहे जो अंस भी, तो भवजल तरि जाय ॥७६॥
 ऐसे नरक नारकी, भयो भील दुठ भाव ।
 सागर सत्ताईसकी, धारी मध्यम आव ॥ ७७ ॥
 सागर काल प्रमाण अब, वरणों औसर पाय ।
 जिनसों नर्क निवासकी, थित वरनी जिनराय ॥७८॥

(१२) जन्मकल्याणक पूजा ।

दोहा-दोष अठारह रहित प्रभु, सहित सुगुण छयालीस ।
 तिन सबकी पूजा करों, आय तिष्ठ जगदीश ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितं षट्चत्वारिंशद्गुणसहितं श्रीमद्-
 हृत्परमेश्वर ! अत्र अवतर । अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिन् ! अत्रममसन्निहितो भव भव वषट् ।

(ध्यानतगायकृत नन्दीश्वर द्वीपाष्टककी चाल ।)

शुचिक्षीरउदधिको नीर, हाटक भृङ्गभरा ।

तुमपदपूजो गुणधीर, मेढो जन्मजरा ॥

हरि मेरुसुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूजें इनगुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिने जन्मजराभृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा । १ ।

केसर घनसार मिलाय, शीत सुगंधघनी ।

जुगचरनन चर्चौ लाय, भव आतापहनी ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूजें इतगुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिने संसारातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अक्षत मोती उनहार, स्वेत सुगन्ध भरे ।

पाउं अक्षयपदसार, ले तुम भेंट धरें ॥ ३ ॥ हरि०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिने अक्षयपदपातये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

वेरुहा जूही गुलाब, सुमन अनेक भरे ।

तुम भेंट धरें जिनराज, काम कलंक हरे ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूजै इत गुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश दोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिने कामवाण विष्ण्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

केनी गोश्ला पकवान, सुंदर छे ताजे ।

तुम अग्र घरों गुण खान, रोग छुवा भाजे ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूजै इत गुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदहृ-
त्परमेष्ठिने क्षुवारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कंचन मय दीपक बार, तुम आगे लाजें ।

मम तिमिरमोह छैकार, केवल पद पाजें ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूजै इत गुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागरु तगरु कपूर, चूरसुगंध करों ।

तुम आगे खेवत मुर, वसुविष कर्म हरो ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूजै इत गुण गाय, मङ्गल मोद धरें ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुण सहित श्रीमद-
हृत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल अंगूर अनार, स्वारक थार मरों ।

तुम चरन चढाऊं सार, ताफळ सुक्ति वरों ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पूर्न इत गुण गाय, मङ्गल मोद धरें ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश दोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीम-
दर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलपाप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल आदिक आठ अदोष, तिनका अर्घ करों ।

तुम पद पुर्नो गुण कोष, पुरन पद सु धरों ॥

हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।

हम पुर्न इत गुण गाय, वदरी मोद धरें ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
र्हत्परमेष्ठिने अनर्घ्यपदपाप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाल ।

(जोगीरासा)

जन्मसमय उच्छव करनेको, इन्द्र शचीयुत धायो ।

तिहँको कछु वरणन करवेको, मेरो मन लमगायो ॥

बुधि जन मोकों दोष न दीनो, थोरी बुद्धि मुकायो ।

साधू दोष क्षमै सबहीके, मेरी करौ सहायौ ॥ १ ॥

(छन्द कामिनी-मोहन-मात्रा २० ।)

जन्म जिनराजको जबहि निज जानियो ।

इन्द्र धरनिन्द्र सुर सकल अकुलानियो ॥

देव देवाङ्गना चालिय जयकारती ।

शचिय सुरपति सहित करति जिन आरती ॥ २ ॥

सप्त सुर वाज्जीं । नृत्य तांडव करत इन्द्र अति छाजहीं ॥ करत
उच्छाहसों निजसु पद धारती । शचिय सुरपति सहित कर०
॥ १२ ॥ भव्य जन आय जिन जन्म उत्पव कैं । आपने जन्मके
सकल पातिरु हर ॥ भक्ति गुरुदेवकी . पार उत्तारतीं । शचिय
सुरपति सहित करतिं जिन भारती ॥ १३ ॥

धत्ता—निनवर पद पूजा भावसु हूना, पूरण नित आनंद भया ।
जयवंत सु हूँ आसा पूजौ, काल दिनोदी भाल नया ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद-
ईत्परमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौपाई—मंगल गर्भ समयमें जोय । मंगल भयो जन्ममें जोय ।
मंगल दीक्षा धारत जोय । मंगल ज्ञान प्राप्तिमें जोय ॥
मंगल मोक्ष गमनमें जोय । इन्द्रन कीनौ हर्षित होय ।
जाचू वार वारहों सोय । हे प्रभु ! दीजे मंगल मोय ॥
इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(१३) लघु पंचपरमेष्ठी विधान ।

स्व० कवि चन्द्रजी कृत

दोहा—श्रींघर श्रीकर श्रीपती, भव्यनि श्रीदातार ।

श्रीसर्वज्ञ नमों सदा, पार उत्तारन हार ॥ १ ॥

अडिल्ल छंद—चार घातिया कर्म नाशि केवल लयो ।

समोशरण तहां धनदै आय सुंदर ठयो ॥

चौतिस अतिज्ञय अष्ट मातहारज मये ।

चार चतुष्टय सद्रित सुगुण छयालिप लये ॥ १ ॥

कर विहार मवि जीवन पार लगाइये ।

न छ अघातिय चार सो शिवपुर जाइये ॥

जिनके गुण सु अनंत कहां वर्णन करों ।

बसु गुण हैं व्यवहार सिद्ध युति उच्चरों ॥ १ ॥

सोरठा-श्रीआचारज जान, धात सदा आचारको ।

छत्तिस गुण परवान, बन्दों मन बच कायकर ॥ ४ ॥

दोहा-पञ्चिस गुण ठवझायके, ते चोरें वर वीर ।

पढ़ें पढ़ावें पाठ वर, निर्मल गुण गम्भीर ॥ ५ ॥

वीस आठ गुण धारकर, सार्धें साधु महन्त ।

नीबदया पालें सदा, नहीं विराधें जन्त ॥ ६ ॥

चौपई-ये ही पंच परमगुरु जानो । या जगमें अन्य न मानो ।

जिन जीवन इन सुमरन कियो । सुर शिवथान जाय तिन लियो ।

जो प्राणी मन बच तन ध्यावें । सिंह व्याघ्र गज नाहिं सतावें ।

जो मनमें इन सुमरन लावें । ताहि भक्त भय नाहिं सतावें ॥९॥

दोहा-यही इष्ट उत्कृष्ट अति, पूजों मन बच काय ।

थापत हों त्रय वारकर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिनोऽत्रागच्छगच्छ संवौषट् (आव्दाननं)

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिनोऽत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (प्रतिष्ठापनं)

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिनोऽत्र मम संनिहितो भव भव वषट् स्वाहा

(सन्निधापनम्)

गीता छंद ।

नल सरस गंग तरंगको, शुचि रंग सुन्दर लाइये ।
 कंचन कटोरी माहिं भर, जिनराज चरन चढ़ाइये ॥
 ये पंच इष्ट अनिष्ट हरता, दृष्टि लगत सुहावने ।
 मैं अनौ आनंदकन्द, लखकर, दन्द फ द मिट'वने ॥
 ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
 लै गारि मलयागिरि सु चन्दन, अति सुगंध मिलायके ।
 मैं हर्षकर जिनचरण चरचौ, गाय साज बजायके ॥ये पंच०॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
 ले सरस तंदुल खंड विनसित, सालिके वर आनिये ।
 मल घोष थार सँजोय पुजौ, अखयपदको ठानिये ॥ये०॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्योऽक्षताभिर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
 बेला चमेली केवड़ा, मचकुन्द सुमन सुहावने ।
 ले केतकी कमलादि अचौ कामवान नसावने ॥ ये० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
 लाडू पुआ पेड़ा रु मिश्री, खोपरा खाना बने ।
 घर हेमथाल मझार पुजौ, क्षुधारोग निवारने ॥ ये० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
 ले दीप मणिमय ज्योति जगमग, होत अधिक प्रकाशनी ।
 कर आरती गुण गाय नाचौ, मोह तिमिर विनाशनी ॥ये०॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
 कर चूर अगर कपूर ले, भरपूर जास सुवासकी ।
 खेळं सु अगन मझार होकरके सु सन्मुख जासकी ॥ये०॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचपद्ममेष्टम्यो धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥
 फल मद्य सुख दातार, तन मन धोय नकसे लीजिये ।
 घर थल मध्य सु भक्तिमे, जिनराज चाण जर्ज निये ॥ये०॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपद्ममेष्टम्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
 ले नीर निर्मल गन्ध अक्षत सुमन अरु नैवेद्य जी ।
 मिल दीप धुः सु फल भले, घर अघ परम उम्मेद जी ॥ये०॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपद्ममेष्टम्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

रोड़क छंद-वस्तु विधि अरघ संजोय जोय जे पंच इष्ट वर ।
 पूजो मन हुंसाय, पांय जिन प्रीति हृदय घर ॥
 तुम सम अन्य न ज्ञान, जानि तुम्हरे गुण गाऊं ।
 घर थालीक मध्य सो, पूरण अरघ बनाऊं ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपंचपद्ममेष्टम्यो पूर्णाध्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

श्री अरहंत गुण पूजा ।

सोरठा-छयालिस गुण समुदाय, दोष अठारह तारते ।
 अरिहत शिवसुखदाय, मुझ तारो पूजो सदा ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं अईत्परमेष्ठिने षट्चत्वारिंशदुणविभृषिताय अष्टा-
 दशदोषरहिताय श्रीजिनाय अर्घ्य निवपामीति स्वाहा ॥

छंद मोनियदाम ।

जिनके नहिं खेद न भेद कहा । तन श्रोणित दुग्ध समान महा ॥
 प्रथमा संस्थान विराजत है । वर वज्र शरीर सु राजत हैं ॥ १ ॥
 छवि देखत मानु प्रताप नसे । तनसे सु सुगन्ध महा निकसे ॥
 शत लक्षण अष्ट विराजत हैं । प्रिय वैन सवे हित छाजत हैं ॥२॥

दोहा-तन मल रहित अतुल्य बल, धारत हैं भिनराज ॥

ये दश अतिशय जनमके, भाषे श्रीगणराज ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सहजदशातिशयप्राप्ताय श्रीजिनाय अर्घ्यं नि० ॥

पद्धरी छंद ।

केवल उपजे अतिशय सुजान । सो सुनो भव्य जन चित्त आन ॥

शत योजन चारों दिशा माहिं । दुर्भिक्ष तहां दीखे सो नाहिं ॥४॥

आकाशगमन करते जिनेश । प्राणीका घात न होय लेश ॥

कवलाबहार नाहीं करात । उपसर्ग बिना दीखे सो गात ॥ ५ ॥

चतुरानन चारों दिशा जान । सब विद्याके ईश्वर महान ॥

छाया तनकी नाहीं सो होय । टिमकार पलंक लागे न कोय ॥६॥

नख केश वृद्धि ना होय जास । ये दश अतिशय केवल प्रकाश ॥

तिनको हम बन्दे शीसनाथ । भव भवके अघ छिनमें पलाय ॥७॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानजन्मदशातिशयसुशोभिताय श्रीजिनाय अर्घ्यं ॥

चौबोला-अब देवनकुत चौदह अतिशय, सो सुन लीजे भाई ।

सकल अरथमय मागधि भाषा, सब जीवन सुखदाई ॥

मैत्रीभाव सकल जीवनके, होत महान सुखकारी ।

निर्मल दिशा लसें सब ओरी, उपजे आनंद भारी ॥८॥

अरु निर्मल आकाश विराजत, नीलवरन तन धारी ।

षट्कटुके फल फूल मनोहर, लगे दुर्मोकी डारी ॥

दर्पण सम सो धरनि तहाँकी, अति जिय आनंद पावे ।

निष्कण्टक मेदनि विराजे, क्यों कवि उपमा गावे ॥९॥

मन्द सुगन्ध बयारि वृष्टि, गन्धोदककी चहुँपाई ।

हरषमई सत्र सृष्टि विराजे, आनंद मंगलदाई ॥

चरण कमल तल रचत कमल सुर, चले जात जिनराई ।
 मेघकुमारोद्धत गंधोदक, वरसे अति सुखदाई ॥ १० ॥
 चड प्रकार सुर जय जय करते, सब जीवन मन भावे ।
 धर्मचक्र चल आगे प्रमुके, देखत भानु लभावे ॥
 वसु विधि मंगलद्रव्य घरीं, तहाँ देखत मनको मोहे ।
 विपुल पुण्यका उदय भयो है, सब विमूढियुत सोहे ॥ ११ ॥

दोहा-ये चौदह देवन सु कृत, अतिशय कहे बखान ।

इन युत श्रीअरहंतपद, पूर्णो पद सुख मान ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं सुरकृतचतुर्दशातिशयसंयुक्ताय श्रीजिनाय अर्घ नि० ॥

लक्ष्मीधरा-प्रातिहार्य वसु ज्ञान, वृक्ष सोहे अशोक जहां ।

पुष्पवृष्टि दिव्यध्वनि, सुर द्वारे सु चमर तहां ॥

छत्र तीन सिंहासन, भामण्डल छवि छाने ।

बनत दुंदुभी शब्द श्रवण, सुख हो दुख भाजे ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधिप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीजिनाय अर्घ नि० ॥

चौपाई-ज्ञानावरणी करम निवारा, ज्ञान अनन्त तवै जिन धारा ।

नाश दर्शनावरणी सुरा । दर्शन भयो अनन्त सु पूरा ॥ १४ ॥

दोहा-मोह कर्मको नाशकर, पायो सुख अनन्त ।

अन्तरायको नाशकर, त्रल अनन्त प्रगटन्त ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयविराजमानश्रीजिनाय अर्घ नि० ॥

पाईता छंद-अतिशय चौतीस बखाने । वसु प्रातहारं शुभ जाने ॥

पुन चार चतुष्टय लेवा । इन छयाकिस गुण युत देवा ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणसंहिताय श्रीजिनाय अर्घ नि० ॥

श्री सिद्धगुण पूजा ।

अङ्गिल-दर्शन ज्ञानानन्त, अनन्ता बल कहो ।

सुख अनन्त विलसंत, सु सम्यक् गुण कहो ॥

अवगाहन सु अगुरुश्रु अव्याबाध है ।

इन वसु गुण युत सिद्ध, जजों यह साध है ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टगुणविशिष्टाय सिद्धपरमेष्ठिः ॐ नमः ॥

श्रीआचार्य पूजा ।

दोहा-आचारज आचारयुत, निज पर भेद बखानत ।

तिनके गुण षट्सीस हैं, सो जानो हमि सन्त ॥ १ ॥

बेसरी छंद ।

उत्तम क्षमा धरे मन माहीं । मारदव धरम मान निहिं नाहीं ॥

आरजव सरल स्वभाव सु जानो । झूठ न कहें सत्य परमानो ।

निर्मल चित्त शौच गुण धारी । संम गुण धरें सुखकारी ॥

द्वादश विधि तप तपत महंता । त्याग करें मन बच तन सेता ॥

तज ममत्व आर्किंचन पालें । ब्रह्मचर्य धर कर्मन टालें ॥

ये दश धरम धरें गुण भारी । आचारज पुजों सुखकारी ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं दशलाक्षणिकधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिने नमः ॥

बेसरी छंद ।

अब द्वादश तप सुनिये भाई, अनशन ऊनोदर सुखदाई ॥

अतपरिसंख्या रस नहिं चाहें । विविक्तजैः श्यामन अवगाहें ॥ ५ ॥

कायकलेश सहें दुख भारी, ये छह तप बारह गुण धारी ॥

मायश्चित्त लेवें गुरु शालें । विनयभाव निशिदिन चित राखें ॥ ६ ॥

दोहा—वैयावृत्य स्वाध्यायकर, कायोत्सर्ग सु जान ।

ध्यान करें निज रूपको, ये बारह तप मान ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं द्वादशविधितपोयुक्ताय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि० ॥

लक्ष्मीधरा छंद ।

प्रतिक्रमण ये करें सो कायोत्सर्ग ये ठाने ।

समताभाव समेत, बंदना नित मन आने ॥

स्तुति करें बनाय गाय, स्वाध्याय सुनीको ।

षट् आवश्यक् क्रिया, पापमल धोय यतीको ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं षडावश्यङ्गुणविभूषिताचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि० ॥

ज्ञानाचार सु धार, दर्शनाचार सु धार ।

घर चारित्राचार, तपाचारहिं विस्तारें ॥

वीर्याचार विचार पंच आचार ये धारी ।

मन वच तन कर, धार धार बंदना हमारी ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं पंचाचारगुणविभूषिताचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि० ॥

दोहा—तीन गुप्त पालें पदा, मन अरु वचन सु काय ।

सो वस्तु द्रव्य सँजोयके, पूर्णो मन हुलशाय ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं त्रिगुप्तगुणविभूषिताचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि० ॥

सोरठा—दश विधि धर्म सुज्ञान, द्वादश तप षट् क्रिया धरें ।

पंचाचार प्रमाण, तीन गुप्ति छत्तीस गुण ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यपरमेष्ठिने पुणोर्घ्यं निर्वपामःति स्वाहा ॥

श्रीउपाध्याय गुण पूजा ।

दोहा—उपाध्याय गुण चणलैं, पंच अरु बीस प्रमान ।

एकादश वर अग अरु, चौदह पुरव जान ॥ १॥

सुन्दरी छंद ।

प्रथम आचारांग सु जानिये । द्वितीय सूत्रकृतांग बखानिये ॥
तीसरो स्थानांग सो अंग जू । तूर्य समवायांग अमंग जू ॥ १ ॥
पंचमो व्याख्यापज्ञप्ति जू । छठम ज्ञातृध्या गुण युक्त जू ॥
उपासकाध्यन अंग सो सप्तमो । अंग अंतकृतांग सु अष्टमो ॥ २ ॥
दोहा—नवम अनुत्तर दशम पुन, प्रश्नव्याकरण जान ।

विपाकसूत्र सु ग्यारमो, धरें गुरु गण खान ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं एकादशांगपठनयुक्ताय उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ नि० ॥

गीता छंद—अब चार दश पूरव, प्रथम उत्पाद नाम सु जानिये ।

आश्रयाणी वीर्यानुवाद सु, अस्तिनास्ति बखानिये ॥

ज्ञानःप्रवाद सु पंचमो, कर्मप्रवाद छट्टों कहो ।

सत्यप्रवाद सु सप्तमो, आत्मप्रवाद वसु कहो ॥ ५ ॥

पुनः नाम प्रत्याख्यान अरु, विद्यानुवाद प्रमाणिये ।

कल्याणवाद महन्त पूरव, क्रियाविशाल बखानिये ॥

वरंलोकविद भिलाय चौदह, सार ये पूरव कहे ।

ते धरें श्रीठवज्ञाय तिनके, पूजते शिवमग लहे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वपठनपाठनसंलग्नाय उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ नि० ॥

दोहा—ऐसे ग्यारह अंग अरु, चौदह पूरव जान ।

उपाध्याय जानें सुधी, सो पूजों रुचि ठान ॥ ७ ॥

श्री साधुगुण पूजा ।

दोहा—साधु तने अठवीसगुण, सो धरें मुनिराज ।

अतीचार लागे नहीं, सार्धे आत्म कान ॥ १ ॥

छंदं त्रुंतीप्रवृत्त ।

कौं नहिं हिंसाद्योमनधर भूषिततज्जिह्वो न परधनहर भूषित
महावीर्य शालेयंरमहं सु शालेयंरमहं दधं मारी महाव्रत सहायक

ॐ ह्रीं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं ॥ त्रुंतीप्रवृत्तं

॥१॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

। त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं
इत्यपि सोचं नित्यं न विरोधं भविष्यते दिव्यशक्तिः ॥

सांचे वचं भाषे शठ न राखे निजरास जाणें वचं वचं ॥६॥

ठाहें चित्तवारा करे अहारा मई निहारा सेवत हैं । त्रुंतीप्रवृत्तं

मल मुत्रदि दारं जीव निहारें पंच समिति इसी सेवत हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पंचसमिति संयुक्त्या साधुप्रेमिणे सर्व निः

दोहा-सूर्यात त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

पंचसमिति त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

ॐ ह्रीं पंचसमिति संयुक्त्या साधुप्रेमिणे सर्व निः

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

॥ त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं त्रुंतीप्रवृत्तं

याके सु फल घन धान्य सम्पत्ति, रूप गुण शुभ पइये ।
सुरपद सहज ही मिलत हैं, वधु कर्म हर शिव जाइये ॥ १९ ॥

(१४) श्री अरहंत पूजा ।

छप्पय-जय अरहंत महंत, त्रिनग-वन्दित अभिरामी ।
दोष अठारह रहित, सहित छयालिस गुणनामी ।
जगत चराचर लखत, हस्तरेखावत ज्ञानी ।
युक्तिशास्त्र अविरोधि वचन जिन परम प्रमानी ॥
हे अर्हन् ! मध्य परमशरण ! पूज्य प्रभो ! इत आइये ।
मैं पूजन-हित उत्सुक खड़ी, दर्शन दे हर्षाइये ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुण सहित श्रीं
अर्हत्परमेष्ठिन् । अत्र अवतर अवतर, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

द्रव्याष्टक ।

तुम परम पावन सुख सदन भव वन अमृत जगजन-शरण ।
तुम जन्म मरण जरा हरण जग जलधि-भवि तारण तरण ॥
यह विरद सुन आयो शरण ले अमल जल भवमल हरण ।
त्रयधार दे बहुभक्तिसे पुनो चरण मन शुचिकरण ॥
ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाथ जलं ॥ १ ॥
तुम देव-इन्द्र नरेन्द्र कर वन्दित प्रभो ! सुखकन्द हो ।
भव पाप ताप निवारवेको तूही अनुपम चन्द हो ॥

तुम अन्नकर्मणां पञ्चावसे सुतः कर्ममलान्नाशयोः सवकर्मकर्मफलं फल
 । फलं प्राप्तं दर्शयतः । ज्ञानं तत्त्वसुखं चिरमये निजपदं सुखं ॥
 यह चिन्त्यः निर्मलः किञ्चिद्देकर घृष्टवेत्तुं सुखं करतु ॥ तत्रापि फलं
 । तैः भक्तिसे सर्वे चक्षुःश्रवणं कर्मः शिरः ईषतु ज्ञानः ॥ फलं फलं
 ॐ ह्रीं श्रीं भगवन्पद्मेष्ठिते कृष्णकर्मदहनार्थं धूमं ॥ १५ ॥ फलं फलं
 मैं पुत्र फलं सन्निवृत्तफलः फलः सुखः फलं चरितं श्रीमोक्षफलं फलं
 ॥ मित्रः फलं विष्णुः फलं शिवः फलं श्रीमोक्षफलं चिरमये ॥ फलं
 तुम मोक्षः फलं दातुं सुतः लेखनं फलं श्रयोः फलं फलं ॥ फलं फलं
 । तत्रापि फलं फलं फलं चरितं चरितं फलं फलं फलं फलं
 ॐ ह्रीं श्रीं अर्धं फलं फलं श्रीमोक्षफलं दातुं फलं ॥ १६ ॥ फलं फलं
 तुम ज्ञानः फलं विष्णुः फलं तुम परमेश्वरः प्रधानः फलं ॥ फलं फलं
 । सुखं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 मैं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 ॐ ह्रीं श्रीं शर्वं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 । फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 ॥ फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 तर्तै रक्तः फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 जय फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 जय फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 जय इति फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 जय इति फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं
 जय फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं फलं

जय ऊरुषस्वभाव शिवगामी, ऊहापोह विगत गुणवांसी ॥
 जय ऋषभ शक्तेश्च विहीना, ऋषिगण जपत सुपद निज चीना ।
 जय एकान्त कुनय तमहारी, एक अनेकरूप अविकारी ॥
 जय ओजस्विन् तत्त्वपकाशक, ओङ्कारतुल्य ध्वनि भ्रम नाशक ।
 जय अंबरवत शुद्ध विरागी, अंतराहाय परिग्रह त्यागी ॥
 जय कल्याण करुणतरु वीरा, कर्मसुभट बल नाशक वीरा ।
 जय खगपति बंदितामिननामी, खलविधि हरण शरण जगत्सामी ॥
 जय गणेश दुम सुगुण अनंता, गणित न सुर गुर पावहि अंता ।
 जय घनहर्षसुधा वर्षावन, घनरस जग अब ताप नशावन ॥
 जय चहुँगति दुख नाशक स्वामी, चमर दुरत चौंठ अभिरामी ।
 जय छत्रत्रय शोभित ईशा, छवित होत गुण कहत मुनीशा ॥
 जय जगदीश जयति भिनदेवा, जन्मजलधि तारक स्वयमेवा ।
 जय झषकेतु दलन मन भावन, झटित कर्म हन शिवपुर जावन ॥
 जय टङ्कोत्कीर्ण सम ध्यानी, टरत दुःखपद जनत सुझानी ।
 जय ठहरत निजपद अविनाशी, ठग्यो जगत तिस मोह विनासी ॥
 जय ढरनेह मोह मद हीना, ढगन भरत नभ चकत अदीना ।
 जय ढन जन्म समय जगपाली, ढरत सहस्रअठ कलस विशाली ॥
 जय तत्त्वार्थबोध दातारी, तरन तरंड भबोदधि तारी ।
 जय थल जल नभ भक्ति सहायक, थम्भ सुदृढ़ वृषके सुखदायक ॥
 जय दयालु दुख दलन अपारी, दर्शनीय अनुपम छविधारी ।
 जय धर्मेश अवम उद्गारी, धन्य साम्य वर्द्धन घन धारी ॥
 जय नव केवल लज्जि सुमोगी, जयनानंद नग्न संयोगी ।
 जय परमात्म परम प्रमानी, परमानंद प्रथम सुख दानी ॥

जय फणिपति वंदित गुणमंडित, फन्द हरण सुखकरन अखंडित ॥
 जय बलवीर विभाव विहीना, बर्द्धमान वद्धित गुण लीना
 जय भगवन्त संत मन रंजन, भव्य कमल रवि अमृतम भंजन ॥
 जय झङ्गलमयमंगल कारी, झगन आत्म निज निधि सुखकारी ।
 जय यतिपति यश धर सुखरासी, यथाख्यात चारित्र प्रकाशी ॥
 जय रमेश रमणीय स्वरूपा, रत्नत्रयनिधिदायक भूषा ।
 जय ललाम गुण धाम अनूपा, लक्ष्मीपति लक्षित चिद्रूपा ॥
 जय वसुधा वत्सल मुनि भावन, वस्तु स्वभाव धर्म दर्शावन ।
 जय शशिभविजन कुमुदविकाशी, शामकर मोह महातम नाशी ॥
 जय षट्भेदभाव विज्ञानी, षट्कर्तव्य निरूपक ज्ञानी ।
 जय सर्वज्ञ सकल हितकारी, सन्शय विभ्रम मोह निवारी ॥
 जय हरिहर्षन साधु प्रवीना, हलधर हर गुण जपत नवीना ।
 दोहा-क्षेमंकर त्रिपुरारि तुम, ज्ञायक त्रिजग महान ।
 गुण अनन्त गणधर अगम, “माणि” किम करै बखान ॥
 जे भव्य नित्य पवित्र होकर अष्ट द्रव्य सुखायकें ।
 भगवन्त श्री अरहंतकी पूजा करै हरषायकें ॥
 ते पुन्यनिधि संचय करै इस लोक यश सुख पायकें ।
 तप धार पुन सबकर्म हन निज थक वपें शिव जायकें ॥

इत्याशीर्वादः ।

इति श्री पं० मुन्नालालजी महरोनी कृत अरहंत पूजा संपूर्ण ।

॥ ५३५ ॥ (५३५) रविचन्द्रकक्षः । रविचन्द्रकक्षः । रविचन्द्रकक्षः ।
 चोपाङ्ग-श्री सुखदायक पार्श्वजिनेय । सुमति २ दाता परमेश ।
 सुमरी शारद पद अरिवन्द । दिनकर वृत्त प्रगटो सानन्द ॥१॥
 बानारस नगरी सु विशाल । प्रजापाल प्रगटो सुपाक ।
 मतिसागर तहां सेठ सज्जन । ताको मूय करे सन्मान ॥२॥
 साधुत्रिया गुणसुन्दरनाथ । सातपुत्र ताके अमिराम ।
 पटपुत्र भोग करे पुरणीत । बालरूप गुणधर सुविनीत ॥३॥
 सहस्रकट शोभित जिनधाम । आपे यति यति खेदित काम ।
 सुन मुनि आगम हर्षित भये । सर्व लोग बुद्धनको गये ॥४॥
 गुरु बाणी सुनके गुणवती । सेठिन तब जो करी विनवी ।
 नत प्रभु सुगम कहो समझाय । नार्से रोग शोक सब जग ॥५॥
 करुणानिधि भाय-मुनिराय । सुनो मलय तम विजयगाय ।
 जब असाह-सित प्रक्ष-विचार । तब कीजे अंतिम रविचार ॥६॥
 अनुशुन अथवा लघुहार । लवणादिक जो करे परिहार ।
 नव फलयुत पंचामृतधार । वसु-प्रकार पुनो भवहार ॥७॥
 उत्तम फल इत्यासीजान । नव आचर धर कीजे आन ।
 याविधि करो नव वर्ष प्रमाण । यात होय सर्व कल्याण ॥८॥
 अथवा एक वर्ष इक सार । कीजे रविचरत मनहि विचार ।
 सुन साहुन निज धाको मई-अर्चन निम्नसे निन्दित मई ॥९॥
 वृत्तान्तिदासे निर्धन भये । सप्त-पुत्र अयोध्यासंप्रदाये ।
 तहां भिनदत्त सेठ गृह रहें । पूर्व दुःकृतका फल लहें ॥१०॥
 मातपिता गृह दुःखित सदा । अवधि सहित मुनि पृछे तदा ।

दयावंत मुनि देखि कह्यो । प्रसन्न निन्दीस । तुम दुखि कह्यो नाम का
 सुन सुन । धर्म बहुरि ब्रित्त कियो व पुण्य । किये घरमें धन मेयो ।
 भवि जन सुनी कौन सविन्य ब्रह्म रहत थे वि सब नन्द ॥ ११ ॥
 एक दिवस गुणवर सुकुमार विधास कटि ल आयि द्वार ॥

शुषावंत भावज पै गयो । दंत विना भोजन नहीं दयो ॥ १२ ॥

बहुरि गये जहां मूलो दंत । देखों तासों अहि लिपटंत ॥

फणिपतिकी तहं विनती करी । पञ्चावती प्रगटी सुन्दरी ॥ १४ ॥

सुन्दर मणिमय पारसनाथ । प्रतिमा पंचरत्न शुभ हाथ ॥

देकर करो कुंवर कर भोग । करो क्षणक पुन संयोग ॥ १५ ॥

आनविब निज घरमें धरो । तिहकर तिनको दारिद्र हरो ॥

सुख विलसत सेवे सब बन्धु दिन प्रति पूजो पार्श्व जिनेन्द्र ॥ १६ ॥

साकेता नगरी अभिराम । निजमसाद राजा शुभ धाम ॥

करि प्रतिष्ठा पुण्य संयोग । अयो भविज संग सो लोग ॥ १७ ॥

संगचतुर्विधिको सम्मान । कियो दियो भविजित दान ॥

देख सेठ तिनकी सम्पदा । जात करि भविज तदा ॥ १८ ॥

भूपति तब पृच्छो वृत्तान्त । सुन्यो कहे गुणवर गुणवन्त ॥

देख सुलक्षण ताको रूप । अविजन्द भयो सो भूप ॥ १९ ॥

भूपति अह तनुजा सुन्दरी । गुणवरको दीनी गुणभरी ॥

कर विवाह मंगल सानन्द । हय गज पुरजन परमानन्द ॥ २० ॥

मनवांछित पाये सुख भोग । विस्मित भये सकल पुर लोग ॥

सुखसे रहत बहुत दिन भये । तब सब बन्धु बनारस गये ॥ २१ ॥

मात पिताके परसे पांय । अत्यानन्द हृदय न समाय ॥

विगटो विषम विषय वियोग । भयो सकल पुरजन संयोग ॥ २२ ॥

आठ सात सोलहके अंक । रविपूत कथा रची अकलंक ॥
 थोड़े अर्थ ग्रन्थ विस्तार । कहें कवीश्वर जो गुण सार ॥ १६ ॥
 यह व्रत जोनर नारी करें । सो कवहुं दुर्गति नहिं परें ॥
 भाव सहित सो सब सुख लहें । मानुकीर्ति मुनिवर हम कहें ॥ १७ ॥



